पलटू साहिब

राधास्वामी सत्संग ब्यास

पलटू साहिब

राजेन्द्र कुमार सेठी
आर. सी. बहल

राधास्वामी सत्संग ब्यास

झाड़ नहीं फल खात है,
नहीं कूप को प्यास।
परस्वारथ के कारने,
जन्मे पलटूदास॥

ॐ अन्नपूर्णा®
Charitable Trust
WZ-5A/1, Ram Nagar,
Choukhandi Chowk,
New Delhi-110018

विषय सूची

प्रकाशक की ओर से 9

प्रथम भाग

1. जीवन 13
2. उपदेश 27
3. भाषा, शैली तथा काव्य-कला 94

द्वितीय भाग

वाणी

4. परमात्मा 101
5. माया 112
6. मन 121
7. नाम 129
8. संत, फ़क़ीर और सतगुरु 144
9. संतों की अवस्था और उनकी नम्रता 163
10. अहंकार का त्याग तथा शरण 171
11. सत्संग 177
12. जीते-जी मरना 185
13. रूहानी सफ़र 190
14. भक्ति, प्रेम और विरह 198
15. सच्चा ज्ञान 215
16. अंतर्मुखी भक्ति तथा बहिर्मुखी भक्ति 222
17. पाखंडी साधु 233

18. मन को इधर से हटाना, उधर लगाना 238
19. संतोष का महत्त्व 251
20. निन्दक है परस्वारथी 253
21. जीव हत्या और मांसाहार 258
22. विविध 262
विश्वास 262
प्रभु-भक्त की निराली चाल 264
परमार्थी की रहनी 265
संत और हक़-हलाल की कमाई 267
दुनियादारों का संतों के प्रति रवैया 269
23. उलटबाँसियाँ और ककहरा 271
उलटबाँसियाँ 271
ककहरा 274

संदर्भ सूची 294
संदर्भ ग्रंथ 301
पद-क्रम 303
परमार्थ संबंधी पुस्तकें 309

प्रथम भाग

1

जीवन

पलटू साहिब के माता-पिता तथा परिवार के विषय में कहीं से भी कुछ पता नहीं चलता। आपके निजी जीवन के बारे में मिलनेवाली जानकारी का स्रोत मुख्यतया आपकी वाणी ही है।

आपके असली नाम के बारे में कुछ भी मालूम नहीं। पलटू नाम तो आपके सतगुरु गोबिन्द साहिब के द्वारा दिया गया बताया जाता है। कहा जाता है कि नामदान मिल जाने पर आप पूरी लगन के साथ नाम के अभ्यास में जुट गए। हर समय आप मन ही मन गुरु द्वारा बताया गया नाम जपते रहते। आपका ध्यान जल्दी ही बाहर से हटकर अंदर की ओर यानी संसार से हटकर प्रभु की ओर हो गया। आपकी यह दशा देखकर प्रसन्न हुए सतगुरु ने कहा कि यह तो पलटकर पलटू ही बन गया है। तभी से लोग आपको इस नाम से जानने लगे। जैसा कि आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने अपनी पुस्तक *उत्तरी भारत की संत परंपरा*[1] में लिखा है, इस संबंध में एक दोहा प्रसिद्ध है:

पल पल में 'पलटू' रहे, अजपा आठों जाम।
गुरु गोबिंद अस जानि के राखा 'पलटू' नाम।

पलटू साहिब ने अपनी वाणी में सब जगह सतगुरु से मिले अपने इसी नाम का प्रयोग किया है जो आपके अपने सतगुरु के प्रति भक्ति भाव तथा प्रेम का प्रतीक है।

पलटू साहिब का एक भाई पलटू प्रसाद के नाम से प्रसिद्ध है लेकिन यह नाम भी वास्तविक नहीं जान पड़ता। पलटू प्रसाद की *भजनावली* के

आधार पर कहा जा सकता है कि पलटू साहिब का जन्म उत्तर प्रदेश के ज़िला फ़ैज़ाबाद में अयोध्या के निकट एक गाँव में हुआ था। नगपुर जलालपुर नाम का यह गाँव मालीपुर रेलवे स्टेशन से 13 किलोमीटर दूरी पर है। *भजनावली* में गाँव का नाम 'नंगा जलालपुर' दिया गया है, परंतु बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित पलटू साहिब की वाणी के संकलन के आरंभ में काफ़ी खोज के बाद दिए गए उनके जीवन चरित्र के अनुसार इस नाम का कोई गाँव फ़ैज़ाबाद या उसके साथ लगते आज़मगढ़ ज़िले में नहीं है। पलटू साहिब सदा गृहस्थ आश्रम में रहे और उनके वंश के लोग अब तक नगपुर जलालपुर गाँव में मौजूद हैं। आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने गाँव का नाम 'नग ज़लालपुर' बताया है।[2] ऐसा लगता है कि पहले 'नंगा जलालपुर' के नाम से जाना जाने वाला यह गाँव अब 'नगपुर जलालपुर' और 'नग जलालपुर' दोनों नामों से जाना जाता है।

पलटू साहिब की वाणी से पता चलता है कि आपने एक बनिया परिवार में जन्म लिया था और आजीविका के लिए दुकानदारी का धंधा अपना लिया था। आपकी वाणी में कई जगह इस बात का वर्णन है। उदाहरण के लिए आप कहते हैं—*पलटूदास इक बानिया रहै अवध के बीच।*[3] और एक अन्य स्थान पर कहते हैं—*मैं हौं पलटू बनियाँ॥*[4]

आप बाबरी साहिबा की परंपरा के संत गोबिन्द साहिब के शिष्य थे जिनका जीवनकाल 1725–1822 ई. था।[5] आप अवध के नवाब शुजाउद्दौला (शासनकाल 1754–1775) तथा दिल्ली के मुग़ल बादशाह शाह आलम द्वितीय (शासनकाल 1759–1806) के समकालीन थे।[6] आपके बारे में यह भी कहा गया है कि आप संवत् 1827 (1770 ई.) के आसपास जीवित थे।[7]

आई. ए. इज़ीकील* के अनुसार आपका समय मोटे तौर पर 1710–1780 ई. माना जा सकता है।[8]

---

* आई. ए. इज़ीकील ने अंग्रेज़ी में *कबीर द ग्रेट मिस्टिक, सरमद: ज्यूइश सेंट ऑफ़ इण्डिया, मिस्टिक मीनिंग ऑफ़ द वर्ड* तथा *सेंट पलटू: हिज़ लाइफ़ ऐंड टीचिंग्स* नामक पुस्तकें लिखीं।

कुछ लोगों का विचार है कि पलटू साहिब के गुरु भीखा साहिब थे। परंतु यह विचार ठीक प्रतीत नहीं होता क्योंकि पलटू साहिब ने अपनी वाणी में कहीं भी भीखा साहिब को अपना गुरु नहीं बताया है। आपने तो स्पष्ट शब्दों में कई जगह गोबिन्द साहिब का बड़े आदर के साथ अपने गुरु के रूप में उल्लेख किया है और कहीं-कहीं उन्हें शब्द-अभ्यासी बताते हुए यह संकेत भी दिया है कि उन्होंने आपके अंदर भी शब्द को प्रकट कर दिया था:

गगन कि धुनि जो आनई, सोई गुरु मेरा।...
भजन अखंडित लागई, जस तेल कि धारा।
पलटुदास दंडौत करि, तेहि बारम्बारा॥*[9]

जै जै जै गुरु गोबिन्द आरती तुम्हारी।
निरखत पद कंज† कमल, कोटि पतित तारी॥[10]

पलटुदास के गोबिंद साहिब, आइ मिले मोहिं प्रेम गलिय में॥[11]

सखि पलटू अलमस्त दिवानी, गोबिंदनन्द दुलारी हो।[12]

करम जनेऊ‡ तोड़ि कै, भरम किया छयकार§।
जेहि गोबिंद गोबिंद मिले, थूक दिया संसार॥[13]

पलटू साहिब के गुरु-भाई कृपादास ने भी लिखा है:

पलटू जूझे खेत में लगा शब्द का बान।
गुरु गोबिंद की फौज में सुरवां¶ पलटूदास॥[14]

पलटू प्रसाद ने भी स्पष्ट लिखा है कि संत गोबिन्द साहिब, पलटू साहिब तथा उनके भाई, दोनों के गुरु थे।

---

* **दंडौत**=पृथ्वी पर सीधे लेटकर किया जानेवाला साष्टांग प्रणाम † **कंज**=कमल
‡ **करम जनेऊ**=कर्मों का बंधन § **छयकार**=नाश ¶ **सुरवां**=बहादुर

पलटू प्रसाद हमें बताते हैं कि नामदान पाकर पलटू साहिब ने सब लोकलाज छोड़कर बड़ी लगन और दृढ़ता के साथ नाम की कमाई की और अपना लक्ष्य सिद्ध करके ही चैन की साँस ली। परंतु परम चेतना की अवस्था प्राप्त करने के लिए पलटू साहिब को भी मन के साथ पूरी लड़ाई लड़नी पड़ी। वास्तव में चाहे कोई साधारण जीव हो या उन्नत आत्मा यह लड़ाई सभी को लड़नी पड़ती है। यह अलग बात है कि कोई बहुत ही निर्मल आत्मा वाला जिज्ञासु जल्दी मन को वश में करके प्रभु को पा लेता है, जबकि एक साधारण व्यक्ति को जीवन भर यह संघर्ष करना पड़ता है और फिर भी हो सकता है कि उसे सफलता न मिले बल्कि फिर जन्म लेना पड़े। मन के साथ अपनी लड़ाई का संकेत देते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि मैं सतगुरु की शरण में जाकर ही मन की चोटों से बच पाया:

छिन में बहुत हरि तरँग उठै, छिन में धन खोजत लोग लुगाई।*
छिन में बहु जोग बैराग कथै, छिन काम किरोध को मारन धाई†॥*
छिन में बहु भोग विलास करै, छिन में उठि धाय करै कुटिलाई।
पलटू कपटी मन चोट करै, हम भागि बचे गुरु की सरनाई॥[15]

पलटू साहिब अवध अर्थात् अयोध्या के निवासी थे। यह आम धारणा है कि अयोध्या श्रीरामचंद्र जी की नगरी है। परंतु पलटू साहिब के समय तक इसका प्राचीन वैभव लुप्त हो चुका था। हाँ, एक प्राचीन तथा प्रसिद्ध तीर्थस्थान होने के कारण यहाँ यात्री अवश्य बड़ी संख्या में आते थे। जाप, पूजा-पाठ, दान-दक्षिणा आदि के बहाने तीर्थयात्रियों से पैसा बटोरनेवाले कपटी तथा लोभी लोगों की भी यहाँ कोई कमी नहीं थी। इस प्रकार के लुटेरों के बीच रहकर सच्ची रूहानियत का प्रचार करना तथा बहिर्मुखी भक्ति में लगे लोगों को भ्रमों में से निकालकर अंतर्मुखी भक्ति की ओर मोड़ना पलटू साहिब जैसे किसी सच्चे और पूरे गुरु का ही काम था।

---

* **लुगाई**=स्त्री † **धाई**=भागता है

ज्यों-ज्यों लोगों को आपके आध्यात्मिक ज्ञान का पता चला, अमीर-ग़रीब, अनपढ़-विद्वान, हिंदू-मुसलमान, स्त्री-पुरुष, सभी आपके सत्संग में आने लगे। आपके नेक और सादे जीवन, नि:स्वार्थ हृदय तथा उदार विचारों ने सबको बहुत प्रभावित किया।

पलटू साहिब सब धर्मों तथा जातियों के लोगों से एक जैसा प्रेम करते थे। आपने मुसलमान और हिंदुओं को अपनी रबी तथा ख़रीफ़ की फ़सलें बताया है। आपने कहा है कि मैं उस परमपिता का दास हूँ जिसने मुझे हिंदू और मुसलमान दोनों जागीर के तौर पर दिए हैं। मेरे ज्ञान का दफ़्तर दोनों के लिए खुला रहता है और सबको मेरे ज्ञान पर पूरा विश्वास है:

मुसलमान रब्बी मेरी हिन्दू भया खरीफ*†॥*
हिन्दू भया खरीफ दोऊ है फसिल हमारी।
इनको चाहै लेइ काटि कै बारी बारी॥
साल भरे में मिली यही हम को जागीरी।
चाकर भये हजूरी‡ कौन अब करै तगीरी§॥
दूनों को समुझाइ ज्ञान का दफतर खोलै।
सब कायल होइ जाय अमल दै कोऊ न बोलै॥
दोऊ दीन के बीच में पलटूदास हरीफ¶।
मुसलमान रब्बी मेरी हिन्दू भया खरीफ॥[16]

पलटू साहिब के मन में जातिगत भेदभाव भी नहीं था। आप लिखते हैं कि मैंने चारों वर्णों में कोई अंतर न रखते हुए सबको सच्ची भक्ति का पाठ पढ़ाया है:

चारि बरन को मेटि कै, भक्ति चलाया मूल।[17]

---

* **रब्बी**=रबी, फ़सल जो चैत्र-वैशाख में काटी जाती है, जैसे गेहूँ, चना आदि
† **खरीफ**=फ़सल जो कार्तिक-अगहन में काटी जाती है, जैसे धान, मकई आदि
‡ **हजूरी**=निकटता § **तगीरी**=परिवर्तन ¶ **हरीफ**=विरोधी

आप लिखते हैं कि प्रभु से मिलाप के लिए केवल भक्ति और प्रेम की आवश्यकता होती है, जाति-पाँति कोई महत्त्व नहीं रखती। *महाभारत* से विदुर और सुपच के तथा *रामचरितमानस* से भीलनी का उदाहरण देकर आप समझाते हैं कि यद्यपि ये सब छोटी समझी जानेवाली जातियों में पैदा हुए थे, फिर भी इन्होंने प्रेम से भगवान को अपने वश में कर लिया था। इसलिए किसी को ऊँची जाति का अहंकार बिलकुल नहीं करना चाहिए।

पलटू साहिब अपने पूर्वजों के व्यवसाय दुकानदारी की मिसाल देते हुए परमार्थ के इस गूढ़ रहस्य को उजागर करते हैं कि जैसे एक बनिया अपनी कम तोलने की आदत से मजबूर होकर पाप कर्म करता चला जाता है और उसी के फलस्वरूप चौरासी भोगता है, उसी तरह जीव यदि परमार्थी अभ्यास में पसँघा मारता है यानी कमी रखता है, नियमपूर्वक प्रतिदिन अभ्यास नहीं करता, तो उसकी मानसिक वृत्तियाँ उसे बारंबार पाप कर्म करने को उकसाती हैं और वह निर्लज्ज होकर पाप करता चला जाता है। समझाने पर भी अपने सिरजनहार परमात्मा के रहस्य को नहीं समझता कि सृष्टि में हम जैसा बोते हैं वैसा ही फल खाने को मजबूर होना पड़ता है:

बनियाँ बानि न छोड़ै पसँघा मारे जाय॥*
पसँघा मारे जाय पूर को मरम न जानी।
निसु दिन तौलै घाटि खोय† यह परी पुरानी॥
केतिक कहा पुकारि कहा नहिं करै अनारी।
लालच से भा पतित सहै नाना दुख भारी॥
यह मन भा निरलज लाज नहिं करै अपानी।
जिन हरि पैदा किया ताहि का मरम न जानी॥
चौरासी फिरि आइ कै पलटू जूती खाय।
बनियाँ बानि न छोड़ै पसँघा मारे जाये॥[18]

* **बानि**=आदत † **खोय**=आदत

एक अन्य जगह पलटू साहिब एक परमार्थी बनिये की पहचान बताते हैं जो सारा कामकाज करते हुए अपने मन पर कड़ी नज़र रखता है। बताया गया है कि दुकानदारी के सारे काम में—तोलने में, लेने-देने में, ख़रीदने-बेचने में, सामान लादने-उतारने में मन की बहुत बड़ी भूमिका होती है। परमार्थी को भी उसी तरह हर काम में मन को परखना चाहिए, उसे इस बात का हरदम ध्यान रखना चाहिए कि मन कहीं उससे कोई अनुचित काम तो नहीं करवा रहा, मन का झुकाव कहीं छल-कपट की ओर तो नहीं जा रहा। आप समझाना चाहते हैं कि मन की शक्ति को समझकर परमार्थी को उसके वश होकर कर्म करने के बजाय मन को अपने वश में करने का यत्न करना चाहिए।

सो बनिया जो मन को तौलै॥ टेक॥
मनहिं के भीतर बसी बजार, मनहीं आपु खरीदनहार।
मनहीं में लेन देन मनहिं दुकान, मनहीं में मन की गुजरान।*
मनहीं में लादै उलदै† अनत न जाय, मनहिं की पैदा मनहिं में खाय।
मनहीं में तराजू मनहिं में सेर, पलटूदास सब मनहीं का फेर।[19]

पलटू साहिब हर तरह के लोभ से मुक्त एक आदर्श दुकानदार थे। आप कहते हैं कि राजा तथा अमीर लोग हाथ जोड़े मुझे कई प्रकार की भेंट देने आते हैं परंतु उन्हें निराश ही लौटना पड़ता है:

राजा औ उमराव‡ हाथ सब बाँधे आवैं।
द्वारे से फिरि जायँ नहीं फिर मुजरा§ पावैं॥[20]

* **गुजरान**=निर्वाह † **उलदै**=माल उतारे ‡ **उमराव**=धनवान लोग
§ **मुजरा**=झुककर किया प्रणाम

अपनी हक़-हलाल की कमाई पर जीवन निर्वाह करने की संतों की मर्यादा का पलटू साहिब ने पूरी तरह पालन किया। उनका रहन-सहन आडंबरहीन था। खानपान भी बिलकुल सादा था और पहनावा भी।

जैसे संत दूसरों की कमाई का पैसा नहीं लेते, वैसे ही केवल धर्मग्रंथों में पढ़े हुए सच के बजाय वे सदा अपने निजी अनुभव और साक्षात देखे गए सत्य का उल्लेख करते हैं। दादू साहिब का कहना है कि लोग तो सुनी सुनाई बातें कहते हैं, परंतु मैं आँखों देखी का वर्णन करता हूँ: दादू *देखा अदीदा, सब कोई कहत सुनीदा॥*[21] इसी प्रकार पलटू साहिब कहते हैं कि मेरा भ्रम का परदा हट गया है और मुझे सत्य का दर्शन हो गया है। मुझे सत्य को छिपाने तथा असत्य कहने की आवश्यकता नहीं है:

बूझी बात खुला अब परदा, क्योंकर साच छिपावौं हो।
जैसन देखौं तैसन भाखौं, मैं ना झूठ कहावौं हो॥[22]

अन्य संतों की तरह पलटू साहिब भी अपनी परम चेतना की अवस्था प्राप्त कर लेने का, परमात्मा को पा लेने का और उससे एक हो जाने का उल्लेख करते हैं। कबीर साहिब ने कहा है—*राम कबीरा एक भए है...॥*[23] नामदेव जी का कथन है, *नामे नाराइन नाही भेद॥*[24], पलटू साहिब कहते हैं कि संसार का स्वामी वह परमात्मा ही मनुष्य की देह धारण कर लेने से एक सेवक के रूप में यह पलटू बन गया है:

पलटू देह के धरे से वे साहिब हम दास।[25]

एक अन्य स्थान पर वे परमात्मा से अपनी एकता जताते हैं:

संका नाहिं करौं काहू की, हमसे बड़ कोउ नाहीं हो।
पलटूदास कवन है दूजा, हमहीं हैं सब माहीं हो॥[26]

संतों के लिए कोई ग़ैर नहीं होता, इसलिए वे स्वभाव से ही निर्वैर और निर्भीक होते हैं। वे सत्य स्वरूप होते हैं और सत्य का ही प्रचार करते हैं। उन्हें जो कुछ भी कहना होता है पूरी निडरता और दिलेरी से

कहते हैं। पलटू साहिब ने भी बड़ी निडरता से सच्ची आध्यात्मिकता का उपदेश दिया। आपने जीवों को परमात्मा से मिलाप का ख़ुद परमात्मा द्वारा रचा गया आंतरिक मार्ग दिखाया और उन्हें सब तरह के भ्रमों से निकालने का भरसक प्रयास किया। उन्होंने अंतर्मुखी भक्ति का यानी नाम भक्ति का प्रचार किया और प्रत्येक प्रकार की बहिर्मुखी भक्ति का प्रबल खंडन किया। आपने लोगों को समझाया कि संत-सतगुरु की कृपा से ही मनुष्य प्रभु से मिल सकता है:

पूरा सतगुरु मिलै जो पूजै मन की आस॥*
पूजै मन की आस पिया को देय मिलाई।[27]

अन्य संतों की तरह पलटू साहिब ने भी लोगों को चिताया कि हर प्राणी अर्थात् हर मनुष्य, पशु और पक्षी का ही नहीं बल्कि हर पेड़-पौधे का भी वास्तविक स्वरूप आत्मा है, शरीर नहीं। यह आत्मा परमात्मा की अंश है। हर आत्मा परमात्मा से बिछुड़ी हुई है और उससे मिलकर ही वह सच्चा सुख और सच्ची शांति प्राप्त कर सकती है। केवल मनुष्य-देह में ही आत्मा शब्द से जुड़ सकती है और उससे जुड़कर ही परमात्मा तक पहुँच सकती है, परमात्मा को पा सकती है। आत्मा को शब्द के द्वारा परमात्मा से मिलाने वाली शब्द-योग की युक्ति केवल संत-सतगुरु ही सिखा सकते हैं। सतगुरु से दीक्षा लेकर उनकी बताई विधि से अंतर में शब्द का अभ्यास करने यानी नाम की कमाई करने से ही जीव को प्रभु की प्राप्ति होती है और सांसारिक बंधनों से मुक्ति मिलती है।

संतों की बताई नाम भक्ति आंतरिक भक्ति है जबकि धर्मग्रंथों का पाठ, माला फेरना, ऊँचे स्वर में मंत्रों तथा स्तोत्रों का जाप, तीर्थयात्रा, व्रत रखना, हठयोग आदि सब बहिर्मुखी भक्ति के साधन हैं। कर्मकांड अर्थात् यज्ञ, हवन, मूर्तिपूजा और तरह-तरह के संस्कार भी बहिर्मुखी भक्ति के साधन हैं। इन सब साधनों को वे परमात्मा की प्राप्ति के लिए पर्याप्त नहीं मानते।

---

* पूजै=पूरी हो जाती है

वे कहते हैं कि मैंने अन्य सब साधन अपनाकर देख लिए पर इनसे कोई लाभ नहीं हुआ। सतगुरु की शरण लेने पर ही प्रभु से मिलाप हुआ:

दास पलटू जभी पाया, गुरू के चरन चित लाया॥[28]

परमात्मा से मिलाप केवल अपने अंतर में ही हो सकता है, मूर्तियों को भोग लगाने और तरह-तरह के चढ़ावे लेकर पीरों फ़कीरों के मज़ारों पर जाने से नहीं:

मूरति औ कबुर ना बोलै ना खाय कछु,
हिन्दु औ तुरुक तुम कहा पाया।
दास पलटू कहै पाया तिन्ह आप में,
मूए बैल ने कब घास खाया॥[29]

पलटू साहिब ने कर्मकांडी पंडितों पर भी करारा व्यंग्य करते हुए कहा:

भलि मति हरल तुम्हार पाँडे बम्हना॥ टेक॥*
सब जातिन में उत्तम तुमहीं, करतब करौ कसाई।
जीव मारि कै काया पोखौ†, तनिकौ दरद न आई॥
राम नाम सुनि जूड़ी‡ आवै, पूजौ दुर्गा चंडी।
लम्बा टीका काँध जनेऊ, बकुला जाति पखंडी॥
बकरी भेड़ा मछरी खायौ, काहे गाय बराई§।
रुधिर माँस सब एकै पाँडे, थू तोरी बम्हनाई॥
सब घट साहिब एकै जानौ, यहि माँ भल है तोरा।
भगवतगीता बूझि बिचारौ, पलटू करत निहोरा॥[30]

---

* **हरल**=हर ली गई है † **पोखौ**=पोषण करते हो
‡ **जूड़ी**=ठंड लगने के साथ चढ़नेवाला बुख़ार § **बराई**=मना कर दी

अर्थात् तुम तो बगुला भक्त हो। तुम ऊँची जाति का अभिमान करते हो, परंतु काम कसाइयों जैसा करते हो, पेट के लिए बेरहमी से जीवों की हत्या करते हो। राम नाम की सच्ची भक्ति करने की बात सुनने से तुम्हें बुख़ार हो जाता है जबकि देवियों की तुम बड़े उत्साह के साथ पूजा करते हो। तुम भूल जाते हो कि भेड़-बकरियों का मांस भी गाय के मांस की तरह ही निकृष्ट भोजन है क्योंकि सभी के शरीर में एक ही परमात्मा का वास है।

लोगों को पाखंडी महात्माओं से सावधान करते हुए पलटू साहिब ने कहा है कि वे स्वयं ज्ञान से कोरे होते हैं और संसार का गुरु होने का दावा करते हैं। वे अपना मठ बनाकर लोगों को अपनी ओर आकर्षित करके लोगों से तरह-तरह की भेंट लेते हैं। वे निजी अनुभव से ख़ाली होते हैं और अन्य संत-महात्माओं की वाणियों को काट-छाँटकर नई वाणी रच लेते हैं जिसे वे अपनी रचना बताते हैं। आसपास के क्षेत्र में वे भक्तराज और संत शिरोमणि माने जाते हैं:

संतन के बीच में टेढ़ रहैं, मठ बाँधि संसार रिझावते हैं।*
दस बीस सिष्य परमोधि लिया†, सब से वह गोड़‡ धरावते§ हैं॥
संतन की बानी काटि के जी, जोरि जोरि के आपु बनावते हैं।
पलटू कोस चार के गिर्द में जी, सोई चक्रवर्ती कहलावते हैं॥[31]

इस प्रकार की स्पष्टवादिता का परिणाम यह हुआ कि सब धर्मों और संप्रदायों का पुरोहित वर्ग पलटू साहिब का शत्रु बन गया। ज्यों-ज्यों लोगों पर पलटू साहिब के निष्पक्ष तथा स्वार्थ रहित आध्यात्मिक उपदेश का प्रभाव बढ़ता गया, अपने आप को धर्म के रखवाले समझने वाले तथा

---

* **टेढ़ रहैं**=अशिष्टता का व्यवहार करना † **परमोधि लिया**=ज्ञान का उपदेश दे दिया
‡ **गोड़**=पाँव § **धरावते**=पूजा करवाते हैं

अन्य अंधविश्वासी कट्टरपंथी लोग आपके अधिक विरोधी होते चले गए। पलटू साहिब ने ज़िक्र किया है—मैं तो हिंदुओं और मुसलमानों को समान समझकर दोनों को सत्य का ही ज्ञान देता हूँ, परंतु दोनों धर्मों में मेरे शत्रु पैदा हो गए हैं। मैंने सच्चे नाम की भक्ति का मार्ग चलाया है जिस पर बूढ़े ही नहीं बल्कि कम आयु के लोग भी चलने लग गए हैं। परदे में रहने वाली स्त्रियाँ भी मेरे उपदेश की चर्चा से भाव-विभोर होकर मुझसे नाम का भेद लेने चली आती हैं। लोग निश्चयपूर्वक मेरी बताई विधि से भक्ति करने लगे हैं। मेरी शिक्षा बाक़ी सबको अच्छी लगती है पर भेषधारी साधू, पंडित और क़ाज़ियों को मैं फूटी आँख नहीं भाता:

मन सब को हरि लेय सभन को राखै राजी।
तीन देख न सकै बैरागी पंडित काजी॥[32]

कट्टरपंथियों और ढोंगी महात्माओं द्वारा पलटू साहिब का विरोध स्वाभाविक था क्योंकि संतों के अंतर्मुखी भक्ति के उपदेश से ऐसे लोगों की दुकानदारी कम हो जाती है और उनकी आजीविका चौपट होती है। धर्म को अपनी रोज़ी का साधन बना लेने वाले लोग पलटू साहिब की किस प्रकार की आलोचना करने लग गए थे, इस बात की आपने अपनी वाणी में विस्तार से चर्चा की है। आप हमें बताते हैं कि चारों वर्णों के लोग मुझसे मीठा रूहानी पकवान लेकर जाते हैं, लेकिन ढोंगी साधु ईर्ष्या के कारण मुझे अपमानित करते हैं; वे ख़ुद तो मेरे निकट भी नहीं आते; अपने आप को सबसे बड़ा धर्मात्मा बताते हैं और मेरे बारे में कहते हैं कि यह नया-नया दुकानदार यों ही भक्त बना बैठा है:

सब बैरागी बटुरि कै पलटुहि किया अजात॥*
पलटुहि किया अजात पर्भुता देखि न जाई।

* **अजात**=जाति या बिरदारी से बाहर निकाला गया

बनिया काल्हिक भक्त प्रगट भा सब दुतियाई†॥*
हम सब बड़े महन्त ताहि को कोउ न जानै।
बनिया करै पखंड ताहि को सब कोउ मानै॥
ऐसी इर्षा जानि कोऊ ना आवै खाई।
बनिया ढोल बजाय रसोई दिया लुटाई॥
मालपुवा चारिउ बरन बाँधि लेत कछु खात।
सब बैरागी बटुरि कै पलटुहि किया अजात॥[33]

जिस प्रकार स्वार्थी लोगों का अपना स्वभाव होता है, संतों की भी अपनी मर्यादा होती है। वे कभी किसी का बुरा नहीं सोचते। वे सभी में प्रभु को देखते हैं, इसलिए हितैषी तथा द्वेषी, श्रद्धालु तथा निंदक दोनों से एक-सा प्यार करते हैं। उनमें क्षमा, प्रेम तथा परोपकार इस प्रकार प्रवाहित होते हैं जैसे चंदन में से सुगंध। पलटू साहिब पर संतों का यह लक्षण पूरी तरह खरा उतरता है। आप लिखते हैं:

निन्दक रहै जो कुसल से हम को जोखों नाहिं॥...
लेहिं संत तेहि तार बड़े वे अधम-उधारन॥[34]

परोपकार के लिए संत बहुत कष्ट झेलते हैं, यह बताने के लिए पलटू साहिब उनकी तुलना कपास से करते हैं जिसे पहनने के वस्त्रों का रूप लेने के लिए बेलने में से गुज़रने से लेकर दरज़ी के हाथों कटकर सिलने तक बहुत कष्ट सहना पड़ता है:

संत सासना‡ सहत हैं जैसे सहत कपास॥
जैसे सहत कपास नाय§ चरखा में ओटै।
रूई धर जब तुमै¶ हाथ से दोऊ निभोटै॥

* **काल्हिक**=कल का † **दुतियाई**=दुतकार दिया है ‡ **सासना**=बहुत बड़ा कष्ट
§ **नाय**=डालकर ¶ **तुमै**=उँगलियों से नोचकर रूई के रेशों को अलग करना

रोम रोम अलगाय पकरि कै धुनिया धूनी।
पिउनी नँह† दै कात सूत ले जुलहा बूनी॥*
धोबी भट्ठी पर धरी कुन्दीगर‡ मुंगरी मारी।
दरजी टुक टुक फारि जोर कै किया तयारी॥
पर-स्वारथ के कारने दुख सहै पलटूदास।
संत सासना सहत हैं जैसे सहत कपास॥[35]

जीवों के उद्धार में लगे पलटू साहिब को भी बहुत कुछ सुनना पड़ा, सहना पड़ा। कहा जाता है कि उनको कई तरह से तंग किया गया पर वे पूरी दिलेरी से प्रेमपूर्वक सत्य का प्रचार करते रहे। जब विरोधियों की दाल किसी तरह नहीं गली तो उन्होंने एक दिन अवसर पाकर उनकी कुटिया को आग लगा दी और उन्हें जीवित ही जला दिया। उन्हें भी सुक़रात, हज़रत ईसा, शम्स तब्रेज़, मंसूर, सरमद, गुरु अर्जुन देव और गुरु तेग बहादुर की तरह रुढ़िवादी कट्टरपंथियों के क्रोध की अग्नि में अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ी।

* **पिउनी**=पूनी † **नँह**=नाख़ून ‡ **कुन्दीगर**=कुंदी करनेवाला, मुँगरी से पीटनेवाला

2

उपदेश

परमात्मा

संसार का स्वामी

अन्य संतों की तरह पलटू साहिब ने भी परमात्मा को संसार का स्वामी कहा है। इस बात का उल्लेख उन्होंने अपनी वाणी में बार-बार किया है। आपका एक पद *जगन्नाथ जगदीस*[1] शब्दों से आरंभ होता है और दोनों का अर्थ संसार का स्वामी ही है। परमात्मा के लिए आपने सबसे अधिक *साहिब* शब्द का प्रयोग किया है जो अरबी भाषा का शब्द है और जिसका अर्थ स्वामी है। शायद उनका उद्देश्य हमें बार-बार इस सच्चाई की याद दिलाना है कि सारे संसार का स्वामी परमात्मा ही है, कोई और नहीं। उसकी विशाल सृष्टि में स्थान-स्थान पर अपना-अपना काम कर रही असंख्य शक्तियाँ, अनगिनत देवी-देवता उसी के आज्ञाकारी सेवक हैं।

परमात्मा की सर्वव्यापकता

हर स्वामी की पहुँच अपने अधिकार क्षेत्र में हर जगह होती है। परंतु संपूर्ण सृष्टि के स्वामी परमात्मा की पहुँच की बात तो हम तब करें अगर वह कहीं एक जगह रहता हो। वह तो *जगन्नाथ जगदीश* होते हुए एक साथ हर जगह और हर वक़्त मौजूद है, वह सर्वव्यापक है यह बात सब संतों ने कही है। परमात्मा की सर्वव्यापकता का उल्लेख पलटू साहिब ने अपनी वाणी में स्थान-स्थान पर किया है। उनके कई पदों में इसकी स्पष्ट झलक है:

साहिब आप बिराजै सकल घट, चारि खानि बिच राजै॥ टेक॥*
नारी पुरुष देव औ दानव, बाग फूल औ माली।
हाथी घोड़ा बैल ऊँट में, कतहूँ रहै न खाली॥
मच्छ कच्छ घरियार अचर चर, आग पवन औ पानी।
तीतर बाज सिंह औ हरिना, पूरन चारिउ खानी॥
ज्ञानी मूढ़ गुरू औ चेला, चोर साहु भरभूना।
बिस्वा बिसनी भेड़ कसाई, नाहिं कोई घर सूना॥
यह सरीर नासक है भाई, जीव कै नास न होई।
पलटूदास जगत सब भूला, भेद न जानै कोई॥[2]

इस पद में परमात्मा की सर्वव्यापकता की चर्चा करते हुए पलटू साहिब ने हमें समझाया है कि वह आत्मा के रूप में चारों प्रकार के प्राणियों में विद्यमान है; वह हर स्त्री और पुरुष में, हर देवता और राक्षस में, हर पशु और पक्षी में यहाँ तक कि हर वृक्ष, हर लता और हर फल-फूल में भी मौजूद है। वह केवल चेतन पदार्थों में ही नहीं, जड़ पदार्थों के अंदर भी है। वह अग्नि, वायु आदि पाँचों तत्त्वों में भी विद्यमान है। भले ही कोई ज्ञानी हो या मूर्ख, चोर हो या साहूकार, वेश्या हो या व्यसनी, भेड़ हो या उसे मारने वाला क़साई—कोई भी वस्तु या प्राणी उससे ख़ाली नहीं है। इतना ही नहीं गुरु में भी वही है, शिष्य में भी वही है। कोई प्राणी जब मरता है तो नाश केवल उसके शरीर का ही होता है, उसकी आत्मा का नहीं क्योंकि आत्मा तो अविनाशी प्रभु का अंश है। यह एक ऐसा भेद है जिसे कोई नहीं जानता।

---

* **चारि खानि**=प्राणियों के चार भेद—1. उद्भिज (पेड़-पौधे आदि जो धरती को फोड़कर बाहर निकलते हैं), 2. अंडज (पक्षी, साँप, मछलियाँ आदि जो अंडे में से पैदा होते हैं), 3. स्वेदज (जूँ, मच्छर, खटमल आदि जो पसीने, गरमी या भाप से पैदा होते हैं) और 4. जरायुज या जेरज (चौपाये और मनुष्य जो झिल्ली या आँवल में लिपटे हुए पैदा होते हैं)।

जीवात्मा तथा संसार दोनों का परमात्मा के साथ संबंध लहर और जल के समान बताते हुए पलटू साहिब ने कहा है:

जो निर्गुन सो सर्गुन और न दूजा कोई।...
पलटू जीव और ब्रह्म से भेद नहीं अलगाय।
जल से उठत तरंग है, जल ही माहिं समाय॥[3]

इस प्रकार यह भी स्पष्ट हो जाता है कि संत परमात्मा को सर्वव्यापक इसलिए कहते हैं कि संसार का हर पदार्थ चाहे वह जड़ है या चेतन, एक परमात्मा का ही रूप है। कुछ भी परमात्मा से भिन्न नहीं है। वह तो बिस्वरूप (विश्वरूप) है—समस्त विश्व उसी का प्रकट रूप है।

एक अन्य पद में आपने तीनों लोकों के जीवों को प्रभु की फुलवारी बताते हुए कहा है कि वह इस फुलवारी का माली है जो इसके हर पेड़-पौधे के अंदर विराजमान भी है और उसे सींच भी रहा है:

तीन लोक फुलवारी तेरी, फूलि रही बिनु माली है।
घट घट बैठा आपै सींचै, तिल भर कहीं न खाली है॥
चारि खानि औ भुवन चतुरदस, लख चौरासी बासा है।*
आलम तोहि तोहि में आलम, ऐसा अजब तमासा है॥
नटवा होइ कै बाजी लाया, आपुइ देखनहारा है।
पलटूदास कहौं मैं का से, ऐसा यार हमारा है॥[4]

यह निस्संदेह बड़े आश्चर्य की बात है कि परमात्मा स्वयं ही सारा संसार है और संसार भी उसी में समाया हुआ है। सारी जड़-चेतन सृष्टि एक नाटक है जो वह खेल रहा है और साथ ही स्वयं देख भी रहा है।

---

* **भुवन चतुरदस**=चौदह लोक

कैसी विचित्र लीला है उसकी! पलटू साहिब अपने आप को अपने इस अनोखे मित्र का वर्णन करने में असमर्थ पा रहे हैं।

अपने शरीर के अंदर परमात्मा की खोज

परमात्मा जब हर शरीर में मौजूद है तो यही सही होगा कि हम उसकी खोज अपने शरीर के अंदर ही करें। बाहरी तीर्थ, सरोवर, नदी, मंदिर, मस्जिद, मूर्ति, जंगल, पहाड़, धर्मग्रंथ और दर्शन शास्त्रों में उसे ढूँढ़ना व्यर्थ है। सब संतों की यही शिक्षा है। पलटू साहिब ने भी यही कहा है। आपके वचन हैं:

पूरन ब्रह्म रहै घट में, सठ तीरथ कानन खोजन जाई।
कीट पतंग रहे परिपूरन, कहु तिल एक न होत जुदा ही॥
नैन दियो हरि देखन को, पलटू सब में प्रभु देत दिखाई।
ढूँढ़त अंध गरंथन में, लिखि कागद में कहुँ राम लुकाही॥*[5]

परमात्मा हर प्राणी के अंदर विराजमान है। इसलिए मनुष्य को उसे अपने दिव्य चक्षु से यानी अपनी आंतरिक आँख के द्वारा अंदर ही देखने का प्रयत्न करना चाहिए। बाहर कहीं भी उसे ढूँढ़ना सरासर मूर्खता है। ग्रंथों आदि में तो उसे वे ही ढूँढ़ते हैं जो अंधे हैं, जिनकी अंदर की आँख अभी बंद है। जो प्रभु की दी हुई आंतरिक आँख खोलकर उसे अपने अंदर देख लेता है, उसे वह प्रभु तुच्छ से तुच्छ जीव और छोटे से छोटे पदार्थ में भी दिखाई देता है।

बाहरी भक्ति को लेकर हिंदू और मुसलमानों दोनों की हालत पर अफ़सोस प्रकट करते हुए पलटू साहिब ने कहा है:

वे पूजैं पत्थर को कबर वे पूजते, भटक कै मुए दै सीस मारैं।
दास पलटू कहै साहिब है आप में, आपनी समझ बिनु दोऊ हारै॥[6]

* लुकाही=छिपा रखा है क्या?

हिंदू निर्जीव मूर्तियों में और मुसलमान मज़ारों पर जाकर उसे ढूँढ़ते हुए भटक रहे हैं। प्रभु का असली घर तो हर मनुष्य का अपना शरीर ही है। इसलिए परमात्मा की प्राप्ति उसे अपने अंदर खोजने से ही हो सकती है, किसी भी प्रकार की बहिर्मुखी भक्ति से नहीं।

आत्मा परमात्मा की अंश

आत्मा को संबोधित करते हुए पलटू साहिब ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि वह स्वयं ही परमात्मा है:

तो में है तेरा राम बैरागिन, भूलि गया तोहि धाम॥ टेक॥
घिव ज्यों रहै दूध के भीतर, मथे बिनु कैसे पावै।
फूल मँहै ज्यों बास रहतु है, जतन सेती अलगावै॥
मिंहदी मँहै रहै ज्यों लाली, काठ में अगिन छपानी।
खोदे बिना नहीं कोई पावै, ज्यों धरती में पानी॥
ऊख मँहै ज्यों कंद रहतु है, पेड़ रहै फल माहीं।*
देस देसंतर ढूँढ़त फिरतु है, घट की सुधि है नाहीं॥
पूरन ब्रह्म रहै तोही में, क्यों तू फिरै उदासी।
पलटूदास उलटि के ताकै, तू ही है अबिनासी॥[7]

इस पद में संसार से विरक्त होकर प्रभु की खोज में जगह-जगह भटक रही आत्मा को कई दृष्टांत देकर चेताया गया है कि जैसे दूध में घी होता है, फूल में सुगंध, मेंहदी में लाली, काठ में अग्नि, भूमि में जल, ईख में मिसरी और पेड़ में फल होता है—उसी प्रकार परमात्मा भी आत्मा के अंदर छिपा है; परमात्मा को पाने के लिए उसे इस तरह मारी-मारी फिरने की ज़रूरत नहीं है। अगर वह प्रभु को अपने शरीर के अंदर ही आँखों से ऊपर खोजे और उसकी प्रवृत्ति उलट जाए अर्थात् बाहर से

* कंद=सफ़ेद शक्कर

अंदर तथा नीचे के नौ द्वारों की ओर से हटकर ऊपर की ओर हो जाए, तो उसे कभी न कभी यह अनुभव अवश्य हो जाएगा कि वह स्वयं ही अविनाशी परमात्मा है।

आत्मा को परमात्मा की प्राप्ति कैसे हो?

संत हमें समझाते हैं कि आत्मा परमात्मा की अंश है। उस रूप में स्वयं परमात्मा ही सब प्राणियों के शरीर में विद्यमान है। आत्मा युगों-युगों से उससे बिछुड़ी हुई भिन्न-भिन्न योनियों में जन्म ले रही है, आवागमन का चक्कर काट रही है, भवसागर में ग़ोते खा रही है। मनुष्य-योनि ही एकमात्र ऐसी योनि है जिसमें वह संसाररूपी महासागर को पार करके जन्म-मरण के चक्कर से मुक्ति प्राप्त कर सकती है, वापस परमात्मा के पास पहुँच सकती है, उसे पा सकती है। लेकिन उसे यह सौभाग्य किसी जीवित सतगुरु की शरण लिए बिना प्राप्त नहीं हो सकता। पलटू साहिब ने भी मनुष्य देह का नाव के रूप में, आत्मा का पथिक तथा सतगुरु का केवट के रूप में उल्लेख करते हुए यही बात कही है:

नाव मिली केवट नहीं कैसे उतरै पार॥
कैसे उतरे पार पथिक बिस्वास न आवै।[8]

माया

माया की लहर संसार सब मगन है

कितनी विचित्र बात है कि परमात्मा सर्वव्यापक होते हुए भी हमें दिखाई नहीं देता। वह हर जगह मौजूद है। कोई भी ऐसा स्थान नहीं है जहाँ वह न हो, फिर भी वह हमारी नज़रों से ओझल है। इस बात पर आश्चर्य तथा खेद प्रकट करते हुए पलटू साहिब कहते हैं:

पलटू खाली कहूँ नहिं परगट है जग माहिं।
नजर मँहै सब की पड़ै कोऊ देखै नाहिं॥[9]

इस स्थिति का कारण बताते हुए पलटू साहिब ने कहा है:

माया की लहर संसार सब मगन है, खाय भरि पेट भरि नींद सोया।
राम को नाम नहिं चेत सपनेहु किहा,...बैठि कै महूँ भरि पेट रोया॥[10]

अन्य संतों ने भी अपने-अपने शब्दों में हमें समझाया है कि माया ने आत्मा को सांसारिक पदार्थों के मोह में फँसाकर उसे प्रभु की ओर से अंधा कर दिया है। माया ने सबको बुरी तरह भरमा रखा है। वह बहुत शक्तिशाली है। उसने सबको अपना दास बना लिया है। माया के वश में हुआ मनुष्य परमात्मा को भूल चुका है, उसकी ओर उसका ध्यान जाता ही नहीं। जब माया के प्रभाव से अंतर में अज्ञान का अंधकार छाया हो तो परमात्मा कैसे दिखाई दे सकता है?

गुरु अमरदास जी का भी कहना है:

एह माइआ जित हर विसरै मोह उपजै... ॥[11]

माया क्या है?

समझने की बात यह है कि माया क्या है या कौन है जिसने सारे संसार में अपना राज्य स्थापित कर रखा है।

वेदांत के अनुसार माया परमात्मा की उस शक्ति का नाम है जो सत्य पर परदा डालती है और असत्य में सत्य का भ्रम उत्पन्न करती है, जिसके वश में हुआ जीव दृश्यमान मिथ्या जगत को सत्य मानता है और जो सत्य है उस अदृश्य परमात्मा को भुला देता है। इसी आधार पर माया शब्द का प्रयोग जादू, भ्रम या धोखे के अर्थ में भी होता है। संतों की वाणी में इसका दोनों अर्थों में प्रयोग हुआ मिलता है।

हमारा ध्यान संसार की ओर से हटाकर परमात्मा की ओर करने के लिए संत हमें बार-बार और तरह-तरह से यह समझाने का प्रयत्न करते हैं कि संसार मिथ्या है, मायामय है, भ्रमरूप है। यह सत्य नहीं है क्योंकि यह परिवर्तनशील है, नश्वर है। इसका हर पदार्थ परिवर्तनशील है, नाशवान है।

आज नहीं तो कल, जल्दी नहीं तो देर से, कभी न कभी यह नष्ट हो ही जाएगा।

संतों के अनुसार हमारा संसार के पदार्थों की ओर भागना ऐसा ही है जैसे मृग का रेगिस्तान में दूर से पानी दिख रही रेत की ओर भागना। वह भ्रमवश उस रेत को जल समझ लेता है, जबकि हम भ्रमवश सांसारिक पदार्थों को स्थायी सुख का साधन समझे बैठे हैं तथा उनके मोह में फँसकर परमात्मा को भूले हुए हैं। वास्तव में केवल परमात्मा ही सत्य है अर्थात् अविनाशी है। भ्रमवश वह हमारे लिए न होने के बराबर है। इस बात की ओर हमारा ध्यान कभी जाता ही नहीं कि संसार के सब पदार्थ नाशवान हैं। संसार के पदार्थों की नश्वरता का पलटू साहिब ने अपनी वाणी—*हाथी घोड़ा खाक है...॥*[12] में बड़े सुंदर ढंग से उल्लेख किया है।

सपने की तरह झूठे इन पदार्थों से हमें कुछ समय के लिए तो सुख मिल सकता है या ख़ुशी प्राप्त हो सकती है परंतु ये हमारे लिए स्थायी सुख-शांति का साधन कभी नहीं बन सकते। इनके होते हुए भी हमें प्राय: कोई न कोई चिंता सताती ही रहती है। इनका संबंध हमारे शरीर से है जो इन्हीं की तरह नश्वर है, क्षणभंगुर है। *धूआँ का धौरेहरा ज्यो बालू की भीत॥*[13] धुएँ से बनी महलों की आकृति और रेत की दीवार की तरह यह शरीर हमारा वास्तविक स्वरूप नहीं है। हमारा वास्तविक स्वरूप तो आत्मा है जो नित्य है क्योंकि वह परमात्मा की अंश है। वह युगों से परमात्मा से बिछुड़ी हुई है और उसे स्थायी शांति परमात्मा से मिलाप होने पर ही मिल सकती है। परमात्मा से मिलाप के लिए उसका माया के जाल से मुक्त होना आवश्यक है। लेकिन कोई संत जो स्वयं मुक्त होकर परमात्मा को पा चुका हो, वही इस संसार से यानी माया के महाजाल से आत्मा को मुक्ति दिला सकता है।

माया के कई रूप

संतों ने अपनी वाणी में जीव को भ्रम में डालनेवाली परमात्मा की इस शक्ति माया को मूर्त रूप देकर इसका एक कुटिल स्त्री के रूप में वर्णन किया है, जो अनेक रूप धारण करके जीवों को ठगती है। संसार के

सब पदार्थ इसी के भिन्न-भिन्न रूप हैं जिन्हें धारण करके यह जीवों को भ्रम में डालती है। पलटू साहिब ने कहा है कि यह कहीं सोने-चाँदी का और कहीं एक सुंदर नारी का रूप धारण करके आ जाती है। संसार में हर किसी को इस मोहिनी ने अपने वश में कर रखा है। बड़े-बड़े योगी, यति और गुफाओं में तपस्या करनेवाले वैरागी भी इसकी मार से नहीं बच सके। यह केवल संतों से डरती है किसी और से नहीं:

माया बड़ी बहादुरी लूटि लिहा संसार॥
लूटि लिहा संसार केहू को मानै नाहीं।
तनिक उजुर जो करै ताहि को कच्चा खाही॥
कहूँ कनक कहूँ कामिनि सुंदर भेष बनावै।
ताकै जेकरी ओर नजर से मारि गिरावै॥
जोगी जती औ तपी गुफा से पकरि मँगावै।
बचै न कोऊ भागि दुपहरै लूटा जावै॥
पलटू डरपै संत से वे मारैं पैजार।*
माया बड़ी बहादुरी लूटि लिहा संसार॥[14]

कहूँ कनक कहूँ कामिनि... यह पंक्ति विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है। इसमें हमें लोभ तथा काम, माया के इन दो ज़बरदस्त हथियारों से सावधान किया गया है। पुरुष कामवश स्त्री के जाल में फँसता है और स्त्री पुरुष के।

यहाँ यह प्रश्न उठ सकता है कि एक ओर तो यह कहा जाता है कि परमात्मा ही एकमात्र सत्य है, संसार के जड़ और चेतन सब पदार्थ उसी के भिन्न-भिन्न दृश्यमान रूप हैं, दूसरी ओर हमें यह बताया जाता है कि यह ठगिनी माया भिन्न-भिन्न रूप धारण करके जीव को ठगती है, उसे भ्रम में डालती है। ऐसा क्यों?

---

* **पैजार**=जूती

ऐसा इसलिए है कि परमात्मा तो अविनाशी सत्य है जबकि उसी की माया के प्रभाव के अधीन मनुष्य संसार के नश्वर पदार्थों को सत्य मान लेता है और परमात्मा उसके लिए न होने जैसा हो जाता है। संत माया के प्रभाव से मुक्त होते हैं और उनके लिए परमात्मा एक ऐसा सत्य है जिसे उन्होंने अनुभव से प्राप्त किया है, अंतर में उसका प्रत्यक्ष दर्शन किया है। उन्हें सब पदार्थों में परमात्मा दिखाई देता है। संतों के अनुसार संसार भ्रममात्र और मिथ्या है जबकि दुनिया वालों के लिए परमात्मा का अस्तित्व केवल औपचारिक या कहने भर के लिए है, वास्तविक नहीं। हम दुनिया वालों को संसार का अस्तित्व ही वास्तविक लगता है। हमारी यह सोच हमारे माया के जाल में फँसे होने का परिणाम है। इसी लिए पलटू साहिब तथा अन्य संत भी यह कहते हैं कि ठगिनी माया संसार के भिन्न-भिन्न पदार्थों का रूप धारण करके हमें भ्रम में डालती है। ऐसा कहकर संत हमारा ध्यान मायामय संसार की ओर से हटाकर उस परमसत्य परमात्मा की ओर करना चाहते हैं ताकि हमारा उससे मिलाप हो सके।

मन

मन माया में मिलि गया

पलटू साहिब ने कहा है कि मन माया से मिला हुआ है और मनुष्य की बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। उसे यह पहचान नहीं रही कि क्या अच्छा है और क्या बुरा, क्या सच है और क्या झूठ। मन शरीर के द्वारों के ज़रिए दसों दिशाओं में घूमकर सब प्रकार के कुकर्म करता है:

मन माया में मिलि गया मारा गया बिबेक॥...
करै नीच सब काम चलै दस दिसि दरवाजा॥[15]

संतों के अनुसार मन, आत्मा को इस संसार के साथ संपर्क स्थापित करने तथा यहाँ सक्रिय होने के लिए प्रभु से मिला एक साधन है, लेकिन विडंबना यह है कि आत्मा को अपने जाल में फँसाने के लिए माया ने मन को ही अपना साधन बना रखा है। माया मन को लुभाती है, इंद्रियों के

भोग तथा संसार के अन्य पदार्थों की ओर आकर्षित करती है। मन के साथ बँधी हुई विवश आत्मा भी इसके साथ-साथ उनकी ओर खिंची चली जाती है। इसी लिए संत अपनी वाणी में मन की चंचलता का वर्णन करते हैं और परमार्थी के लिए इसे वश में करने की आवश्यकता पर बहुत बल देते हैं। वे हमें समझाते हैं कि माया के प्रभाव से मन का ध्यान नीचे तथा बाहर की ओर रहता है। यह शरीर में अपने स्थान यानी दोनों भौंहों के बीच से नीचे उतरकर नौ द्वारों के रास्ते बाहर सारे संसार में फैला हुआ है। यह हर समय इधर-उधर भागता रहता है और इसकी दासी बनी आत्मा इसका साथ नहीं छोड़ सकती। संसार के नश्वर पदार्थों को प्राप्त करने, भोगने तथा सुरक्षित रखने के प्रयास में मनुष्य नीच से नीच, बुरे से बुरे, कर्म कर बैठता है; नैतिक नियमों को उठाकर ताक़ पर रख देता है और अपने क़ीमती उसूलों की क़ुर्बानी दे देता है।

मन को वश में किए बिना मुक्ति असंभव

कर्मों का फल भोगने के लिए जीव को बार-बार जन्म लेना पड़ता है और पापों के फलस्वरूप उसे नरकों तथा निचली योनियों में जाना पड़ता है। मन और माया ने मिलकर आत्मा की बड़ी दयनीय दशा कर रखी है। इस दशा से छुटकारा पाने के लिए और आवागमन का चक्कर समाप्त करने के लिए मन को वश में करना सबसे ज़रूरी है। पलटू साहिब ने मन का एक शिकार करने योग्य जानवर के रूप में उल्लेख करते हुए कहा है कि जो इसका शिकार कर लेगा उसी का आवागमन समाप्त होगा:

पलटू जो सावज मारि खावै, तिसी का आवागवन नासा॥*[16]

संत हमें समझाते हैं कि मन एक ऐसा शत्रु है जो हमारे अंदर ही बैठा है और जिसे वश में करना बहुत कठिन है:

---

* **सावज**=शिकार करने योग्य जानवर

मन ना पकरा जाय बहादुर ज्वान है।
करत रहै खुरखुन्द बड़ा सैतान है॥*
ऐसा यार हरीफ† रहत मन हलक‡ में।
अरे हाँ पलटू उड़ता कोस हजार पच्छ§ बिनु पलक में॥[17]

अर्थात् मन बड़ा निडर और बलवान है। यह ऐसा दुश्मन है जो हमारा दोस्त बना हुआ है। बेशक हम अपने आप को अँधेरी कोठरियों में भी बंद क्यों न कर लें तो भी यह वहाँ क़ैद नहीं रहेगा; पल भर में बाहर निकल जाएगा और हमसे बहुत दूर चला जाएगा।

मन की चंचलता के बारे में गुरु रामदास जी का कहना है कि यह तरह-तरह के भ्रम में पड़ा हर क्षण भटकता है, यहाँ-वहाँ भागता फिरता है *मन खिन खिन भरम भरम बहु धावै॥*[18] इसी बारे में स्वामीजी भी कहते हैं कि यह किसी तरह समझता ही नहीं, चाहे कितनी ही कोशिश क्यों न कर ली जाए—*कोटि जतन से यह नहिं माने*[19] पलटू साहिब ने भी अपनी वाणी में बड़े विस्तार से हमें बताया है कि मन को समझना तथा उसे समझाना, ठहराना और वश में करना कितना कठिन है। आपने कहा है:

मन मारे मरता नहीं कीन्हे कोटि उपाय॥
कीन्हे कोटि उपाय नहीं कोइ मन की जानै।
मन के मन में और कोई जनि¶ मन की मानै॥
हाड़ चाम नहिं मास नहीं कछु रूप न रेखा।
कैसे लागै हाथ नहीं कोउ मन को देखा॥
छिन में कथै बैराग छिनै में होवै राजा।
छिन में रोवै हँसै छिनै में आपु बिराजा॥

---

* **खुरखुन्द**=खुरचाल, दुष्टता † **हरीफ**=शत्रु ‡ **हलक**=अर्थात् अंदर
§ **पच्छ**=पंख ¶ **जनि**=मत

पलटू पलकै भरे में लाख कोस पर जाय।
मन मारे मरता नहीं कीन्हे कोटि उपाय॥[20]

अर्थात् मन हाड़-मांस का बना हुआ नहीं है और न ही इसका कोई आकार है। जब यह दिखाई ही नहीं देता तो इसे पकड़ा कैसे जाए? कोई जान ही नहीं पाता कि यह चाहता क्या है क्योंकि इसके अंदर होता कुछ और है, जबकि कहता कुछ और है। इतना ही नहीं, यह पल में पूर्ण वैरागी होकर सब कुछ छोड़ने को तैयार हो जाता है और फिर पल भर में राज्य प्राप्त कर लेना चाहता है। यह एक पल हँसता है तो दूसरे पल रो देता है। क्षणभर में अपने आप को बहुत बड़ा मानने लगता है। पलक झपकते ही यह लाखों कोस दूर पहुँच जाता है। करोड़ों यत्न करने पर भी यह वश में नहीं आता।

छिपकर शरीर के अंदर बैठा मन उससे जो करवाना चाहे करवा लेता है, संसार में हर कोई उसी के आदेश से सब कुछ करता है:

मुलुक सरीर में भया नवाब मन, लोभ औ मोह देवान जा के।*
अमल† दस दिसि किहा फौज को राखि कै,
काम औ क्रोध सीपाह बाँके॥
पाप तहसील‡ वोसूल§ होने लगी, कुमति खजानची रहे ता के।
*दास पलटू कहै पाँच पच्चीस¶ को, भया अख्यार** बेइमान पाके॥*[21]

अर्थात् मन ही शरीर का स्वामी है और संसार में सब जगह इसी का शासन है। यह शासन कैसा है और मन इसे कैसे चलाता है, इस बारे में उनका कहना है कि लोभ और मोह मन के मंत्री हैं, काम और क्रोध उसके दो रणबाँकुरे योद्धा और दुर्मति इसका ख़ज़ानची है जो इसके ख़ज़ाने में डालने के लिए लोगों से कर के रूप में केवल पाप की वसूली करती है।

---

* **देवान**=मंत्री † **अमल**=शासन, अधिकार ‡ **तहसील**=माल-गुज़ारी
§ **वोसूल**=वसूल ¶ **पाँच**=पाँच इंद्रियाँ; **पच्चीस**=प्रकृतियाँ
** **अख्यार**=अधिकार

आपके कहने का भाव यह है कि मन के लोभ, मोह आदि प्रबल विकारों तथा कपट के दाँव-पेचों के कारण संसार में हर तरफ़ पाप की भयंकर और दु:खदायी लीला ही दिखाई देती है।

वास्तव में ऐसे दुष्ट, धूर्त, सनकी तथा शक्तिशाली शत्रु के साथ टक्कर लेना एक अत्यंत कठिन कार्य है। यह लड़ाई बहुत लंबी है और कई मोर्चों पर लड़नी पड़ती है। मुक्ति और प्रभु प्राप्ति के इच्छुक साधक में मन के साथ लड़ने के लिए दृढ़ता तथा लगन का होना तो आवश्यक है ही, यह जानना भी ज़रूरी है कि यह लड़ाई लड़नी किस तरह है, मन को वश में करने की ठीक युक्ति क्या है।

मन को वश में करने का एकमात्र उपाय: शब्द की साधना

मन को वश में करने के संबंध में सब संतों का यही कहना है कि इसका केवल एक ही उपाय है और वह है एक जीवित सतगुरु की संगति करके उनसे शब्द या नाम का भेद लेना, फिर डटकर उसका अभ्यास करना और मन को उसके साथ जोड़ देना। संत हमें समझाते हैं कि मन जब नाम के साथ जुड़ जाता है और उसे नाम की ध्वनि सुनने में आनंद आने लगता है तो वह धीरे-धीरे संसार से विमुख हो जाता है, उसकी संसार के किसी भी पदार्थ में आसक्ति नहीं रहती। वह निर्लेप हो जाता है। अब वह माया का नहीं बल्कि आत्मा का मित्र होता है जिसका साथी बनाकर उसे संसार में भेजा गया था।

पलटू साहिब ने भी बहुत प्रभावशाली ढंग से हमें समझाया है कि मन पर लगा हुआ इच्छाओं, विकारों तथा जन्म-जन्म के कर्मों का ज़ंग सतगुरु रूपी सिकलीगर से मिले नाम के सान पर चढ़ाकर ही उतारा जा सकता है:

सतगुरु सिकलीगर मिलैं तब छुटै पुराना दाग॥*
छुटै पुराना दाग गड़ा मन मुरचा† माहीं।

* **सिकलीगर (सैकलगर)**=चाकू, छुरी, तलवार आदि को एक ख़ास क़िस्म के पत्थर पर रगड़कर चमकाने वाला। † **मुरचा**=ज़ंग

सतगुरु पूरे बिना दाग यह छूटै नाहीं॥...
जोग जुगत से मलै दाग तब मन का जावै॥[22]

पलटू साहिब ने एक अन्य जगह भी ऐसा ही कहा है कि आत्मा को मनरूपी चादर की मैल धोने की विधि केवल जीवित सतगुरु रूपी धोबी ही सिखा सकता है। हमें यह विधि सीखकर इस चादर को धो लेने में देरी बिलकुल नहीं करनी चाहिए क्योंकि धोबी के न रहने पर हम यह विधि नहीं सीख सकेंगे। हमारी आत्मा अगर निर्मल मन को साथ लिए संसार से विदा होगी तो उसे फिर से यहाँ नहीं आना पड़ेगा:

चलिए चादर ओढ़ि बहुर नहिं भवजल आवै॥
पलटू ऐसा कीजिये मन नहिं मैला होय।
धुबिया फिर मर जायगा चादर लीजै धोय॥[23]

आपने नाम की धुन को आकाश से चू रहा अमृत बताते हुए हमें यही समझाया है कि इस अमृत को पीकर ही हम मन को वश में करके संत बन सकते हैं:

काम औ क्रोध को आगि बिनु जारि कै, महादल मोह मैदान टारा।*
पाप औ पुन्न के भरम को छोड़ि कै, गगन के बीच इक जोति बारा†॥
जीव अमृत पिवै चुवै आकास से, जुक्ति से नाथिया‡ नाग कारा।
दास पलटू कहै संत सो अमर हैं, उलटि कै पकरि तिहुँ काल मारा॥[24]

संत-सतगुरु के उपदेश से जीव जान लेता है कि पुण्यों से मुक्ति नहीं मिल सकती। पुण्य भी आत्मा के बंधन का ही कारण बनते हैं क्योंकि पापों की तरह उनका फल भोगने के लिए भी उसे फिर जन्म लेना पड़ता है,

* **टारा**=भगा दिया † **बारा**=जलाया ‡ **नाथिया**=वश में कर लिया

तब जीव सतगुरु की बताई युक्ति से अपने अंतर के आकाश में नाम की ज्योति जलाता है। उस ज्योति में से निकलने वाली मधुर ध्वनि के अमृत को पीकर मनुष्य मनरूपी काले नाग को वश में कर लेता है जिससे मन के काम, क्रोध, मोह आदि विकार नष्ट हो जाते हैं। जो मनुष्य अपनी चेतना की नीचे और बाहर की ओर बहती धारा को सतगुरु की बताई युक्ति से अंदर और ऊपर की ओर मोड़ लेते हैं, वे नाम से जुड़कर संत बन जाते हैं। वे अमर हो जाते हैं तथा भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों काल की सीमाओं से पार हो जाते हैं। अब यह चर्चा करना ज़रूरी हो जाता है कि वह कौन सा नाम है जिसे संतों ने जीव के लिए मन पर विजय पाने और भवसागर के पार जाने का एकमात्र साधन बताया है।

नाम

जिस नाम को संतों ने आत्मा को भवसागर के पार ले जानेवाली एकमात्र नौका बताया है, उसके संबंध में पलटू साहिब ने कहा है कि नाम अनामी है, निराकार है तथा रंग-रूप से परे है। वह इन बाहर की आँखों से दिखाई नहीं देता। उसे संतजन अंदर की अलौकिक आँख यानी दिव्य दृष्टि से देखते हैं:

जो कोई चाहै नाम तो नाम अनाम है।
लिखन पढ़न में नाहिं निअच्छर काम है॥
रूप कहौ अनरूप पवन अनरेख ते।
अरे हाँ पलटू गैब दृष्टि से सन्त नाम वह देखते॥[25]

इससे अगले पद में उनके वचन हैं:

नाम डोरि है गुप्त कोऊ नहिं जानता।
नि:अच्छर नि:रूप दृष्टि नहिं आवता॥[26]

आपने यह पूरी तरह से स्पष्ट कर दिया है कि नाम आत्मा को परमात्मा से जोड़नेवाली एक गुप्त डोरी है। अनाम कहने का भाव यह है

कि अनेक वर्णात्मक नामों जैसा उसका कोई एक नाम नहीं है। वह वर्ण रहित है, अक्षर रहित है, उसका हमें आँखों से दिखाई दे जानेवाला कोई आकार नहीं है। पवन की तरह वह रेखा रहित है। उसका लिखने-पढ़ने में प्रयोग नहीं हो सकता। पर अगर वह अक्षर रहित और आकार रहित है तो संत उसे देख कैसे लेते हैं? पलटू साहिब का उत्तर है कि वे उसे अपनी बाहरी आँखों से नहीं बल्कि अपनी अंदर की गुप्त आँख यानी दिव्य दृष्टि से देखते हैं।

अब सोचने-समझने की बात यह है कि अगर संतों को वह आंतरिक आँख से दिखाई देता है तो किस रूप में? पलटू साहिब ने उसे एक दीपक बताते हुए कहा है—*दीपक बारा नाम का...॥*[27] इस दीपक को उन्होंने महा दीप कहा है:

गगन के बीच में तेल बाती बिना, दास पलटू महा दीप बारै॥[28]

यहाँ गगन का मतलब हमारे अंदर के आकाश से है। कबीर साहिब ने भी इस दीपक को गैब का दीपक (गुप्त दीपक) कहा है। संतों के इन वचनों से स्पष्ट है कि प्रभु का सच्चा नाम ज्योति स्वरूप है जो अंतर में प्रकाश के रूप में ही दिखाई देता है।

नाम केवल प्रकाश स्वरूप ही नहीं, ध्वनि स्वरूप भी है। संतों को यह अंतर में अपने प्रकाशमय रूप में केवल दिखाई ही नहीं देता बल्कि अपने धुनात्मक रूप में सुनाई भी देता है। पलटू साहिब की वाणी में इसके प्रकाश और ध्वनि दोनों का स्पष्ट उल्लेख किया गया है:

उलटा कूवा गगन में तिस में जरै चिराग॥
तिस में जरै चिराग बिना रोगन बिन बाती।
छ: रितु बारह मास रहत जरतै दिन राती॥
सतगुरु मिला जो होय ताहि की नजर में आवै।
बिना सतगुरु कोउ होय, नहीं वा को दरसावै॥
निकसै एक अवाज चिराग की जोतिहिं माहीं।

ज्ञान समाधी सुने और कोउ सुनता नाहीं॥
पलटू जो कोई सुनै ता के पूरे भाग।
उलटा कूवा गगन में तिस में जरै चिराग॥[29]

हमारे सिर को यहाँ उलटा कूवा कहा गया है। हाथरस के प्रसिद्ध संत तुलसी साहिब ने भी *औंधा कुआ*[30] कहकर उसका वर्णन किया है। सिर को ऐसा इसलिए कहा गया है कि कुएँ का तल नीचे धरती में होता है जबकि सिर का तल ऊपर आकाश में। पलटू साहिब ने हमें बताया है कि हमारे मस्तक रूपी उलटे कुएँ में बिना बत्ती और तेल के एक अलौकिक दीप निरंतर जल रहा है, परंतु सतगुरु से युक्ति जाने बिना अपने मस्तक में जल रहे इस दीपक को कोई नहीं देख सकता। इस दीपक के प्रकाश में से निरंतर एक आवाज़ आ रही है। सतगुरु की बताई युक्ति से ध्यान को भौंहों के मध्य में पूर्णतया एकाग्र करने पर ही इसे सुना जा सकता है।

गुरु नानक देव जी ने भी हमारे अंदर के प्रकाश और ध्वनि का उल्लेख किया है। आपका कहना है कि हमारे अंतर में दिव्य ज्योति जल रही है जिसमें से निरंतर ध्वनि निकल रही है। उस ध्वनि को सुनने से आत्मा की परमात्मा से लिव लग जाती है:

अंतर जोत निरंतर बाणी साचे साहिब सिउ लिव लाई॥[31]

इस अलौकिक नाम को भिन्न-भिन्न संतों द्वारा दिए गए नामों में से अधिकांश इसके ध्वनि पक्ष पर ही आधारित हैं। ऐसा इसलिए कि इसका प्रकाश आत्मा को अंतर में ऊपर जाने का मार्ग दिखाता तो है, पर उस मार्ग पर चलाती इसकी ध्वनि ही है, वही इसे ऊपर की ओर खींचती है। इसे अनेक नाम दिए गए हैं जैसे धुन, धुनात्मक नाम, अनहद नाद, आकाशवाणी, दिव्य ध्वनि, वाणी, कीर्तन, हरि-कीर्तन, अकथ कथा आदि। इन सबका आधार इसका ध्वनि-पक्ष ही है। इसलिये यह स्वाभाविक है कि संतों ने ऐसे नामों में से सबसे अधिक प्रयोग किये जानेवाले नाम को

शब्द कहा है। पलटू साहिब की वाणी में अकसर एक ही पद में नाम और शब्द दोनों का प्रयोग पाया जाता है।

उपनिषदों में इसे नाद तथा अनाहत नाद कहा गया है। नाद का अर्थ ध्वनि है और अनाहत नाद वह ध्वनि है जो आघात के बिना यानी दो चीज़ों के आपस में टकराए बिना पैदा हुई है। अरब और ईरान में हुए संतों के द्वारा दिए गए नामों में से कलमा, कलाम, कलामे-इलाही, बाँगे-आसमानी और निदाए-सुलतानी विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। कलमा का अर्थ शब्द या लफ़्ज़ भी है, वाक्य और वचन भी। कलाम का अर्थ वाणी है और कलामे-इलाही का अर्थ है प्रभु की वाणी। बाँग का अर्थ है आवाज़ और बाँगे-आसमानी का अर्थ है आसमान से आ रही आवाज़। निदा का अर्थ किसी को बुलाने के लिए बोला गया कोई शब्द है, जैसे ओ, ए, अरे आदि और सुलतान का अर्थ राजा या शासक है। इस तरह निदाए-सुलतानी का अर्थ सारी सृष्टि के स्वामी परमात्मा द्वारा आत्मा को अपने पास बुलाने के लिए बोला गया शब्द है। हाथरस के संत तुलसी साहिब ने भी अपनी एक ग़ज़ल दिल का हुजरा साफ़ कर में एक जिज्ञासु तक़ी से कहा है कि मस्तक में ध्यान टिकाकर उस आवाज़ को सुनो जो प्रभु के धाम से तुम्हें बुलाने के लिए आ रही है:

कुदरती काबे की तू महराब में सुन ग़ौर से।
आ रही धुर से सदा† तेरे बुलाने के लिये॥*[32]

बाइबल में इस दिव्य ध्वनि को दिए गए नामों में से एक वर्ड (Word) है, जिसका अर्थ है प्रभु का शब्द। प्राचीन यूनान में हुए संत-महात्माओं ने इसे *लॉगॉस* (Logos) कहा है।

जीवित सतगुरु के बताए वर्णात्मक नाम के सुमिरन अर्थात् जाप से अभ्यासी दुनिया में फैले अपने मन को आँखों के ऊपर समेटता है। भौंहों के बीच में मन के एकाग्र हो जाने तथा उसके साथ ही चेतना के

---

* **धुर**=निजघर † **सदा**=आवाज़

सिमटकर वहाँ इकट्ठी हो जाने पर उसे अपने अंतर में धुनात्मक नाम सुनाई देता है जो उसे ऊपर की ओर खींचता है। इस तरह वर्णात्मक नाम धुनात्मक नाम से जुड़ने का साधन तो है परंतु धुनात्मक नाम ही आत्मा को भवसागर के पार ले जाता है। धुनात्मक नाम ही आत्मा को परमात्मा से मिलाता है, वर्णात्मक नाम नहीं। कुछ संतों ने अपनी वाणी में यह बात खोलकर समझाई है। उदाहरण के लिए स्वामीजी महाराज के सारबचन के दसवें वचन का पहला शब्द है *नाम निर्णय करूँ भाई। दुधा विधि भेद बतलाई॥*[33] इसी शब्द की आठवीं पंक्ति है, *नाम वर्णात्मक गाया। नामी * धुनआत्मक पाया॥*[34] इस पंक्ति का अर्थ यह है कि जिज्ञासु वर्णात्मक नाम का सुमिरन करके धुनात्मक नाम से जुड़ता है और फिर उसके द्वारा वह उस प्रभु को पा लेता है। पलटू साहिब ने वर्णात्मक नाम और धुनात्मक नाम के संबंध का इतने स्पष्ट रूप में तो उल्लेख नहीं किया है, परंतु उनकी वाणी में कहीं-कहीं इसका संकेत अवश्य मिल जाता है। उदाहरण के लिए उनकी वाणी है—*नाम नाम सब कहत है... ॥*[35]

संतों का प्यारा यह शब्द जिसे ध्वनिमय प्रकाश (Ringing Radiance) भी कहा जाता है, परमात्मा की एकमात्र पहचान है। परमात्मा अपने भक्तों के अंतर में ध्वनि और प्रकाश के रूप में प्रकट होता है। इसी रूप में आकर वह उन्हें अपने अस्तित्व का बोध कराता है। आम तौर पर जैसे किसी को उसकी पहचान के लिए कोई नाम दिया जाता है, इसी प्रकार संसार की भिन्न-भिन्न भाषाओं में परमात्मा को उसके गुणों के आधार पर अनेक नाम दिए गए हैं। परंतु उसने स्वयं अपनी केवल एक ही पहचान रखी है और वह पहचान है उसका ध्वनिमय तथा प्रकाशमय रूप जिससे मनुष्य को उसके अस्तित्व का बोध होता है। इसी लिए पलटू साहिब ने उसके इस रूप को *निज नाम* भी कहा है: *राखु परवाह तू एक निज नाम की*[36]। सूफ़ी संतों ने इसे उसका ज़ाती नाम कहा है,

* नामी=नाम वाला

और अरबी भाषा के ज़ाती शब्द का अर्थ निज या अपना ही है। उन्होंने इस्मे-आज़म (महान नाम) कहकर भी इसका वर्णन किया है।

अन्य संतों की तरह पलटू साहिब ने भी शब्द को अनादि बताते हुए इसे सबका आदि, सबका मूल कारण कहा है:

आदि अनादि सबद है भाई, सबदै मूल बिचारा।[37]

अपने इसी शब्द में पलटू साहिब ने कहा है कि जिस प्रकार परमात्मा शब्द-स्वरूप है, उसी प्रकार उसकी अंश आत्मा भी शब्द रूप है। स्पष्ट है कि अन्य संतों की तरह पलटू साहिब भी आत्मा, शब्द तथा परमात्मा, तीनों को एक मानते हैं। उनके लिए भी यह एक अनुभव सिद्ध सत्य है। उनके वचन हैं:

सबदै मूल है सबदै साखा, सबदै सबद समाना।
पलटूदास जो सबद बिबेकी, सबद के हाथ बिकाना॥[38]

अर्थात् शब्द ही मूल है और शब्द ही शाखा, वही परमात्मा है और वही उसमें से निकली हुई आत्मा। गुरु से शब्द का परिचय प्राप्त कर चुकी जो आत्मा अपने आप को शब्द के हवाले कर देती है यानी दृढ़ता से शब्द के अभ्यास में लग जाती है, वह अंत में परमात्मा में जा समाती है।

आत्मा का शब्द में मिलकर परमात्मा में जा समाना बिलकुल वैसी ही बात है जैसी पानी की एक बूँद का लहर में समाकर समुद्र में जा समाना। आत्मा के शब्द में समाने के संबंध में पलटू साहिब का कथन है:

सुरत सब्द के मिलन में मुझ को भया अनंद॥
मुझ को भया अनंद मिला पानी में पानी।[39]

मनुष्य जन्म में लूटने की चीज़ केवल नाम

संत नाम को ही आवागमन से मुक्ति तथा प्रभु प्राप्ति का एकमात्र साधन मानते हैं। इसलिए वे मन को नश्वर संसार की ओर से हटाकर अविनाशी

नाम के अभ्यास में लगाने पर बहुत बल देते हैं। पलटू साहिब ने अपनी वाणी में जगह-जगह इसका वर्णन किया है। इसका एक उदाहरण है:

राखु परवाह तू एक निज नाम की, खलक मैदान में बाँध टाटी।*
मीर उमराव† दिन चारि के पाहुना, छोड़ि घर माहिं दौलत्त हाथी॥
पकरि ले सबद जिन तोहि पैदा किया, और सब होइँगे खाक माटी।
दास पलटू कहै देखु संसार गति, बिना निज नाम नहिं कोई साथी॥[40]

संसार के पदार्थों की नश्वरता और नाम की नित्यता का उल्लेख करते हुए आप कहते हैं कि ऐ जीवात्मा! तू संसार की ओर मत देख, एक नाम की परवाह कर। बड़े-बड़े धनी-मानी लोग भी यहाँ केवल कुछ ही दिनों के मेहमान हैं। अंत में सभी को सब कुछ यहीं छोड़ जाना है। *पकरि ले सबद जिन तोहि पैदा किया,* इसलिए हमें अपना ध्यान नाम में लगाना है। क्योंकि केवल नाम ही सदा आत्मा का साथ देता है। इस पंक्ति में इस तथ्य की ओर स्पष्ट संकेत है कि धुनात्मक नाम यानी शब्द स्वयं सृष्टिकर्ता परमात्मा ही है।

आप एक और जगह कहते हैं:

लहना है सतनाम का जो चाहै सो लेय॥...
ताकै कहा गँवार मोट‡ भर बाँध सिताबी§।
लूट में देरी करै ताहि की होय खराबी॥
बहुरि न ऐसा दाँव नहीं फिर मानुष होना।[41]

इस वाणी में हमें प्यार से समझाया गया है कि इस मनुष्य जन्म में लूटने की चीज़ केवल प्रभु का सच्चा नाम है। देखते क्या हो? जल्दी से

* **टाटी**=परदा † **मीर उमराव**=धनी-मानी, बड़े लोग ‡ **मोट**=गठरी
§ **सिताबी**=शीघ्रता

नाम की लूट से अपनी गठरी भर लो। देर करोगे तो तुम्हारी बहुत दुर्गति होगी। यह मनुष्य चोला फिर जल्दी तुम्हारे हाथ नहीं आएगा।

नाम की महिमा करते हुए पलटू साहिब ने इसको बहुत मधुर कहा है, मीठ बहुत सतनाम है। आप कहते हैं कि जिसके दिल में शब्द का तीर चुभ जाता है अर्थात् जो इसके मधुर संगीत का रसपान कर लेता है, उसके लिए राजपाट का भी कोई महत्त्व नहीं रह जाता और वह एक फ़क़ीर जैसा निर्लेप जीवन व्यतीत करने लगता है:

पलटू जिन के सबद का लगा कलेजे तीर।
सबद छुड़ावै राज को सबदै करै फकीर॥[42]

एक अन्य पद में उन्होंने कहा है कि जो शब्द का अभ्यास करते हैं उनको सारा संसार तुच्छ जान पड़ता है:

जिन्ह ने सबद बिचारिया, तिन्ह तुच्छ लगै संसार।[43]

नाम को पाना अत्यंत कठिन

इस मुक्तिदाता धुनात्मक नाम को पाना और इसे अपने अंतर में प्रकट करना कोई आसान काम नहीं है। नाम की प्राप्ति के लिए कठोर साधना करनी पड़ती है, कड़ा परिश्रम करना पड़ता है। नामदान के समय सतगुरु जीव को अंतर में इसके साथ संबंध जोड़ने की युक्ति बताते हैं। उनके दिए वर्णात्मक नाम का लगन के साथ जाप करने तथा गुरु की बताई रहनी अपनाने से ही जीव इसे प्राप्त करता है। पलटू साहिब ने हमें चेतावनी देते हुए कहा है:

नाम नाम सब कहत है नाम न पाया कोय॥
नाम न पाया कोय नाम की गति है न्यारी।
वही सकस को मिलै जिन्होंने आसा मारी॥
हौं को करै खमोस होस ना तन को राखै।
गगन गुफा के बीच पियाला प्रेम का चाखै॥

बिसरै भूख पियास जाय मन रँग में लागै।
पाँच पचीस रहे वार संग में सोऊ भागै॥
आपुइ रहै अकेल बोलै बहु मीठी बानी।
सुनतै अब वह बनै कहा मैं कहौं बखानी॥
पलटू गुरु परताप तें रहै जगत में सोय।
नाम नाम सब कहत है नाम न पाया कोय॥[44]

अर्थात् प्रभु का नाम जपने की बात तो सब कहते हैं परंतु अपनी मर्ज़ी का या किसी का बताया कोई भी नाम जप लेने से जिज्ञासु को प्रभु का सच्चा नाम नहीं मिल जाता। वह अत्यंत दुर्लभ है और उसकी पहुँच एकदम न्यारी है; वह भक्त को सचमुच प्रभु के धाम में पहुँचा देती है जब कि अन्य प्रचलित साधन उसे वहाँ क़तई नहीं पहुँचा सकते। उस नाम को पाने के लिए अपने अहंकार पर अंकुश लगाना पड़ता है, तरह-तरह के सांसारिक पदार्थों की लालसा को क़ाबू में रखना पड़ता है और चेतना को शरीर में से समेटकर शरीर को सुन्न करने का अभ्यास करना पड़ता है। *गगन गुफा* में टिककर अर्थात् शरीर के नौ द्वारों के रास्ते सारे संसार में फैले हुए मन को समेटकर मस्तक में भौंहों के बीच में एकाग्र करके ही साधक वहाँ गूँज रही नाम की ध्वनि को सुनकर प्रभु-प्रेम का रस चख पाता है। जब मन नाम के रंग में रँग जाता है तो अभ्यासी को भूख-प्यास भी भूल जाती है। तब उसका ध्यान पाँच तत्त्वों और उनकी पच्चीस प्रकृतियों वाले इस शरीर को ख़ाली करके अंदर के रूहानी मंडलों में ऊपर जाने की ओर रहता है, केवल नाम ही उस चढ़ाई में उसका साथी होता है। तब वह एकांत में बैठकर अंदर की अत्यंत मधुर ध्वनि सुनना ही पसंद करता है। अंदर का दिव्य संगीत सुनाई तो देता है, लेकिन उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। सतगुरु के प्रताप से जो गुरमुख अभ्यासी संसार की ओर से सो जाते हैं परंतु प्रभु की ओर से जाग उठते हैं, नाम उन्हीं को मिलता है। सतगुरु की कृपा के बिना नाम को कोई नहीं पा सकता।

सुरत-शब्द योग

वास्तव में आत्मा को अंतर में शब्द के साथ जोड़ना ही सब संतों के उपदेश का सार है। सभी संतों ने कहा है कि शब्द के साथ जुड़कर ही सुरत अर्थात् आत्मा परमात्मा से मिल सकती है। इसी लिए संतों के मार्ग को शब्द-योग मार्ग और सुरत-शब्द योग भी कहा जाता है। पलटू साहिब ने अपनी वाणी में स्थान-स्थान पर आत्मा के शब्द से जुड़कर उसमें समाने और परमात्मा को पा लेने का उल्लेख किया है:

सुरति सुहागिनि उलटि कै मिली सबद में जाय॥
मिली सबद में जाय कन्त को बसि में कीन्हा।[45]

संत हमें समझाते हैं कि मन और आत्मा का स्थान आँखों के मध्य में है। यहाँ से नीचे उतरकर मन शरीर में तथा शरीर के नौ द्वारों के रास्ते बाहर संसार में फैला हुआ है। उसके साथ बँधी होने के कारण आत्मा की भी यही दशा है। जब मनुष्य सतगुरु के दिए वर्णात्मक नाम के सुमिरन से मन को संसार की ओर से समेटकर भृकुटि मंडल यानी मस्तक में भौंहों के बीच तीसरे तिल पर एकाग्र करता है तो आत्मा भी साथ ही सिमटकर वहीं इकट्ठी हो जाती है। वहाँ इकट्ठी होकर वह शब्द को पकड़ती है, उससे जुड़ती है और उसमें विलीन होकर परमात्मा को पाती है। ऊपर दी गई पंक्तियों में पलटू साहिब ने इसी प्रक्रिया की ओर संकेत किया है। *उलटि कै* का अर्थ अपनी चेतना के प्रवाह की दिशा को बाहर से अंदर की तथा नीचे से ऊपर की ओर पलटना है। पलटू साहिब ने समझाया है कि ऐसा करके आत्मा शब्द में विलीन होकर परमात्मा रूपी अपने पति को रिझा लेती है और सुहागिन हो जाती है। एक अन्य जगह पलटू साहिब ने निजी अनुभव का वर्णन इन शब्दों में किया है:

पलटू मैं भजनै भया रही न दूजी रेख।[46]

अर्थात् जब मैं नाम भक्ति में लीन हो गया तो द्वैत मिट गया, मैं परमात्मा में समाकर उससे एक हो गया।

संत, फ़क़ीर और सतगुरु

संतों की भाषा में संत उस महात्मा को कहा जाता है जिसने प्रभु को पा लिया हो और प्रभु में समाकर उससे एक हो गया हो। संत को अरबी में फ़क़ीर और फ़ारसी में दरवेश कहते हैं। पलटू साहिब ने तीनों शब्दों का प्रयोग इस अर्थ में किया है। ऐसे महात्माओं को उन्होंने हरिजन भी कहा है। केवल एक संत ही सतगुरु अर्थात् सच्चा गुरु होता है क्योंकि जिज्ञासु को मुक्ति तथा प्रभु-प्राप्ति का सच्चा मार्ग केवल वही दिखा सकता है।

पलटू साहिब ने बार-बार संत और परमात्मा की एकरूपता का उल्लेख किया है। आपका कथन है—*संत औ राम को एक कै जानिये*[47], आपने स्पष्ट कर दिया है कि दोनों को अलग-अलग केवल इसलिए समझा जाता है कि संत का शरीर होता है और परमात्मा का शरीर नहीं है: *दोनों एक सरीर देखत कै दुइ धरौ*[48]। आपने कहा है कि परमात्मा स्वयं ही संत का रूप धारण करके जीवों को अपनी भक्ति का सही रास्ता दिखाने का कार्य करता है:

संत रूप अवतार आप हरि धरि कै आये।
भक्ति करे उपदेस जगत को राह चलाये॥[49]

पलटू साहिब ने भी अन्य संतों की तरह इस बात पर बहुत बल दिया है कि मनुष्य को संत की अवस्था वक़्त के सतगुरु द्वारा बख़्शे नाम के अभ्यास से ही प्राप्त होती है। जो भी महात्मा इस अवस्था में पहुँचे वे सभी अन्य मार्ग छोड़ सहज मार्ग भाव शब्द मार्ग पर चले थे:

दास पलटू कहै राह सब छोड़ि कै,
सहज की राह इक संत काढ़ी॥[50]

एक अन्य पद में पलटू साहिब ने कहा है कि संत का दर्जा प्राप्त करनेवाले सब साधक शब्द मार्ग के ज्ञान का अस्त्र लेकर ही परमार्थ के युद्धक्षेत्र में उतरते हैं। उन्होंने ध्यान को शरीर के नौ दरवाज़ों की ओर

से हटाकर दसवें पर टिका लिया होता है जिससे अंतर में सदा गूँजते रहनेवाला शब्द प्रकट हो जाता है और अंत में उन्हें परमधाम का सिंहासन मिल जाता है, वे परमपद पा लेते हैं:

संत चढ़े मैदान पर तरकस बाँधे ज्ञान॥...
नव दरवाजे छोड़ि सुरत दसएँ पर दीन्हा॥
अनहद बाजै तूर अटल सिंहासन पाया।[51]

सतगुरु ख़ुद शब्द का अभ्यास करके शब्द-स्वरूप हो जाते हैं और वे जीवों को प्रभु-प्राप्ति तथा आवागमन से मुक्ति के लिए नाम का अभ्यास करने की ही शिक्षा देते हैं। वे जिज्ञासु को नाम मार्ग पर चलने की प्रेरणा ही नहीं देते, बल्कि उसे इस मार्ग का पथिक भी बना देते हैं और पूरी यात्रा के दौरान यानी आरंभ से अंत तक अपने प्रकाशमय स्वरूप में उसके साथ रहते हैं, उसका मार्गदर्शन करते हैं:

भव सिंधु के पार जो चाहिये जान को,
केवट भेदी तलास कीजै।
घाट औ बाट के भेद का महरमी,
उसी की नाव पर पाँव दीजै॥
सबद की नाव पर चढ़ैं जो ध्याय कै,
जाय वहि पार नहिं पाँव भींजै।
दास पलटू कहै कौन मल्लाह है,
पार भव सिंधु तब उतरि लीजै॥[52]

इस पद में परमार्थी को समझाया गया है कि अगर तुम भवसागर के पार जाना चाहते हो तो ऐसा केवट ढूँढ़ो जो रूहानी सफ़र का पूरा जानकार हो, जिसने ख़ुद यह सफ़र तय किया हो और निजी अनुभव के आधार पर जानता हो कि जिज्ञासु के रूहानी सफ़र का रास्ता कहाँ से शुरू होता है

और कैसा है अर्थात् उसमें कितने पड़ाव आते हैं, कितनी मंज़िलें आती हैं, सफ़र के दौरान पथिक को क्या-क्या अनुभव होते हैं और किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। ऐसे केवट के पास शब्द की नाव होती है। जो ध्यान को स्थिर करके शब्द की नाव पर सवार हो जाता है और अंतर में शब्द का सहारा लेता है वही भवसागर को पार करता है। इस सागर के जल से उसके पैर नहीं भीगते यानी वह इसके प्रलोभनों में नहीं फँसता। अगर पहले ठीक तरह से पता लगा लोगे कि केवट कैसा है, तब तो तुम अवश्य भवसागर के पार पहुँच जाओगे, आवागमन के चक्कर से मुक्त हो जाओगे, प्रभु को पा लोगे।

संसार में सतगुरुओं का आगमन जीवों को भवसागर के पार पहुँचाने के लिए ही होता है। वे परमात्मा के अवतार होते हैं:

पर स्वारथ के कारने संत लिया औतार॥
संत लिया औतार जगत को राह चलावैं।
भक्ति करैं उपदेस ज्ञान दे नाम सुनावैं॥
प्रीत बढ़ावैं जक्त में धरनी पर डोलैं।
कितनौ कहै कठोर बचन वे अमृत बोलैं॥
उनको क्या है चाह सहत हैं दुःख घनेरा।
जिव तारन के हेतु मुलुक फिरते बहुतेरा॥
पलटू सतगुरु पाय के दास भया निरवार।*
पर स्वारथ के कारने संत लिया औतार॥[53]

संत-सतगुरु जीवों के कल्याण के लिए आते हैं, उन्हें मुक्ति की राह की जानकारी देते हैं। वे प्रभु-भक्ति का उपदेश देते हैं, लोगों को समझाते हैं कि प्रभु का असली नाम क्या है। वे उस नाम यानी शब्द को सुनने की युक्ति सिखाते हैं। संतजन स्वयं स्थान-स्थान पर जाकर प्रभुप्रेम तथा

* **निरवार**=मुक्त

मानव प्रेम के दिव्य संदेश को लोगों के हृदय तक पहुँचाने का कार्य करते हैं और दूसरों के कठोर से कठोर वचनों का उत्तर भी बहुत मीठी वाणी में देते हैं। वे अपने लिए कुछ नहीं चाहते, वे तो दूसरों के भले के लिए बड़े से बड़ा कष्ट सहने को तैयार होते हैं। जीवों को भवसागर से तारने के लिए वे दूर-दूर की यात्रा करते हैं। सतगुरु को पाकर इस दास ने भी भवबंधन से छुटकारा पा लिया है।

केवल सतगुरु ही नाम के दाता होते हैं। पलटू साहिब ने कहा है कि संतों को नाम से तथा नाम को संतों से गहरा प्यार होता है। किसी संत का आश्रय लिए बिना जिज्ञासु नाम तक नहीं पहुँच सकता:

संत सनेही नाम है नाम सनेही संत॥
नाम सनेही संत नाम को वही मिलावैं।
वे हैं वाकिफकार मिलन की राह बतावैं॥
जप तप तीरथ बरत करै बहुतेरा कोई।
बिना वसीला संत नाम से भेंट न होई॥
कोटिन करै उपाय भटक सगरौ से आवै।*
संत दुवारे जाय नाम को घर तब पावै॥
पलटू यह है प्रान पर आदि सेती औ अंत।
संत सनेही नाम है नाम सनेही संत॥[54]

संतों का नाम के साथ और नाम का संतों के साथ गहरा प्यार होता है। वे स्वयं नाम से जुड़े होते हैं, इसलिए दूसरों को उससे जुड़ने की विधि सिखाते हैं। जीव जप-तप, तीर्थयात्रा, व्रत आदि कितने ही शुभ कर्म क्यों न कर ले, कितने ही मठ और आश्रमों के चक्कर क्यों न काट ले, परंतु संत की शरण लिए बिना वह नाम से जुड़ नहीं सकता, नाम उसके अंदर प्रकट नहीं हो सकता। सतगुरु की शरण ले लेने पर वह अपने शरीर के अंदर

* **सगरौ से**=सबसे

ही नाम को पा लेता है। पलटू साहिब कहते हैं कि यह नाम प्राणों से परे है, यह सृष्टि के आरंभ से चला आ रहा है और अंत तक चलता रहेगा।

संतों की नम्रता

संतों का सर्वश्रेष्ठ गुण नम्रता है। वे अहंकार से अछूते हैं। संतों की पहुँच प्रभु के धाम तक है क्योंकि वे प्रभु को पा चुके हैं, उससे अभेद हो चुके हैं। अन्य कई संतों की तरह पलटू साहिब ने भी अपनी वाणी में इस अवस्था को प्राप्त कर लेने का वर्णन किया है। उदाहरण के लिए आपने एक पद में अपने को अनादि, अनंत तथा सर्वव्यापक बताते हुए अंत में कहा है कि नर देह धारण करने से परमात्मा के दो रूप हो गए हैं, एक कुल दुनिया के मालिक परमात्मा का और दूसरा उसके दास पलटू का:

पलटू देह के धरे से वे साहिब हम दास।
आदि अंत हम हीं रहे सब में मेरो बास॥[55]

आपने कहा है कि प्रलय करोड़ों युगों से होती रही है और हर बार प्रलय करनेवाला मैं ही रहा हूँ:

कोटिन जुग परलय गई हमहीं करनेहार॥[56]

परंतु किसी संत की वाणी के ऐसे अंश पढ़-सुनकर हमें यह नहीं समझना चाहिए कि यह उसका अहंकार बोल रहा है। संत अहंकार से कोसों दूर होते हैं, वे नम्रता के पुंज होते हैं। परमात्मा अनादि है, अनंत है। वह सृष्टि का रचयिता और स्वामी है, सर्वव्यापक है। वह परम चेतन तथा आनंद-स्वरूप है। उसमें समाकर उससे एक हो जाने का और अपने अलग अस्तित्व का बोध खो देने का अनुभव कैसा होता है, यह कल्पना करना भी सर्वथा असंभव है। बौद्धिक स्तर पर केवल इतना ही समझा जा सकता है कि संसार में सक्रिय होने और हमारा मार्गदर्शन करने के लिए संत-सतगुरु जब फिर से हमारे स्तर पर आ जाते हैं तो मौज के क्षणों में

उनके मुख से कभी ऐसी वाणी फूट पड़ती है जो प्रभु-प्राप्ति के इच्छुक जीवों के लिए प्रेरणा का स्रोत बन जाती है। परंतु प्रभु से एक हो जाने के बाद भी वे कभी यह नहीं भूलते कि यदि उन्होंने परमात्मा को पा लिया है तो अपनी बुद्धि तथा ज्ञान के बल से नहीं, बल्कि अपने सतगुरु की अपार कृपा और उनकी दया-मेहर से। पलटू साहिब ने स्पष्ट कहा है:

ताकिनि तनिक कटाच्छ भक्ति भूतल उर जागी।*
स्वस्ता† मन में आई जगत की भ्रमना भागी॥
भक्ति अभय पद दीन्ह सनातन मारग वा की।[57]

अर्थात् जब सतगुरु ने मुझ पर तनिक-सी दया दृष्टि डाली तो मेरे हृदय की धरती में भक्ति-भावना का बीज फूट पड़ा। मन में स्थिरता आ गई और उसका संसार में भटकना बंद हो गया। भक्ति ने मुझे परमधाम में पहुँचा दिया जहाँ किसी भी प्रकार का कोई भय नहीं है। सतगुरु का बताया हुआ भक्ति का यही मार्ग नित्य और सनातन है जो अनादि काल से चला आ रहा है।

जिज्ञासुओं को भक्ति करने की ठीक विधि का ज्ञान सतगुरु से मिलता है पर सतगुरु से उसका मिलाप प्रभु की दया से ही होता है। इस तरह सतगुरु के माध्यम से वास्तव में परमात्मा ही दयापूर्वक जिज्ञासु को भक्ति दान देता है, अपने नाम का अनमोल रत्न प्रदान करता है। इसी बात को ध्यान में रखकर पलटू साहिब विनोदपूर्ण ढंग से बड़ी नम्रता के साथ कहते हैं कि मैं तो बड़ा पापी था, इस योग्य नहीं था कि भगवान मुझे अपनी भक्ति देता पर मेरे अलावा एक और पलटू भी था जो सचमुच धर्मात्मा था। प्रभु ने ग़लती से मुझे वह दूसरा पलटू समझ लिया और इस धोखे में अपनी भक्ति उसके बजाय मुझे दे दी:

---

* **ताकिनि**=देखा † **स्वस्ता**=स्थिरता

पलटू मैं पापी बड़ा भूल गया भगवान।
दूसर पलटू इक रहा भक्ति दई तेहि जान॥[58]

अन्य संतों की तरह पलटू साहिब ने भी अपने महान कार्यों का श्रेय प्रभु या अपने सतगुरु को दिया है:

ना मैं किया न करि सकौं, साहिब करता मोर।
करत करावत आपु है, पलटू पलटू सोर॥[59]

अर्थात् मैंने न कुछ किया है और न ही कर सकता हूँ। मेरा मालिक परमात्मा सब कुछ ख़ुद ही करता और करवाता है पर ज़ोरदार चर्चा पलटू की हो जाती है, यश पलटू को मिल जाता है:

चारि बरन को मेटि कै, भक्ति चलाया मूल।
गुरु गोबिंद के बाग में, पलटू फूला फूल॥[60]

अर्थात् चारों वर्णों में कोई अंतर न करते हुए मैंने जो सबको सच्ची भक्ति की शिक्षा दी है, वह सतगुरु की दया-मेहर का ही फल है। यह पलटू संसार के जंगल में अपने आप उगा हुआ कोई फूल नहीं है; यह तो सतगुरु गोबिन्द साहिब जी के परिश्रम से उनके रूहानियत के बाग़ में खिले हुए फूलों में से एक है।

संतों के अन्य महान गुण

संत धैर्यवान, शीलवान, दयालु, क्षमाशील और मधुरभाषी होते हैं। उनके स्वभाव की शीतलता बताते हुए पलटू साहिब ने कहा है:

सीतल चन्दन चन्द्रमा तैसे सीतल संत॥
तैसे सीतल संत जगत की ताप बुझावैं।
जो कोइ आवै जरत मधुर मुख बचन सुनावैं॥
धीरज सील सुभाव छिमा ना जात बखानी।

कोमल अति मृदु बैन बज्र को करते पानी॥
रहन चलन मुसकान ज्ञान को सुगंध लगावैं।
तीन ताप मिट जाय संत के दर्सन पावैं॥
पलटू ज्वाला उदर की रहै न मिटै तुरंत।*
सीतल चन्दन चन्द्रमा तैसे सीतल संत॥[61]

संतों की वाणी में बहुत मिठास होती है, उससे वज्र के समान कठोर हृदय भी पिघल जाता है। उनकी रहनी, उनकी वाणी, उनके व्यवहार और उनकी मुसकान में रूहानियत की सुगंध होती है। केवल उनकी मधुर वाणी सुनने से ही नहीं बल्कि उनके दर्शन से भी दु:खी व्यक्ति के मन को शांति मिलती है। वह अपने हर प्रकार के कष्ट को भूल जाता है, उसका ध्यान अपनी इच्छा-तृष्णाओं की भूख की ओर से भी एकदम हट जाता है। चंदन और चंद्रमा की तरह संत मनुष्य को ठंडक पहुँचाते हैं।

अहंकार का त्याग तथा शरण

अहं तथा अहंकार

पलटू साहिब ने कहा है कि जब मैंने सतगुरु की शरण ले ली तो उन्होंने *अपनी सरन की लाज*[62] को अपना धर्म समझते हुए मुझे संत के ऊँचे पद पर पहुँचा दिया। नम्रता के पुंज अन्य सभी संतों का भी यही कहना है। स्पष्ट है कि प्रभु को पाने के लिए साधक को सतगुरु की शरण लेनी पड़ती है। परंतु शरण लेने के लिए हमें अपने अंह और अहंकार को मिटाना पड़ता है। इसलिए शरण लेने के अर्थ के बारे में कुछ लिखने से पहले अहंकार को त्यागने का अभिप्राय स्पष्ट करना आवश्यक जान पड़ता है।

अहं तथा अहंकार दोनों संस्कृत के शब्द हैं। अहं का अर्थ मैं तथा अहंकार का अर्थ अभिमान या घमंड है। हिंदी में अहं शब्द का प्रयोग मनुष्य के अपने अस्तित्व के ज्ञान या धारणा के अर्थ में किया जाता है।

---

* **ज्वाला...की**=भूख यानी आशा-तृष्णा की अग्नि

अहं या अहंभाव अर्थात् मैं का भाव हम में बचपन में भी होता है और यह हमारे संसार में रहने तथा अन्य सबके बीच अपने लिए उचित स्थान प्राप्त करने के लिए आवश्यक है। हर बात में अपनी इच्छा पूरी करने की हमारी प्रवृत्ति इसी की निशानी है और यही अहंकार का मूल है। अहंकार अहं का ही बड़ा और बिगड़ा हुआ रूप है। यह हमारी ख़ुदी को दूसरों से बड़ा समझने और सिद्ध करने या उनसे बड़ा बनने का यत्न करने की प्रवृत्ति के रूप में प्रकट होता है। किसी पर अपनी इच्छा थोपने का कारण आमतौर पर हमारी यह प्रवृत्ति ही होती है। व्यावहारिक दृष्टि से अहं तथा अहंकार में थोड़ा-सा ही अंतर है और यही कारण है कि अहंकार के अर्थ में अकसर अहं तथा अहंभाव शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

अहंकार अनर्थ की जड़ है। इसके वश में हुआ मनुष्य बड़े से बड़ा पाप करने में भी संकोच नहीं करता। ख़ुद को या अपने धर्म, जाति अथवा देश को सबसे बड़ा या सर्वाधिक शक्तिशाली सिद्ध करने के लिए मनुष्य लाखों की संख्या में लोगों की हत्या करने से भी नहीं हिचकिचाता। गहराई में जाकर देखें तो पता चलेगा कि संसार में समय-समय पर और स्थान-स्थान पर हुए सभी युद्धों का मूल कारण किसी का अहंकार ही रहा है। संत अहंकार को मन के पाँच विकारों में सबसे अधिक शक्तिशाली बताते हैं और कहते हैं कि यह मनुष्य से सबसे अंत में छूटता है। मनुष्य दूसरे किसी मनोविकार पर विजय पा ले तो उसका अहंकार और अधिक प्रबल हो जाता है। अहंकार की मनुष्य पर जकड़ कितनी दृढ़ है, यह पलटू साहिब ने हमें बड़े प्रभावशाली ढंग से समझाया है:

मान बड़ाई कारने पचि मूआ संसार॥
पचि मूआ संसार जती जोगी सन्यासी।
उनहूँ को है चाह गुफा के भीतर बासी॥
सिद्ध सिद्धई करै पर्भुता कारन जाई।

गोड़ धरावन हेतु महंत उपदेस चलाई॥*
राजा रंक फकीर फिरै जो खाक लगाये।
सब के मन में चाह है खुसी बड़ाई पाये॥
पलटू हरि के भक्त से गई पर्भुता हार।
मान बड़ाई कारने पचि मूआ संसार॥[63]

अर्थात् मान-बड़ाई पाने के लिए संसार के लोग बहुत कठोर परिश्रम करते हैं। घरबार छोड़कर गुफा में रहनेवाले यति, योगी और संन्यासी भी मान-बड़ाई पाने की इच्छा रखते हैं। गौरव की प्राप्ति के लिए सिद्ध अपनी सिद्धता दिखाते हैं, अपनी करामाती शक्तियों का प्रदर्शन करते हैं। मठाधीश लोगों से पाँव छुआने के लिए जगह-जगह धर्मोपदेश देना आरंभ कर देते हैं। जो राजा होकर भिखारी या फ़क़ीर बने शरीर पर भस्म लगाए घूमते फिरते हैं, उनके मन में भी यह इच्छा होती है कि उनकी बड़ाई हो जिससे उन्हें ख़ुशी मिले। परंतु प्रभु के सच्चे भक्तों के आगे मान-बड़ाई की इच्छा हार मान लेती है; उन्हें तो केवल प्रभु से मिलाप की इच्छा होती है जबकि और सब लोग मान-बड़ाई की ख़ातिर जी-तोड़ मेहनत करते हैं।

हमता और ममता

ममता या ममत्व अहंभाव का ही एक पहलू है। संस्कृत में मम का अर्थ मेरा या मेरी है और ममता तथा ममत्व का मुख्य अर्थ मैं-मेरी का भाव है। स्पष्ट है कि मैं-मेरी के भाव को अहंभाव या मैं के भाव से अलग नहीं किया जा सकता। इससे स्पष्ट हो जाता है कि संतों की वाणी में अहंभाव और ममत्व का आमतौर पर एक साथ उल्लेख क्यों किया जाता है।

पलटू साहिब ने अपनी वाणी में कई स्थानों पर हमता (अहंभाव) और ममता शब्दों का प्रयोग किया है। अन्य संतों की तरह आपने भी

---

* **गोड़...हेतु**=पाँव छुआने के लिए

आवागमन से मुक्ति पाने के लिए मैं-मेरी की भावना को त्यागने पर बहुत बल दिया है। आपने एक स्थान पर स्पष्ट कहा है:

यहि हमता ममता के कारन, चौरासी किहा फेरा है॥[64]

अर्थात् यह मैं-मेरी ही जीव का चौरासी लाख योनियों में चक्कर काटने का कारण है।

हमता ममता को दूरि करै,[65]—इस पंक्ति से शुरू होनेवाले एक पद में आपने कहा है कि अहंभाव और ममता से रहित भक्त ही प्रभु को प्यारा होता है:

वोही साहिब का लाल है जी॥[66]

कहने का भाव यह है कि ऐसे भक्त को ही प्रभु अपनाता है और उसे वापस संसार में नहीं आने देता।

शरण

पलटू साहिब ने सतगुरु की शरण और परमात्मा की शरण लेने की भी कई बार चर्चा की है। परंतु परमात्मा को तो कभी देखा नहीं, फिर उसकी शरण कैसे लें? शब्द का अभ्यास करके सतगुरु उसमें समाकर सत्य-स्वरूप परमात्मा से एक हो चुके होते हैं। इसलिए वे परमात्मा का प्रकट रूप होते हैं। केवल उन्हीं के माध्यम से जीव परमात्मा की शरण में जा सकता है। उनकी शरण लेना परमात्मा की ही शरण लेना है। दोनों में कोई अंतर नहीं है।

शरण लेने का अर्थ है अपने अहं यानी मन की इच्छा के अनुसार चलने की प्रवृत्ति पर अंकुश लगाना, मन को नियंत्रण में रखना और सतगुरु की आज्ञा में रहना। सतगुरु से नाम पानेवाले के लिए नामदान के समय उनके द्वारा दिए गए आदेशों का पालन करना ज़रूरी होता है। सतगुरु जब किसी को नामदान देते हैं तो वे उसे अपनी शरण में ले लेते हैं, लेकिन जीव का यह कहना कि उसने उनकी शरण ले ली है,

ठीक नहीं होगा। सतगुरु की शरण लेने का अर्थ मात्र उनसे नामदान ले लेना नहीं है। इसका अर्थ उनसे नामदान लेकर उनकी आज्ञा के अनुसार नित्य नियमपूर्वक नाम का अभ्यास करना तथा उनकी बताई रहनी अपनाना है। जब तक आत्मा मन के अधीन है तब तक सतगुरु की पूर्णतया शरण लेना असंभव है। जब मनुष्य मनमुखता को पूरी तरह त्याग देता है और अंतर में प्रकट हुए नाम का प्रेमपूर्वक लगन के साथ अभ्यास करते-करते उसकी आत्मा मन की दासता से पूरी तरह मुक्त हो जाती है, तभी मनुष्य वास्तव में सतगुरु की शरण लेता है, तभी वह पूरा गुरमुख बनता है। उससे पहले तो मनुष्य को अपने मन के साथ लड़ाई लड़नी पड़ती है। सतगुरु के आदेशानुसार जीवन बिताने के लिए उसे कड़ा संघर्ष करना पड़ता है। लेकिन दृढ़ता के साथ की गई नाम भक्ति से जब मन आख़िर वश में आ जाता है तो वह आत्मा का शत्रु न रहकर उसका मित्र बन जाता है। तब मनुष्य को उससे नैतिक आचरण करवाने के लिए उसके साथ ज़बरदस्ती नहीं करनी पड़ती। तब मनुष्य की अपनी कोई इच्छा होती ही नहीं। तब सतगुरु की इच्छा ही उसकी इच्छा होती है; वह उनकी रज़ा में रहता है, ख़ुशी से उनकी हर आज्ञा का पालन करता है। सही माने में यही सतगुरु की शरण लेना है। महाराज चरन सिंह जी के वचन हैं कि आध्यात्मिक प्रेम में "सतगुरु की शरण लेनी पड़ती है। इसका अर्थ यह है कि हमें अपने भीतर से ख़ुदी या अहं को निकालकर अपनी इच्छा को पूरी तरह सतगुरु की इच्छा में विलीन करना पड़ता है।"

सारांश यह कि मैं-मेरी को त्यागकर सतगुरु की आज्ञा में रहना शरण लेने या आत्मसमर्पण का दूसरा नाम है। सतगुरु की शरण लेना ही प्रभु की शरण लेना है। शरण ले लेने पर जिज्ञासु सुख-दुःख, हानि-लाभ, मान-अपमान आदि सब द्वंद्वों से ऊपर उठ जाता है। वह सौभाग्य-दुर्भाग्य, शुभ-अशुभ, दोनों को हरि इच्छा मानकर ख़ुशी-ख़ुशी स्वीकार कर लेता है।

अपनी वाणी में पलटू साहिब ने बहुत भाव-विभोर होकर इस बात की चर्चा की है कि सतगुरु की शरण ले लेने पर उन्हें सतगुरु से कितना प्यार मिला और सतगुरु ने उन्हें क्या से क्या बना दिया:

कोउ कितनौ चुगुली करै सुनै न बात हमार॥
सुनै न बात हमार गये जब से सरनाई।
सब ऐगुन करि माफ लिहिन मोकँह अपनाई॥
करत फिरौं अन्याय काम न क्रोध बिचारा।
कैसेउ पूत कपूत पिता को आखिर प्यारा॥
लोभी लंपट चोर कुकरमी जातिन नीचा।
अपने सरन की लाज जानि पद दीन्हेउ ऊँचा॥
पलटू हम से राम से ऐसो भा ब्योहार।
कोउ कितनौ चुगुली करै सुनै न बात हमार॥[67]

कोई चाहे मेरी कितनी ही निंदा करे, सतगुरु मेरे बारे में उसकी कोई बात नहीं सुनते। मेरे प्रति उनका ऐसा व्यवहार तभी से चला आ रहा है जब मैं उनकी शरण में उनसे नाम का भेद लेने गया था। उन्होंने तब मेरे सब अवगुण माफ़ करके मुझे अपना लिया था, मुझे अपना शिष्य बना लिया था। मैं बहुत-से अन्यायपूर्ण कार्य किया करता था, यह सोचता ही नहीं था कि काम और क्रोध के वश में होकर कुछ भी करना ठीक नहीं है। मैं लोभी, विषयी, दुराचारी और बेईमान था और जाति से भी निम्न माना जाता था। परंतु उन्होंने मुझे अपना बेटा मान लिया था और बेटा चाहे कितना भी बुरा क्यों न हो, पिता को तो प्यारा ही होता है। जब मैंने सही अर्थों में उनकी शरण ले ली और उनके उपदेश के अनुसार जीवन बिताने लग गया, तो अपनी शरण की लाज रखने को अपना धर्म समझते हुए उन्होंने आख़िर मुझे परमपद दे दिया। प्रभु के प्रकट रूप सतगुरु से नामदान लेने के समय से ही मेरे साथ उनका ऐसा प्रेमपूर्ण व्यवहार रहा है कि कोई मेरी चाहे कितनी भी निंदा करे, वे अनसुनी कर देते हैं।

पलटू साहिब ने ख़ुद अपना उदाहरण हमारे सामने रखकर हमें समझाया है कि लोकलाज और अहं को त्यागकर भक्त जब मालिक की शरण ले लेता है तो वह निश्चिंत होकर सोता है। तब ख़ुद मालिक उसकी चौकीदारी करता है, उसकी सब चिंताएँ मालिक की हो जाती हैं:

हम को नाहीं सोच सोच सब उन को भारी।
छिन भरि परै न भोर लेत है खबर हमारी॥*
लाज तजा जिन राम पर डारि दिहा सिर भार।
पलटू सोवै मगन में साहिब चौकीदार॥[68]

सत्संग

आम बोलचाल की भाषा में सत्संग शब्द का प्रयोग उस सभा के लिए किया जाता है जिसमें धार्मिक कथाएँ सुनाई जाती हों अथवा किसी धर्मग्रंथ का पाठ या व्याख्या की जाती हो। परंतु पलटू साहिब तथा अन्य संतों ने भी अपनी वाणी में सत्संग और सत्संगति दोनों शब्दों का प्रयोग संतों की संगति के अर्थ में किया है।

यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना ज़रूरी है कि संतों की संगति का अर्थ केवल उनसे मिलना, उनके साथ उठना-बैठना और आध्यात्मिक विषयों पर चर्चा करना नहीं है। जिस सभा में किसी संत का प्रवचन होता है उसे भी सत्संग कहते हैं और उस सभा में जाना भी उनकी संगति करना है। इतना ही नहीं, जिस सभा में संतों की वाणी की व्याख्या की जाए उसे भी सत्संग कहा जाता है। आदि ग्रन्थ में स्पष्ट कहा गया है कि जिस सभा में केवल नाम की चर्चा हो वही सत्संग है:

सतसंगत कैसी जाणीऐ॥ जिथै एको नाम वखाणीऐ॥[69]

संतों की वाणी में उस नाम यानी शब्द की चर्चा ही तो है जिसकी साधना करके जीव सब बंधनों से मुक्त होकर प्रभु को पा लेता है।

सभी संतों ने सत्संग की बहुत महिमा की है। गोस्वामी तुलसीदास ने तो इसे एक प्रकार की भक्ति ही कहा है। *श्रीरामचरितमानस* के अरण्य काण्ड में शबरी को नवधा भक्ति अर्थात् नौ प्रकार की भक्ति का उपदेश दे रहे श्रीराम के वचन हैं—*प्रथम भक्ति संतन्ह कर संगा।*[70]

---

* भोर=भूल

पलटू साहिब को भी अपने सतगुरु की कृपा से नाम का अभ्यास करने से प्रभु-प्राप्ति हुई थी। इसलिए आपने बहुत ज़ोरदार शब्दों में कहा है कि प्रभु-प्राप्ति या सच्ची शांति की प्राप्ति के लिए संतों की संगति आवश्यक है:

तीरथ बरत जोग जप तप में, मो से न भेंट सहै कितनौ दुख।*
ज्ञान कथै बहु भेष बनावै, इहौ बात सब तुक्ख†॥
नेम अचार करै कोउ कितनौ, कबि कोबिद सब खुक्ख‡।
तिरदंडी सरबंगी नागा, मरै पियास औ भुक्ख॥
तजि पाखंड करै सतसंगति, जहाँ भजन में सुक्ख।[71]

अर्थात् मंत्रों अथवा स्तोत्रों का जाप, तपस्या, हठयोग, तीर्थ यात्रा और व्रत आदि के कष्ट सहने से प्रभु से मिलाप नहीं हो सकता। साधु-महात्मा का बाना पहन लेने और बढ़-चढ़कर ज्ञान की बातें करने का भी कोई लाभ नहीं। कोई विद्वान धर्म और आचार-व्यवहार के कितने ही नियमों का पालन क्यों न कर ले, सब खोखले सिद्ध होंगे। भिन्न-भिन्न संप्रदायों के संन्यासी और साधु भूखे-प्यासे रहकर मर गए परंतु प्रभु को नहीं पा सके। जीव को चाहिए कि ये सब कुछ छोड़कर संतों की संगति करे क्योंकि उसे शांति तो सत्संगति से ही मिलेगी, किसी वर्तमान संत-सतगुरु की बताई विधि से भक्ति करने पर ही मिलेगी।

मनुष्य जन्म ही आत्मा के लिए परमात्मा से मिलने का दुर्लभ अवसर होता है। उसे परमात्मा को अपने शरीर के अंदर ही खोजना तथा पाना होता है और इस लक्ष्य को सिद्ध करने की ठीक विधि का ज्ञान उसे जीवित संत-सतगुरु की संगति करने से ही प्राप्त हो सकता है। पलटू साहिब ने दावे के साथ कहा है:

* **मो...भेंट**=प्रभु से भेंट न होना † **तुक्ख**=तुच्छ ‡ **खुक्ख**=खोखला

केतिक पंडित मुए नरक में सिधारते,
लोभ और मोह बसि रहा रीता॥*
बिना रहनी रहे मुक्ति ना मिलैगी,
काम औ क्रोध को नाहिं जीता।
दास पलटू कहै बैठु सतसंग में,
आपु में देखि ले राम सीता†॥[72]

संतों की संगति करके और उनकी बताई जीवन पद्धति अपनाए बिना काम, क्रोध, लोभ आदि मनोविकारों पर विजय नहीं पाई जा सकती और उन पर विजय पाए बिना मुक्ति नहीं मिल सकती। इसलिए मनुष्य को चाहिए कि संतों की संगति करे। इससे उसे शरीर के अंदर आत्मा का साक्षात्कार हो जाएगा और प्रभु का दर्शन भी हो जाएगा।

पलटू साहिब ने हमारे शरीर के अंदर ही छिपे प्रभु को बाहर यहाँ-वहाँ ढूँढ़ने की कोशिश को उतना ही मूर्खतापूर्ण कार्य बताया है जितना किसी माता का अपने बच्चे का पहाड़ पर जाकर ढूँढ़ना जबकि बेटा उसके अपने घर में ही छिपा है। वे कहते हैं कि इस भूल को सुधारने का एकमात्र सही उपाय सत्संगति है:

पलटू सतसंगति करै भूल में वाही सार।
लड़िका चूल्हे में लुका ढूँढ़त फिरै पहार॥[73]

सतसंगत से बिमुख बस्तु कहवाँ से पावै॥
पलटू छूटै कर्म ना कैसे सकै उठाय।
वस्तु धरी है पाछे आगे लिहिनि तकाय‡॥[74]

आपने कहा है कि परमात्मा तो मनुष्य के अंदर ही है। इसलिए मनुष्य यदि उसे बाहर खोजता रहे तो यह ऐसी बात होगी जैसे कोई अपने पीछे

* **रीता**=ख़ाली † **राम सीता**=परमात्मा और आत्मा ‡ **लिहिनि तकाय**=देख ली

रखी वस्तु को अपने आगे ढूँढ़ता रहे। साथ ही उन्होंने यह भी कहा है कि कर्मों के बंधन में जकड़ा जीव संतों की संगति के बिना प्रभु को नहीं पा सकता। पलटू साहिब संकेत करते हैं कि जैसे बँधे हाथों से वस्तु नहीं उठाई जा सकती उसी तरह मनुष्य के कर्मों के बंधन को काटनेवाला नाम सतगुरु की संगति करने पर ही मिलता है। वही नाम मनुष्य को प्रभु तक पहुँचाता है।

जीते-जी मरना

पलटू साहिब ने अपनी वाणी में कई जगह अभ्यासी के जीते-जी मरने की चर्चा की है। आत्मा को परमधाम में पहुँचाकर परमात्मा से मिलानेवाला शब्द मनुष्य के शरीर में माथे के अंदर भौंहों के बीच में हरदम गूँजता रहता है। पर उससे जुड़ने के लिए आत्मा को शरीर ख़ाली करना पड़ता है, अभ्यासी को जीते-जी मरना पड़ता है। इस बात पर सभी संत सहमत हैं।

जीते-जी मरना, इस कथन में दोनों शब्दों में परस्पर विरोध लगता है लेकिन संतों के बताए रूहानी अभ्यास में साधक की असल में ऐसी ही अवस्था होती है। साधक जब बाहर फैले हुए अपने मन को सतगुरु की बताई युक्ति से समेटकर अंतर में भौंहों के बीच में एकाग्र करता है, तब आत्मा पैरों के तलवों से शुरू होकर सारे शरीर में से सिमटकर वहाँ इकट्ठी हो जाती है। उसका शरीर अचेत, मुर्दे जैसा हो जाता है, लेकिन वह मरता नहीं। उसकी साँस चलती रहती है, दिल की धड़कन बनी रहती है और शरीर में पहले की तरह रक्त का संचार होता रहता है। भाव यह कि वह जीवित होता है। संतों के कथनानुसार शरीर को ख़ाली करके भी आत्मा एक बड़ी सूक्ष्म तार से उसके साथ जुड़ी रहती है। उस समय आत्मा स्थूल शरीर में सक्रिय नहीं होती अर्थात् तब वह स्थूल जगत का कोई अनुभव या ज्ञान प्राप्त करने की स्थिति में नहीं होती। तब वह स्थूल जगत से ऊपर के सूक्ष्म मंडलों में क्रियाशील होती है, वहाँ की ध्वनियाँ सुन रही होती है, वहाँ के प्रकाश तथा दृश्य देख रही होती है। इसी अवस्था को जीते-जी मरना कहा गया है।

वर्तमान स्थिति में क्योंकि मन बाहर संसार के पदार्थों में उलझा हुआ है आत्मा शरीर के अंदर हरदम गूँज रहे शब्द को सुन नहीं पाती और उससे जुड़ नहीं सकती। शब्द के साथ जुड़ने के लिए उसे शरीर के नौ द्वारों अर्थात् दो आँखों, दो कानों, नाक के दो छिद्रों, मुख तथा दो नीचे की इंद्रियों के रास्ते सारे संसार में फैले हुए मन को समेटकर भौंहों के बीच में लाना पड़ेगा। मन के वहाँ एकाग्र होने पर ही वह शब्द से जुड़ती है। मन को समेटकर माथे में भौंहों के बीच में लाने की विधि सतगुरु जिज्ञासु को नामदान के समय बताते हैं जब वे उसे वर्णात्मक नाम का जाप देते हैं। परंतु धुनात्मक नाम अर्थात् शब्द के साथ आत्मा का संयोग तभी होता है जब मन भौंहों के बीच में एकाग्र हो जाता है। मन के साथ गाँठ बँधी होने के कारण आत्मा भी उसके साथ ही शरीर में से सिमटकर भौंहों के बीच में इकट्ठी हो जाती है और उसे शब्द सुनाई देने लगता है। शब्द आत्मा और मन को ऊपर खींचता है। सतगुरु के द्वारा नामदान के समय आत्मा के नाम यानी शब्द के साथ जुड़ने की विधि का सिखाया जाना घर में बिजली का कनेक्शन मिल जाने के समान है। मन को भौंहों के बीच में एकाग्र करना स्विच दबाने जैसी बात है। जिस तरह घर में प्रकाश बिजली का कनेक्शन मिलने से ही नहीं हो जाता, प्रकाश के लिए स्विच दबाना पड़ता है, इसी तरह आत्मा को शब्द के साथ जुड़ने के लिए एकाग्रता का स्विच दबाना पड़ता है, मन को बाहर से समेटकर अंतर में भौंहों के मध्य बिंदु पर, दसवें दरवाज़े पर एकाग्र करना पड़ता है। मन के वहाँ एकाग्र हो जाने पर ही आत्मा शब्द से जुड़ पाती है जो उसे ऊपर की ओर खींचता है।

अभ्यास की समाप्ति पर जब आत्मा तीसरे तिल को छोड़कर शरीर में लौट आती है तो शरीर में फिर चेतना का संचार हो जाता है। इसे संतों ने फिर जी उठना कहा है। संतों का कहना है कि जीते-जी मरकर ही सतगुरु के दिए वर्णात्मक नाम के सुमिरन से शरीर को ख़ाली करके साधक अंतर में गूँज रहे शब्द के साथ यानी धुनात्मक नाम के साथ जुड़ता है। वह इच्छानुसार मरकर फिर जी उठने की क्षमता प्राप्त हो जाने पर आख़िरकार

अपने निजघर परमधाम में पहुँचता है और प्रभु को पा लेता है। यही बात पलटू साहिब ने इन शब्दों में कही है:

आसिक का घर दूर है पहुँचै बिरला कोय॥
पहुँचै बिरला कोय होय जो पूरा जोगी।...
जीते जी मरि जाय मुए पर फिर उठि जागै।[75]

पलटू साहिब ने जीव को जीते-जी मरने की प्रेरणा देते हुए कहा है:

पलटू मूए पर किन्ह देखा,
जीवत ही मुक्त हो जाइये जी॥[76]

जीवित रहते हुए ही मुक्त हो जाने का अर्थ है जीते-जी शरीर, मन, माया तथा अच्छे-बुरे कर्मों के बंधनों से मुक्त हो जाना, इन सब बंधनों से मुक्ति पा लेना। जीवनमुक्त हुए बिना यानी जीते-जी इन बंधनों से मुक्ति पाए बिना मरने के बाद किसी को आवागमन से मुक्ति नहीं मिली। इन बंधनों से मुक्ति जीते-जी मरने का अभ्यास करने से ही मिलती है।

जीते-जी मरने का मतलब है शरीर के अंग-अंग में और शरीर के नौ द्वारों के ज़रिये संसार में जहाँ-तहाँ फैली हुई अपनी चेतना को सब ओर से समेटकर भौंहों के मध्य बिंदु पर यानी तीसरे तिल पर इकट्ठा करना और वहाँ टिकाना। यह संतों के बताए नाम मार्ग यानी प्रेम मार्ग की ओर क़दम बढ़ाना है।

आत्मा के लिए प्रेम ही प्रभु के घर जाने का एकमात्र ज़रिया है और इसका प्रवेश द्वार तीसरा तिल है जो शब्द-अभ्यासी के जीते-जी मरने पर ही खुलता है। इसके खुलने पर ही वह इस मार्ग पर अपनी यात्रा आरंभ कर सकता है। संतों ने इसे दसवाँ दरवाज़ा, दसवीं खिड़की, घर-दर और मोक्ष द्वार आदि नामों से भी याद किया है। इसके लिए उन्होंने दिल शब्द का प्रयोग भी किया है और पलटू साहिब ने इसे

गगन की खिड़की नाम देते हुए कहा है कि अभ्यासी इस खिड़की को खोलकर ही अंदर आध्यात्मिक जगत में प्रवेश पाता है और वहाँ प्रभु-प्रेम का प्याला पीता है:

छकै पियाला प्रेम गगन की खिड़की खोलै॥[77]

पुण्य कर्मों से मुक्ति की प्राप्ति एक भ्रम

संतों के अनुसार यह धारणा कि पुण्य कर्म करके मुक्ति प्राप्त की जा सकती है केवल एक भ्रम है। सत्कर्म और दुष्कर्म दोनों ही जीव को जन्म-मरण के जाल में बाँधते हैं। दोनों प्रकार के कर्मों का फल भुगतने के लिए जीव को फिर संसार में आना पड़ता है। पूर्व जन्मों के अच्छे कर्मों के फलस्वरूप वह सुख भोगता है और बुरे कर्मों के फलस्वरूप दुःख। किसी जीव को प्रबल पुण्यों के प्रताप से स्वर्ग भी मिल जाता है, पर पुण्यों के क्षीण हो जाने पर उसे फिर इस मृत्युलोक में जन्म लेना पड़ता है। मनुष्य योनि कर्म योनि है। मनुष्य सदा कर्म करता रहता है और कर्मों के कारण उसे फिर जन्म लेना और मरना पड़ता है। इस तरह वह चौरासी लाख योनियों के चक्कर में पड़ा रहता है। नाम का अभ्यास करने से ही कर्मों के बंधन तथा आवागमन के चक्कर से मुक्ति मिलती है:

पुन्न जो करै सो पुन्न को पाइ है, पुन्न भे छिन्न मृत लोक आवै।
करम को जीव सो सदा करमै मँहै, जनम औ मरन फिरि करम पावै॥
पड़ा वह रहै चौरासी के फेर में, चौरासी को छोड़ि वह कहाँ जावै।
दास पलटू कहै द्वार दसएँ केरी, राह में जाय सो मुक्ति पावै॥[78]

भाव यह है कि मनुष्य को कर्मों के बंधन से और आवागमन से छुटकारा तभी मिलता है यदि वह शरीर के अंदर ही दसवें दरवाज़े से शुरू होनेवाले रास्ते पर चले और जैसा कि ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है, यह दरवाज़ा नाम यानी शब्द का अभ्यास करने से ही खुलता है।

रूहानी सफ़र

रूहानी सफ़र के दो भाग

सतगुरु के प्रकरण में इस बात का उल्लेख किया जा चुका है कि पलटू साहिब के अनुसार परमार्थी को ऐसे ही गुरु की तलाश करनी चाहिए जो रूहानी सफ़र का पूरा जानकार हो। जो अपने निजी अनुभव के आधार पर यह जानता हो कि इस सफ़र का रास्ता कहाँ से शुरू होता है और उसमें कितने पड़ाव आते हैं। आपने हमारे रूहानी सफ़र को शरीर के अंदर ही दसवें दरवाज़े से शुरू होने की बात भी कही है। जहाँ तक इस सफ़र की राह में आनेवाले पड़ावों की संख्या का प्रश्न है, पलटू साहिब के अनुसार ये आठ हैं:

पलटू अठएँ लोक में पड़ा दुपट्टा तान।[79]

हमारे रूहानी सफ़र का अंतिम पड़ाव, उसकी आख़िरी मंजिल, प्रभु का धाम है। हमारी आत्मा को इस आठवें लोक तक का सफ़र शरीर के अंदर ही तय करना है। इस सफ़र के बारे में यहाँ कुछ बातें स्पष्ट करनी ज़रूरी हैं।

हमारा रूहानी सफ़र पैरों के तलवों से शुरू होकर सिर की चोटी पर समाप्त होता है। इसके दो भाग हैं, एक भौंहों के मध्य बिंदु अर्थात् दसवें दरवाज़े तक और दूसरा उससे ऊपर। यह भी कहा जा सकता है कि आत्मा की परमधाम की यात्रा वास्तव में तीसरे तिल से आरंभ होती है। नीचे पैरों के तलवों से लेकर तीसरे तिल तक का उसका सिमटाव तो उस यात्रा की तैयारी है।

मनुष्य के भौतिक शरीर का कार्यक्षेत्र स्थूल भौतिक मंडल अर्थात् यह संसार है। जब सतगुरु के दिए वर्णात्मक नाम का सुमिरन करके साधक जीते-जी मरता है यानी अपने स्थूल शरीर को ख़ाली कर देता है, तभी मस्तक में भौंहों के मध्य बिंदु पर एकाग्र हुई आत्मा अंतर में स्थूल जगत से ऊपर के मंडलों का सफ़र यानी परमधाम की यात्रा शुरू करती है। आत्मा यह सफ़र नाम की मधुर ध्वनि तथा दिव्य ज्योति की

सहायता से तय करती है। भौंहों के मध्य बिंदु को संतों ने तिल, तीसरा तिल, शिवनेत्र, मोक्षद्वार, घर-दर आदि अनेक नाम दिए हैं। सूफ़ी दरवेशों ने इसे नुक़्ताए-सुवैदा (काला तिल) कहा है। यहाँ आत्मा नाम की डोर को पकड़कर अंतर में अन्य मंडलों में से होती हुई प्रभु के धाम की ओर बढ़ती है जो अंतिम आंतरिक मंडल है और आत्मा का असली घर यानी निजघर है। आत्मा के इस असली घर को संतों ने निजधाम, परमधाम, परमपद आदि अनेक नामों से याद किया है। आत्मा यहीं से नीचे उतरकर इस संसार में आई थी।

सूक्ष्म आंतरिक मंडल

अधिकांश संतों के अनुसार मनुष्य के इस स्थूल शरीर के अंदर पाँच सूक्ष्म मंडल हैं, जो निर्मल से और अधिक निर्मल होते जाते हैं। ये हमारे रूहानी सफ़र के रास्ते में आनेवाले पड़ाव हैं। इनके नाम नीचे से ऊपर की ओर क्रमशः सहस्रदल कमल, त्रिकुटी, दसवाँ द्वार, भँवरगुफा और सतलोक या सचखंड हैं। कुछ संतों ने पाँचवें मंडल को चार हिस्सों में बाँट दिया है। जैसा कि ऊपर ज़िक्र किया जा चुका है पलटू साहिब के अनुसार भी इन मंडलों की संख्या आठ है। *नासूत मलकूत जबरूत*[80] वाणी में पलटू साहिब को पाँचवें मंडल में प्रभु के दर्शन होने का संकेत मिलता है। जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि वे पाँचवें से आठवें लोक तक प्रभु का धाम मानते हैं।

कुछ संतों के आंतरिक मंडलों की संख्या पाँच और कुछ के यह संख्या आठ बताने से कोई अंतर नहीं पड़ता। क्योंकि सबका बताया रास्ता वही है जो भौंहों के मध्य में स्थित दसवें दरवाज़े से सिर की चोटी तक है और सबकी आख़िरी मंज़िल भी वही प्रभु का धाम है। इसलिए रास्ते को कम या ज़्यादा पड़ावों में बाँटने से जिज्ञासु को उलझन में नहीं पड़ना चाहिए।

कुछ संतों ने मंडलों के क्रम के अनुसार रूहानी सफ़र का विस्तृत वर्णन किया है। पलटू साहिब ने सिलसिलेवार आठ मंडलों के नाम न देकर और उनका विस्तृत वर्णन न करके अनेक पदों में केवल संकेत दिए हैं।

परंतु उनसे भिन्न-भिन्न मंडलों की बहुत-सी झलकें अवश्य देखने को मिल जाती हैं। उनकी वाणी से यह भी पता चलता है कि इस सफ़र में दिखाई देनेवाले सभी दृश्य सुहावने नहीं होते, उनमें से कुछ डरावने भी होते हैं। पलटू साहिब ने जिज्ञासु को धीरज बँधाते हुए कहा है कि उन दृश्यों को देखकर डरना नहीं। निडर रहते हुए सफ़र जारी रखोगे तो तुम्हें प्रभु का दर्शन अवश्य हो जाएगा। इसी वाणी में सबसे ऊँचे रूहानी मंडल परमधाम के संबंध में पलटू साहिब कहते हैं कि उसका वर्णन करना असंभव है। इसलिए वहाँ पहुँचकर उसका भेद जानकर भी मुझे उस पर परदा पड़ा रहने देना ही ठीक लगता है:

पलटूदास तहाँ चलि गया, आगे ह्वै पाछे न भया।
पलटू देखि हाथ को मलै, आगे कहै तो परदा खुलै।

दोहा

आदि अंत अरु मध्य नहिं, रंग रूप नहिं रेख।
गुप्त बात गुप्तै रही, पलटू तोपा देख॥[81]

पलटू साहिब की संगत और शिष्यों में बहुत-से मुसलमान भी थे। इसलिए उन्होंने इन मंडलों के अरबी भाषा में दिए गए नाम *मलकूत* (सहस्रदल कमल), *जबरूत* (त्रिकुटी) *लाहूत* (सुन्न) आदि का प्रयोग भी किया है।

भक्ति, प्रेम और विरह

संतों ने परमात्मा की प्राप्ति का साधन जप-तप, पूजा-पाठ, दान-पुण्य, हठकर्म तथा त्याग आदि को नहीं, बल्कि केवल प्रेमपूर्ण भक्ति को माना है। अपनी वाणी में पलटू साहिब ने भी हमें प्रेमपूर्वक प्रभु की भक्ति करने की ही प्रेरणा दी है। आपने बार-बार कहा है कि प्रभु प्रेमपूर्ण भक्ति से ही संतुष्ट और प्रसन्न होता है। उसे वही प्यारी है:

साहिब के दरबार में केवल भक्ति पियार॥
केवल भक्ति पियार साहिब भक्ती में राजी।[82]

भक्ति और प्रेम में गहरा संबंध है। परमात्मा के प्रति प्रेम और उसे पाने की लालसा ही सच्ची भक्ति का मूल है। संत हमें बताते हैं कि हर आत्मा में परमात्मा का प्रेम बीजरूप में विद्यमान है क्योंकि हर आत्मा परमात्मा की अंश है और उससे बिछुड़कर ही संसार में आई है। प्रभु की कृपा से ही वह बीज फूटता है। प्रभु की कृपा होने पर वह मनुष्य के पूर्व जन्मों के प्रबल शुभ संस्कारों के फलस्वरूप पारिवारिक वातावरण के या किसी मित्र, संबंधी अथवा परिचित के प्रभाव से भी फूट सकता है। वह बीज बहुत अधिक पुण्य संचित हो जाने से किसी संत की संगति मिल जाने पर भी फूट सकता है। भक्ति वास्तव में तभी होती है जब वह बीज फूट पड़ता है और आत्मा की प्रभु से मिलाप की युगों से सोई हुई लालसा जाग उठती है। किसी सांसारिक पदार्थ की प्राप्ति या किसी विपत्ति से छुटकारा पाने के लिए की जानेवाली भक्ति सच्ची भक्ति नहीं होती। प्रभु की सच्ची भक्ति उसे पाने के लिए की जाती है, उससे प्रेम होने के कारण की जाती है।

प्रेम भक्ति का मूल ही नहीं, उसका पोषक भी है। भक्ति से प्रेम का पोषण होता है। प्रेम का पौधा भक्ति से होनेवाले सुखद आंतरिक अनुभवों से पनपता है, फलता-फूलता है। प्रेम में वृद्धि होने से मनुष्य अधिक भक्ति करता है तथा अधिक भक्ति करने से प्रेम और बढ़ता है। दोनों के इस घनिष्ठ संबंध को ध्यान में रखते हुए यदि व्यावहारिक दृष्टि से यह कहा जाए कि भक्ति और प्रेम में कोई विशेष अंतर नहीं है तो ग़लत नहीं होगा। संत अपनी वाणी में अकसर दोनों में अंतर नहीं करते।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि संतों के मार्ग को भक्ति मार्ग भी कहा गया है तथा प्रेम मार्ग भी। पलटू साहिब ने बड़े प्रभावशाली ढंग से यह धारणा प्रकट की है कि प्रभु, प्रेम यानी भक्ति का भूखा है। आप कहते हैं कि किसी भी जाति में उत्पन्न कोई भी व्यक्ति यदि प्रभु से प्रेम

करता है यानी उसकी भक्ति का आधार प्रेम है तो वह व्यक्ति प्रभु का प्रेमपात्र बन जाता है। इस संबंध में उन्होंने पौराणिक साहित्य, रामायण, लोक कथाओं और इतिहास से अजामिल, जटायु, गणिका, सदना और भक्त रविदास के उदाहरण दिए हैं। वे इन्हें पृथ्वी पर ही नहीं, तीनों लोकों में सबसे श्रेष्ठ मानते हैं:

उनसे बड़ा न कोय और सब उन के नीचे।
उन्हैं बराबर नहीं कोऊ तिर्लोक के बीचे॥[83]

मनुष्य संसार और परमात्मा दोनों से नहीं बल्कि एक से ही प्रेम कर सकता है। यह बात पलटू साहिब ने अपनी वाणी में बार-बार बड़े प्रभावशाली ढंग से कही है:

दास कहाइ कै आस ना कीजिये, आस जो करै सो दास नाहीं।
प्रेम तो एक जो लगा संसार में, भक्ति गइ दूरि अब जक्त माहीं॥
चाहिये भक्ति को जक्त से तोरिये, जोरिये जक्त से भक्ति जाही।
दास पलटू कहै एक को छोड़ि दे,
तरवार दुइ म्यान इक नाहिं चाही॥[84]

पहिले संसार से तोरि आवै, तब बात पिया की पूछिये जी।
तरवार दुइ ठो है म्यान एकै, किस भाँति से वा में कीजिये जी॥[85]

अर्थात् संसार तथा परमात्मा दोनों से प्रेम करना असंभव है; एक म्यान में एक ही तलवार समा सकती है, दो तलवारें कभी नहीं। इसलिए किसी संत-सतगुरु के पास जाकर उससे प्रभु की प्राप्ति का उपाय पूछने से पहले संसार के मोह पर अंकुश लगाने की पूरी कोशिश करना बेहद ज़रूरी है। क्योंकि ऐसा किए बिना लगन के साथ नाम का अभ्यास करना और प्रभु के प्रति प्रेम जाग्रत करना मुश्किल ही नहीं बल्कि असंभव हो जाएगा। बाइबल में भी कहा गया है कि परमात्मा और धन-देवता दोनों की एक साथ सेवा नहीं की जा सकती।[86]

प्रेम का मार्ग तलवार की धार

पलटू साहिब ने इस बात पर भी बहुत ज़ोर दिया है कि प्रभु से प्रेम करना आसान नहीं है। प्रेम में मौसी के घर-सी मौज और आराम नहीं है। परमात्मा का घर बहुत दूर है और वहाँ पहुँचने का एकमात्र अत्यंत दुर्गम मार्ग प्रेम है। इस पर चलना रण में जूझने से कम नहीं है। इस पर वे ही पाँव रखते हैं जो बड़े साहसी होते हैं:

पलटू ऐसे घर मँहैं बड़े मरद जे जाहिं।
यह तो घर है प्रेम का खाला का घर नाहिं॥[87]

प्रेमी भक्त दिन-रात सूली पर टँगा रहता है। लोग उसका अपमान करते हैं और उसकी हँसी उड़ाते हैं। प्रभु को पाने के लिए उसे जीते-जी मरना और अपने आप को मिटाना पड़ता है, अपना अहं त्यागना पड़ता है:

सीस उतारै हाथ से सहज आसिकी नाहिं॥...
जीते जी मरि जाय करै न तन की आसा।
आसिक को दिन रात रहै सूली पर बासा॥[88]

विरह-व्यथा

पलटू साहिब ने प्रेम की पीड़ा यानी विरह-व्यथा का भी वर्णन किया है। आपने कहा है कि यह पीड़ा बहुत तीव्र होती है और जो ख़ुद इसका शिकार हुआ हो वही दूसरे की इस पीड़ा को जान सकता है:

प्रेम बान जा के लगा सो जानैगा पीर॥[89]

यह पीड़ा एक बार जाग उठे तो फिर मिटती नहीं चाहे कितने ही उपाय कर लिए जाएँ:

कोटि औषधि करै बिरह ना जायगा,
जाहि के लगी है बिरह गाँसी॥*[90]

---

* **गाँसी**=तीर, भाले आदि की नोक

इस पीड़ा का असहनीय होना सच्चे प्रेम की निशानी है। परमात्मा से सचमुच प्रेम करनेवाली आत्मा को उम्र भर भी यह पीड़ा सहनी पड़े तो वह प्रेम करना नहीं छोड़ती। अपने प्रियतम को पाने के लिए वह अपनी जान की बाज़ी भी लगा देती है:

खेलौंगी जान पर अपने, पियाला जहर पीवौंगी॥...
दीपक को भावता नाहीं, पतँग तन जारि भया राखी।*
पलटूदास जिय मेरा, तुम्हारे बीच है साखी॥[91]

परंतु जब विरह-वेदना सही नहीं जाती तो सतगुरु आ पहुँचते हैं, परमार्थी का उनसे मिलाप हो जाता है और वे नाम की संजीवनी बूटी देकर उस विरह-वेदना का उपचार कर देते हैं:

नागिनि बिरह डसत है मो को। जात न मो से धीर धरी॥
सतगुरु आइ किहिन बैदाइ†। सिर पर जादू तुरत करी॥
पलटूदास दिहा उन मो को। नाम सजीवन मूल जड़ी॥[92]

गुरु से प्रेम और उसकी सेवा

संतों द्वारा गुरु के प्रति प्रेम और गुरु की सेवा पर ज़ोर दिए जाने का कारण स्पष्ट है। सतगुरु प्रभु से एक हो चुके होते हैं। वे उसी का प्रकट या साकार रूप होते हैं। वे जीव को प्रभु तक पहुँचाने की विधि से भलीभाँति परिचित होते हैं। वे जिज्ञासु को प्रभु प्राप्ति की युक्ति सिखाते हैं। वे अंतर में आध्यात्मिक मार्ग की पूरी यात्रा में उसके साथ रहते हैं, उसका मार्गदर्शन करते हैं और अंत में उसे प्रभु से मिला देते हैं। शिष्यों के मन में उनके लिए प्रेम, सेवा भाव और भक्ति भावना का होना स्वाभाविक है।

* राखी=राख † बैदाइ=चिकित्सा

गुरु भक्ति का अर्थ ख़ुद गुरु की या उनके चित्र आदि की पूजा करना नहीं है और न ही गुरु की सेवा करने का अर्थ ख़ुद उनकी सेवा करना है। असल में दोनों का एक ही अर्थ है और वह है गुरु के द्वारा सौंपा गया कोई भी कार्य श्रद्धा, प्यार और नम्रता से करना, गुरु के बताए ढंग से जीवन बिताना और उनके आदेशानुसार नियमित रूप से प्रभु की भक्ति करना। शिष्य के मन में गुरु के लिए जितना अधिक प्रेम होगा उतनी ही गहरी उसकी भक्ति होगी। गुरु के प्रेम में मग्न शिष्य का बड़ा प्रभावशाली चित्रण करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि ऐसा शिष्य गुरु से मिले नाम का दीवाना होता है और गुरु को प्रसन्न करने की लगन में लोकलाज की परवाह नहीं करता:

अपने पिया की सुन्दरी लोग कहैं बौरान॥
लोग कहैं बौरान काहि की पकरौं बानी।
घर घर घोर मथान फिरौं मैं नाम दिवानी॥[93]

प्रभु के प्रेम तथा भक्ति के बारे में पलटू साहिब की वाणी में और भी कई महत्त्वपूर्ण बातों की चर्चा देखने को मिलती है। उन्होंने कहा है कि सच्चा भक्त वही है जो प्रभु से तो प्रेम करता ही है, उसके सब जीवों से भी प्रेम करता है। सब लोगों से मीठे वचन बोलता है, कटु वचन बोलकर किसी का दिल नहीं दुखाता:

पलटू बोलै मीठे बचन भजन में है लौलीन।[94]

एक अन्य जगह पलटू साहिब के वचन हैं कि भक्त का काम डटकर मन के साथ लड़ाई करना है, उस लड़ाई में उसे विजय दिलाकर प्रभु से मिलाना सतगुरु का काम है:

लरि लीजै भरि पेट कानि कुल अपनि न लावै।
उन की उनके हाथ बड़न से सब बनि आवै॥...
अपनी ओर निभाइये हारि परै की जीति॥[95]

अर्थात् मन के साथ लड़ना तुम्हारा काम है। तुम अपना काम अच्छी तरह करो, भक्तों के कुल को लाज मत लगाओ। तुम्हें इस लड़ाई में विजय दिलाकर प्रभु से मिलाना सतगुरु का काम है, इसे तुम उन पर छोड़ दो। वे महान हैं, सब कुछ कर सकते हैं। तुम जी-जान से अपना फ़र्ज़ अदा करो, हार-जीत की चिंता मत करो।

सच्चा ज्ञान

धार्मिक, दार्शनिक तथा आध्यात्मिक पुस्तकें पढ़ने से प्राप्त हुए ज्ञान को बाचक ज्ञान की संज्ञा देते हुए पलटू साहिब ने कहा है कि यह ज्ञान प्राप्त करने से कोई सही मायने में ज्ञानी नहीं बन जाता:

बाचक ज्ञान न नीका ज्ञानी, ज्यों कारिख का टीका॥[96]

वाचक ज्ञान को कालिख का टीका इसलिए कहा गया है कि इससे मनुष्य का केवल अहंकार ही बढ़ता है, उसे कोई आध्यात्मिक लाभ नहीं होता।

वाचक का अर्थ है पढ़कर सुनानेवाला अथवा कुछ समझाने वाला। वाचक ज्ञान का अर्थ है—पढ़कर प्राप्त किया गया ज्ञान जिसके आधार पर उपदेशक दूसरों को रूहानी बातें समझाता है। अन्य संतों की तरह पलटू साहिब ने भी नाम भक्ति से प्राप्त हुए आध्यात्मिक अनुभव को ही सच्चा ज्ञान माना है। पढ़ने-सुनने से प्राप्त होनेवाला ज्ञान मनुष्य को पंडित यानी वाचक ज्ञानी ही बना सकता है, सच्चा ज्ञानी कभी नहीं। पंडितों को संबोधित करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि बहुत-से ग्रंथ पढ़ने से तुम्हें यथार्थ ज्ञान तो हुआ नहीं क्योंकि तुमने अपने वास्तविक स्वरूप को नहीं पहचाना, तुम्हें यह अनुभव नहीं हुआ कि तुम वास्तव में ज्योति-स्वरूप आत्मा हो, परम ज्योति परमात्मा का अंश हो:

पढ़ि पढ़ि क्या तुम कीन्हा पंडित, अपना रूप न चीन्हा॥[97]

किसी संत के पास बैठकर उनका उपदेश सुनना और संतों की रची वाणी तथा उनकी लिखी पुस्तकें पढ़ लेना भी काफ़ी नहीं। इसे सच्चे

ज्ञान के भवन की नींव तो कहा जा सकता है, पर उस भवन का निर्माण सतगुरु से नाम का भेद प्राप्त कर उसका अभ्यास करने से ही होता है।

सच्चा ज्ञान निजी आंतरिक अनुभव है

सच्चे आध्यात्मिक ज्ञान की प्राप्ति के लिए नाम की कमाई अर्थात् शब्द के अभ्यास पर सभी संतों ने बहुत बल दिया है। अपने-अपने ढंग से सभी ने समझाया है कि नाम भक्ति के द्वारा अंतर में प्राप्त निजी अनुभव ही सच्चा ज्ञान है और उस ज्ञान की चरमसीमा अंतर में परमात्मा का साक्षात्कार है। पलटू साहिब ने कहा है:

जिस चोट लगी है ज्ञान की जी, तिस को नहीं कुछ भावता है।...
पलटू जहँ मन की गम्मि नहीं, तहाँ वह जोति जगावता है॥*[98]

जिसके मन में सच्चा ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा जाग उठती है, वह अंतर में मन की पहुँच से बहुत परे जाकर वहाँ ज्योति-स्वरूप प्रभु का दर्शन करके, उसमें समाकर, उससे एक होकर ही तृप्त होता है।

सच्चे पंडित का लक्षण बताते हुए पलटू साहिब ने कहा है कि परमात्मा का असली नाम काग़ज़ पर स्याही से लिखा जानेवाला कोई वर्णात्मक नाम नहीं, बल्कि अकथ की कथा अर्थात् धुनात्मक नाम है। असली पंडित वही है जो आत्मा पर यह नाम अंकित कर देता है और जिसकी कृपा से शिष्य की आत्मा शब्द से जुड़ जाती है:

बिनु रसना कहै बेद अकथ की कथा सुनावै॥...
पलटू पंडित सोई है कलम हाथ नहीं लेय।
बिनु कागद बिनु अच्छरे बिनु मसि से लिखि देय॥[99]

---

* गम्मि=पहुँच

भाव यह है कि उच्च कोटि के सच्चे ज्ञानी संत सतगुरु हैं। वे शब्द का अभ्यास करके शब्द से जुड़कर स्वयं तो शब्द-स्वरूप हो ही चुके हैं, दूसरों को भी शब्द से जोड़कर सच्चा ज्ञानी बना देते हैं।

अंतर्मुखी भक्ति तथा बहिर्मुखी भक्ति

पलटू साहिब की बताई नाम भक्ति यानी अंतर में शब्द को सुनने का अभ्यास *अंतर्मुखी* भक्ति है। इसमें हमें शरीर के नौ द्वारों के रास्ते बाहर संसार में फैले हुए अपने मन को किसी जीवित सतगुरु के बख़्शे वर्णात्मक नाम के सुमिरन से अंतर्मुख अर्थात् अंदर की ओर करना पड़ता है। भौंहों के मध्य बिंदु पर अंतर्मुख हुए मन के एकाग्र होने के साथ ही आत्मा भी एकाग्र हो जाती है और वहाँ गूँज रहे शब्द को सुनकर उससे जुड़ती है। संतों के अनुसार नाम की भक्ति ही जीव के आवागमन से मुक्ति पाने तथा प्रभु के दर्शन करने और उससे मिलने का एकमात्र साधन है।

यहाँ यह स्पष्ट कर देना ज़रूरी है कि ऐसी कोई भी भक्ति जिसमें साधक अपना ध्यान बाहर से हटाकर अंदर की ओर करता है अंतर्मुखी भक्ति कहलाती है। परंतु मुक्ति की प्राप्ति और प्रभु से मिलाप उस अंतर्मुखी भक्ति द्वारा होता है जिसमें साधक सतगुरु के बख़्शे नाम की साधना अंतर्मुख होकर करता है। अंतर्मुखी भक्ति की पहुँच की एक सीमा होती है, वह जीव को अंतर में वहीं तक ले जा सकती है जहाँ तक उसका गुरु पहुँचा हो, उसके आगे नहीं। जिसने स्वयं भक्ति करके पूरा रूहानी सफ़र तय किया हो और प्रभु को पा लिया हो, उसी सतगुरु के मार्गदर्शन में की गई भक्ति ही जीव को परमगति प्राप्त करवा सकती है, मुक्ति दिला सकती है और प्रभु से मिला सकती है।

हर प्रकार की वह भक्ति बहिर्मुखी यानी बाहरी भक्ति है जिसमें हमारा मन, हमारा ध्यान, बाहर की किसी चीज़ या क्रिया में रहता है। मंत्रों या स्तोत्रों का जाप, पूजा-पाठ, तीर्थ-व्रत, मूर्तियों की पूजा, तपस्या आदि ये सब बहिर्मुखी भक्ति में शामिल हैं।

पलटू साहिब तथा अन्य संतों ने बहिर्मुखी भक्ति का खंडन किया है क्योंकि उससे जन्म-मरण के चक्कर से छुटकारा नहीं मिल सकता, प्रभु से मिलाप नहीं हो सकता। विश्वास तथा लगन के साथ की गई बाहरी भक्ति से पुण्य-लाभ तो होता है, मन कुछ निर्मल होता है और अच्छे संस्कार बनते हैं परंतु उससे प्रभु की प्राप्ति नहीं होती। प्रभु से मिलाप का साधन अंतर्मुखी भक्ति ही है, बहिर्मुखी भक्ति नहीं। इसलिए संतों का हमें बहिर्मुखी भक्ति से दूर रहने को कहना स्वाभाविक है।

उनका यही कहना है कि प्रभु की प्राप्ति और भवबंधन से मुक्ति के इच्छुक जीव के लिए तीर्थ यात्रा, उपवास, वेदपाठ सुनना-सुनाना, मूर्ति-पूजा, हठयोग, मंत्रों या स्तोत्रों का जाप, छः दर्शनों का अध्ययन, माला फेरना तथा तपस्या, ये सब लोक प्रचलित साधन उसका मनोरथ पूरा नहीं कर सकते। *तिरथ में हम बहुत खोजा,*[100] इस शब्द में उन्होंने स्पष्ट कहा है कि जिज्ञासु को परमात्मा तभी मिलता है जब वह लोक प्रचलित सब बाहरी साधनों को छोड़कर अंत में सतगुरु की शरण में जाता है:

परे जब संत के द्वारे, संत ने आप सब कीन्हा।
दास पलटू जभी पाया, गुरू के चरन चित लाया॥[101]

मुसलमान जिज्ञासुओं को भी समझाया गया है कि रूह की भलाई का सिर्फ़ एक ही ज़रिया है और वह है नबी अर्थात् प्रभु के दूत सतगुरु का दिया पवित्र नाम:

अरे हाँ पलटू एक नबी का नाम सदा वह पाक है॥[102]

कर्मकांड

पलटू साहिब कर्मकांड पर ज़ोरदार व्यंग्य करते हुए पुरखों के श्राद्ध-कर्म के बारे में कहते हैं कि अकसर देखने में आता है कि जीते-जी तो बुज़ुर्ग सही खाना खाने के लिए भी तरसते रहते हैं जबकि उनकी मृत्यु होने पर दिखावे के लिए मुक्ति हेतु पिंडदान किया जाता है:

पलटू पुरषा मुक्ति में करत भंड औ भिंड†।*
जियतै देइ गिरास ना मुए परावै पिंड‡॥[103]

देवी-देवताओं की मूर्ति पूजा

पलटू साहिब ने हमें बार-बार समझाया है कि अंतर में गूँज रहे शब्द को सुनना ही शब्द-स्वरूप परमात्मा की सच्ची भक्ति है, प्रभु की इस सच्ची भक्ति को छोड़कर देवी-देवताओं की पूजा करने से मुक्ति हासिल नहीं हो सकती। देवी-देवताओं की पत्थर की बनी मूर्तियों की तथा नदियों के जल की पूजा के बारे में आप कहते हैं:

जल पषान बोलै नहीं, ना कछु पिवै न खाय।
पलटू पूजै संत को, सब तीरथ तरि जाय॥[104]

संत की पूजा करने का अभिप्राय उसकी आरती उतारने या उसे भोग लगाने से नहीं बल्कि उससे नामदान लेकर नाम का अभ्यास करने से है। पलटू साहिब ने कहा है:

देई देवा सेइ परम पद केहि ने पावा।[105]

भाव यह है कि देवी-देवताओं का अपना दायरा है और उनकी भक्ति करके प्रभु तक कोई नहीं पहुँच सकता।

पाखंडी साधु

लोगों के अंधविश्वास का लाभ उठाते हुए उन्हें धर्म के नाम पर किसी तरह बहकाकर या भीख माँगकर पेट भरने या पैसा बटोरने वाले, भक्ति से ख़ाली साधुओं की हमारे देश में कभी कोई कमी नहीं रही है। उन पर पलटू साहिब ने गहरी चोट की है:

---

* **पुरषा**=पूर्वज † **भंड औ भिंड**=दिखावा और धोखा
‡ **परावै पिंड**=पिंडदान करता है

पलटू माया पाइ कै, फूलि के भये महंथ।
मान बड़ाई में मुए, भूलि गये सत पंथ॥[106]

भेष बनावै भक्त का, नाहिं राम से नेह।
पलटू पर-धन हरन को, बिस्वा बेचै देह॥[107]

कई भेषधारी बाहर से तो प्रभु के भक्त दिखते हैं, पर वास्तव में उनके मन में प्रभु के लिए तनिक भी प्रेम नहीं होता। पैसों के लिए वे अपनी बनावटी भक्ति वैसे ही बेचते हैं जैसे वेश्या अपना शरीर।

अन्य सब संतों की तरह पलटू साहिब ने भी इस बात पर बहुत ज़ोर दिया है कि सच्चा फ़क़ीर बनने के लिए इनसान का पहले ख़ुद किसी पीर का मुरीद यानी किसी सतगुरु का शिष्य बनना ज़रूरी है। ऐसा किए बिना उसकी इच्छाएँ और तृष्णाएँ नहीं मिट सकतीं। परिणाम यह होता है कि उसकी फ़क़ीरी केवल नाममात्र की फ़क़ीरी होती है:

हवा हिरिस पलटू लगी नाहक भये फकीर॥*
नाहक भये फकीर पीर की सेवा नाहीं।[108]

पलटू साहिब ने इस बात पर खेद प्रकट किया है कि संसार के लोग कपटी साधुओं पर बहुत जल्दी विश्वास कर लेते हैं और उन संतों से दूर रहते हैं जो सच्चे महात्मा होते हैं:

झूठा सब संसार झूठै पतियात हैं।...
अरे हाँ पलटू संतन के रे पास कोऊ नहिं आवते॥[109]

मन को इधर से हटाना, उधर लगाना

सब संतों की वाणी में यह चेतावनी पाई जाती है कि संसार केवल मायाजाल है, एक बहुत बड़ा भ्रम है, धोखा है। मन को मोहिनी माया

---

* **हवा**=इच्छा

की ओर से हटाने के लिए पलटू साहिब ने कई ढंग अपनाए हैं। आपने डाँट-डपट की है, तीखा व्यंग्य किया है, आक्षेप किया है और प्यार से भी समझाया है। पर इस काम के लिए आपने जिस विधि का सबसे अधिक उपयोग किया है, वह शायद चेतावनी की ही विधि है।

पलटू साहिब ने बड़े ज़ोरदार शब्दों में शरीर तथा सांसारिक सुखों की नश्वरता, संसार के सब संबंधों के मिथ्यापन तथा किसी के मरने पर उसकी आत्मा के संग संसार के किसी भी पदार्थ के न जाने की चर्चा की है। आपने बार-बार हमें यह भी समझाया है कि प्रभु से मिलने और आवागमन के चक्र से छुटकारा पाने का एकमात्र साधन नाम भक्ति है, शब्द का अभ्यास है। इसलिए हमें उसकी ओर शीघ्र ध्यान देना चाहिए।

शरीर की नश्वरता

जीवन में यदि कुछ निश्चित है तो केवल मृत्यु। पलटू साहिब ने बार-बार हमें चेतावनी दी है कि मृत्यु किसी भी पल आकर तुम्हें दबोच सकती है। तुम्हारी पलकों की हर झपक के साथ तुम्हारी मृत्यु का दिन निकट आ रहा है। हमारे नश्वर शरीर की तुलना कच्ची मिट्टी के घड़े, पानी में पड़े बतासे, धुएँ के खंभे और रेत की दीवार आदि से करते हुए आपने कहा है:

आतसबाजी यह तन हो, हाथे काल के आग।
पलटूदास उड़ि जैबहु हो, जब देइहि दाग॥*[110]

जैसे आतिशबाज़ी में जब पलीते को आग देते हैं तो सब उड़कर राख हो जाता है। यही हाल मौत के समय हमारे तन का होता है।

जैसे गीता में कहा गया है—*जातस्य हि ध्रुवो मृत्यु:*[111] कि जन्म लेनेवाले हर किसी की मृत्यु निश्चित है, वैसे ही पलटू साहिब के भी वचन हैं—*जो जनमा सो मुआ...*[112]।

* **देइहि दाग**=दाग देना, आग लगा देगा

आपने यह समझाते हुए कि सबकी मृत्यु निश्चित है हमें सुमिरन द्वारा मौत से पहले जीते-जी मरने का अभ्यास करने की प्रेरणा दी है:

राम कृस्न परसराम ने मरना किया कबूल॥
मरना किया कबूल मरै से बचै न कोई।
दसचौदह औतार काल के बसि में होई॥*
सुर नर मुनि सब देव मुए सब मौत अपानी।
देव पितर ससि भानु पवन नभ धरती पानी॥
राजा रंक फकीर सूर औ बीर करारी†।
साधु सती औ अगिन मुए जिन सब को जारी॥
पलटू आगे मरि रहौ आखिर मरना मूल।
राम कृस्न परसराम ने मरना किया कबूल॥[113]

अर्थात् देवी-देवता भी मौत से नहीं बच सकते। बड़े-बड़े पराक्रमी योद्धा, राजा और भिखारी, ऋषि-मुनि, साधु-संत और यहाँ तक कि भगवान विष्णु के सब अवतार भी काल के गाल में चले गए। प्रलयकाल में तो सब कुछ जला डालनेवाली अग्नि समेत पाँच तत्त्वों का अस्तित्व ही मिट जाता है।

केवल सांसारिक सुख-आराम में ही मग्न रहनेवाले लोगों को चेतावनी देते हुए पलटू साहिब ने कहा है कि तुम अपने को अमर समझते हो और यह भूल गए हो कि मृत्यु किसी भी क्षण एक हिंसक पशु की तरह तुम पर झपट सकती है:

जानता अमर हूँ मरूँगा अब नहीं,
बाघ की रौस‡ जा काल हूला§।[114]

* **दसचौदह**=चौबीस † **करारी**=उत्कट ‡ **रौस**=तरह
§ **हूला**=किसी के शरीर को हथियार की तेज़ नोक से भोंकने की क्रिया

पलटू साहिब ने पैसा कमाने के लिए कर्ज़दार ग़रीबों का शोषण करनेवाले साहूकारों को सख़्त फटकार देते हुए कहा है कि अपने परिवार को सुख देने के चक्कर में तुम अपना परलोक बिगाड़ रहे हो। ग़रीबों को ब्याज पर ऋण देते हो और उसे उतारने के लिए वे जो चीज़ बदले में तुम्हें देने आते हैं, उसका उचित से कम दाम लगाते हो। ऐसा नीच काम करते हुए तुम्हारा अपनी मुक्ति की बातें करना अपना मज़ाक उड़वाना ही तो है। जब मौत हर समय सिर पर खड़ी है तो सावधान क्यों नहीं होते?

आज काल में कूच मुरख नहिं तोकँह सूझै॥
कौड़ी कौड़ी जोरि ब्याज दे करते बट्टा।*
सुखी रहै परिवार मुक्ति में होवत ठट्ठा॥[115]

वृद्धों को विशेष रूप से सावधान करते हुए आपने कहा है कि तुम्हारा जीर्ण शरीर कभी भी नष्ट हो सकता है:

चोला भया पुराना आज फटै की काल॥[116]

पलटू साहिब ने बार-बार हमारा ध्यान इस ओर भी आकृष्ट किया है कि संसार के सब रिश्ते-नाते झूठे हैं। माता-पिता, भाई-बहन, पत्नी, बेटे आदि सभी का हमारे लिए अपनापन उनके स्वार्थ पर आधारित है। किसी के मरने पर सब संबंधी अपने स्वार्थ के लिए ही रोते हैं—*अपने स्वारथ को सब रोवैं*[117]। आपने हमें समझाया है कि हमारे मरने पर संसार की कोई भी वस्तु हमारे साथ नहीं जाएगी। कठोर परिश्रम से बटोरी गई धनराशि, महल और अटारियाँ आदि सब यहीं रह जाएँगे। हम जैसे ख़ाली हाथ संसार में आए थे, वैसे ही यहाँ से चले जाएँगे:

कौड़ी कौड़ी लाख बटोरेहु, नाहक किहेहु बेगारी।
तहु चढ़ि चलेहु चारि के काँधे, दूनों हाथ पसारी॥...
तुहरे संग कोऊ नहिं जाई, कोठा महल अटारी।[118]

* बट्टा=किसी चीज़ के पूरे दाम में होनेवाली कमी

प्रभु-प्राप्ति की ओर ध्यान देने की प्रेरणा

पलटू साहिब हमें शरीर, सांसारिक संबंधों तथा धन-संपत्ति की असारता दिखाते हुए नाम भक्ति करके जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति पाने तथा प्रभु से मिलने की प्रेरणा देते भी थकते नहीं। थकें भी कैसे? परमात्मा संतों को संसार में भेजता ही इस काम के लिए है। वे जीवों पर यह परम उपकार करने के लिए ही यहाँ आते हैं। वे मनुष्य का ध्यान संसार की ओर से हटाकर प्रभु की सच्ची भक्ति में लगाने की पूरी कोशिश करते हैं। आप ज़ोर देकर कहते हैं कि लोकलाज छोड़ दो। अपने वर्ण, जाति और कुल की ज़रा भी परवाह न करो। मन में दृढ़ संकल्प लेकर नाम की कमाई करो, क्योंकि मृत्यु के बाद नाम ही आत्मा के साथ जाता है, उसके काम आता है। उसकी आलोचना करनेवाले उसके वर्ण, जाति और कुल के लोग उसके साथ नहीं जाते:

तो कहँ कोऊ कछु कहै कीजै अपनो काम॥
कीजै अपनो काम जगत को भूकन दीजै।
जाति बरन कुल खोय संतन को मारग लीजै॥...
पलटू तनिक न छोड़िहौ जिउ के संगै नाम।[119]

एक अन्य जगह आपने कहा है कि नाम भक्ति से ही आत्मा भवसागर को पार करती है। आवागमन के चक्कर से मनुष्य का छुटकारा तभी होता है जब वह सांसारिक सुखों के प्रति आकर्षण को त्याग दे और उसका मन इधर-उधर भटकता न रहे। उसे चाहिए कि वह मन को सब ओर से हटाकर हरिभजन में लगाए ताकि मरते समय किसी इच्छा का बीज मन में दबा न रह जाए जो उसे फिर संसार में ले आए:

सदा रहै निर्वृत्त चित्त ना अंतै जावै।
मन को लेवै फेरि भजन में जाय लगावै॥...
बीज बासना को जरै तब छूटै संसार॥[120]

नाम ही आत्मा को परमधाम में पहुँचाकर परमात्मा से मिलाता है। इस संबंध में पलटू साहिब हमें समझाते हैं कि मंत्रों और स्तोत्रों का जाप, तपस्या, तीर्थयात्रा और व्रत आदि को आमतौर पर योगियों का आचरण माना जाता है, परंतु सच्ची योग-साधना केवल नाम भक्ति है, सुरत-शब्द योग का अभ्यास है। इस साधना के पूर्ण होने पर ही मनुष्य असली योगी बनता है। नाम की कमाई करके ही आत्मा भवसागर को पार करती है और परमात्मा से मिलती है:

जप तप तीरथ बर्त है, जोगी जोग अचार।
पलटू नाम भजे बिना, कोउ न उतरै पार॥[121]

संतोष का महत्त्व

संत संतोष की मूर्ति होते हैं। वे संतोष को अपनी रहनी का एक अंग बनाए रखते हैं और जिज्ञासुओं को भी संतोष के साथ जीवन बिताने की शिक्षा देते हैं। पलटू साहिब ने भी अपनी वाणी में संतोष पर बहुत बल दिया है।

हक़-हलाल की कमाई पर संतोषपूर्वक जीवन निर्वाह करने की रीति संतों में सदा से चली आई है। सब संतों ने दृढ़ता से उसका पालन किया है। कबीर साहिब जीवन भर जुलाहे का काम करते रहे और गुरु नानक साहिब खेतीबाड़ी का। गुरु रविदास जी ने सदा जूतियाँ गाँठने का धंधा अपनाए रखा, जबकि राजा पीपा और मेवाड़ की रानी मीराबाई दोनों उनके शिष्य थे। गुरु नानक साहिब ने कहा है कि जो इनसान गुरु कहलाता हुआ दूसरों के आगे हाथ फैलाता है वह सच्चा गुरु नहीं है, उसके चरणों में माथा नहीं टेकना चाहिए:

गुर पीर सदाए मंगण जाए॥ ता कै मूल न लगीऐ पाए॥[122]

परमार्थी के लिए संतोष को अपनी रहनी का अंग बना लेना इसलिए आवश्यक है कि लोभ से मन बाहर भटकता है, संसार में फैलता है और इसके पदार्थों के पीछे भागता है। यदि हम संतोष धारण करते हैं तो मन

का बाहर भटकना कम होता है जिससे उसे अंतर्मुख होने में सहायता मिलती है। पलटू साहिब इस तथ्य से परिचित हैं। इसलिए उन्होंने संतोष को भक्ति का मूल बताया और कहा कि परमार्थी को मन में संतोष अवश्य धारण करना चाहिए। यह बताते हुए कि प्रभु-प्राप्ति के इच्छुक जीव की जीवन पद्धति कैसी होनी चाहिए उन्होंने कहा है:

एक भरोसा करै नहीं काहू से माँगै।
मन में करै सँतोष तनिक न कबहूँ लागै॥[123]

निन्दक है परस्वारथी

दूसरों की निंदा करना मनुष्य का स्वभाव है। वह अपनी निंदा तो सहन नहीं करता क्योंकि इससे उसके अहं को ठेस पहुँचती है, परंतु दूसरों की निंदा करने में उसे प्रसन्नता का अनुभव होता है क्योंकि इससे वह अपनी दृष्टि में दूसरों से अच्छा सिद्ध होता है। इस तरह उसके अहं की तुष्टि होती है। पर संत निंदा को बहुत बड़ा दोष बताते हैं क्योंकि निंदा करने से मनुष्य का अपना ही अहित होता है। जिसकी वह निंदा करता है, उसका तो भला हो जाता है। इसलिए पलटू साहिब ने निंदक को दुष्ट कहने के साथ-साथ परस्वार्थी अर्थात् परोपकारी भी कहा है। आपने संतों का उदाहरण देकर समझाया है कि मनुष्य को निंदकों से बिलकुल नहीं डरना चाहिए। उसे तो निंदकों का शुक्रिया करना चाहिए क्योंकि वे उसका बड़ा उपकार करते हैं, अपना नुकसान करके हमारी बुराइयों को दूर करते हैं:

निन्दक रहै जो कुसल से हम को जोखों नाहिं॥*
हम को जोखों नाहिं गाँठि कौ साबुन लावै।
खरचै अपनो दाम हमारी मैल छुड़ावै॥[124]

---

* **जोखों**=ख़तरा

इन पंक्तियों में हमें अपनी निंदा सुनकर दु:खी न होने और दूसरों की निंदा करने से बचने की भी सलाह दी गई है।

पलटू साहिब के अनुसार निंदक संतों की प्रसिद्धि करनेवाले ढिंढोरची होते हैं। वे संतों की निंदा करके उन्हें उन लोगों में भी प्रसिद्ध कर देते हैं जिन्होंने उनका नाम तक नहीं सुना होता जिससे और अधिक लोग उनका उपदेश सुनने आने लगते हैं:

संत रतन की कोठरी कुंजी दुष्टन हाथ॥...
संत भये परसिद्ध... ॥[125]

आपने बहुत बल देकर हमें यह भी समझाया है कि संतों की निंदा भूलकर भी नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उनकी निंदा करने से मनुष्य को बहुत भारी नुकसान होता है और उसको फिर निचली योनि में जाना पड़ता है:

संतन की निंद न कीजिये जी, संतन की निंद में नाहिं भला।
चौरासी भोग वह भोगि आया, चौरासी भोगन फेरि चला॥[126]

पलटू साहिब ने यह भी फ़रमाया है कि संतों की निंदा तो सुननी भी नहीं चाहिए; जहाँ किसी संत की निंदा हो रही हो, वहाँ ठहरना ही नहीं चाहिए:

संत की निन्दा सुनि दूरि त्यागै।[127]

जीव-हत्या और मांसाहार

मांसाहार को सभी संत बहुत बड़ा पाप बताते हैं क्योंकि इसके लिए पशु-पक्षियों की हत्या करनी पड़ती है। परमात्मा हर पशु-पक्षी में, हर जीव में विद्यमान है। सब जीव प्रभु के ही जीव हैं, उसी के रचे हुए हैं। इसलिए उनमें से किसी को भी मारना कठोर दंड को निमंत्रण देना है। पलटू साहिब ने बड़े प्रभावशाली शब्दों में हिंदू और मुसलमान दोनों

को यह समझाया है कि जीव-हत्या नहीं करनी चाहिए और मांसाहार से परहेज़ करना चाहिए।

मुसलमान धीरे-धीरे छुरी चलाकर जानवर का गला काटते हैं जिसे वे हलाल करना कहते हैं जबकि हिंदुओं में एक ही प्रहार से उसे मार डालने की प्रथा है, जिसे झटका मारना कहते हैं। पलटू साहिब ने दोनों को एक समान पापी बताया है। उन्होंने दोनों को चेतावनी दी है कि तीर्थयात्रा करने तथा मंदिरों और मस्जिदों में जाकर ज़मीन पर माथा रगड़ने से जीव-हत्या का पाप नहीं धोया जा सकता।

आपने हिंदुओं में प्रचलित पशु बलि की धार्मिक प्रथा पर करारी चोट करते हुए कहा है कि हर जीव में परमात्मा है। इसलिए किसी जीव को मारना ख़ुद परमात्मा की ही हत्या करना है। भेड़-बकरी को बेरहमी से मारकर देवी-देवता को उसकी बलि चढ़ाने से किसी का कल्याण नहीं हो सकता:

सब में है भगवान और ना दूजा कोई।
तेकर यह गति करै भला कहवाँ से होई॥[128]

मुसलमान जिज्ञासुओं से पलटू साहिब ने बड़े ज़ोरदार शब्दों में कहा है कि जो बेरहमी के साथ जानवर को मारकर उसका गोश्त अर्थात् मांस खाता है, वह निम्न है, नास्तिक है:

पलटू जो बेदरदी सो काफिर मरदूद।*[129]

उन्होंने हदीस में दर्ज हज़रत मुहम्मद साहिब के वचनों का उल्लेख करते हुए कहा है कि जीव-हत्या करनेवाले को धर्म के रीति-रिवाजों का पालन करके स्वर्ग जाने की आशा नहीं रखनी चाहिए:

अरे हाँ पलटू जाया चाहै भिस्त† खून गरदन पर लेता॥[130]

---

* **मरदूद**=तिरस्कृत, निम्न † **भिस्त**=स्वर्ग

3

भाषा, शैली तथा काव्य-कला

पलटू साहिब निस्संदेह एक महान संत कवि हुए हैं। कवित्व की दृष्टि से आपकी वाणी को कबीर साहिब, दादू साहिब, संत तुकाराम, साईं बुल्लेशाह, हज़रत सुलतान बाहू आदि की वाणियों की श्रेणी में रखा जा सकता है। इसमें उन जैसी आध्यात्मिकता तो है ही, साथ ही वह काव्य सौंदर्य भी है जो कि अनपढ़ लोगों तथा शिक्षित वर्ग दोनों को प्रभावित करता है। संत केवल लोगों के मनोरंजन के लिए या भाषा पर अपना अधिकार दिखाने के लिए वाणी नहीं लिखते। उनका उद्देश्य लोगों का झुकाव संसार की ओर से हटाकर परमार्थ की ओर करना होता है। उनकी वाणी बहुत प्रभावशाली होने का कारण उसका कलात्मक सौंदर्य नहीं बल्कि उनका उदार, पावन तथा महान व्यक्तित्व होता है जो वाणी में झलकता है। उनकी वाणी पद्य, गद्य या प्रवचन किसी भी रूप में क्यों न हो, उसमें भावों की सुंदरता सोने में सुहागे का काम करती है।

पलटू साहिब की भाषा में अवधी शब्दों का प्रयोग अधिक है। कहीं-कहीं अयोध्या और उसके आसपास की स्थानीय बोली का प्रयोग भी देखने को मिलता है। अवध यानी अयोध्या तथा उसके चारों ओर के काफ़ी बड़े प्रदेश की जनता उनके प्रति श्रद्धा रखती थी। पलटू साहिब के शिष्यों तथा श्रद्धालुओं में हिंदुओं के साथ-साथ बड़ी संख्या में मुसलमान भी थे, इसलिए आपने वहाँ की आम बोलचाल में प्रचलित फ़ारसी तथा अरबी के शब्दों का, उनके शुद्ध या परिवर्तित रूप में ख़ूब प्रयोग किया है। कहीं-कहीं इन भाषाओं में ऐसे शब्दों का प्रयोग हुआ है जिनके बारे में यह कहना तो कठिन है कि अवध प्रदेश की आम जनता उनका अर्थ जानती होगी,

परंतु ऐसे शब्दों के प्रयोग से शिक्षित मुस्लिम वर्ग अवश्य प्रभावित हुआ होगा, जिससे और अधिक मुसलमान पलटू साहिब की शिक्षा की ओर आकर्षित हुए होंगे। उदाहरण के लिए—नादिर (अरबी), मनी (फ़ारसी), मेराज (अरबी-मिअराज), लामकान (अरबी), किनात (अरबी-किनायत), कुसाद (फ़ारसी-कुशादा), लहम (अरबी-लह्म) और फ़र्मूद (फ़ारसी-फ़र्मूदः) आदि शब्द हैं। साधारण पाठक अवधी, अरबी तथा फ़ारसी का ज्ञान न होने तथा विचारों की गहराई व अभिव्यक्ति के अनूठेपन के कारण आपकी वाणी को समझने में कभी-कभी कठिनाई अनुभव करता है।

अच्छी तरह समझाने के लिए एक ही बात को कई ढंग से कहना, गहरे आध्यात्मिक रहस्यों को जनजीवन पर आधारित रूपक, उपमाओं तथा समता दिखानेवाले अन्य अलंकारों द्वारा प्रकट करना और निजी अनुभव से सत्य को स्पष्ट शब्दों में निडरता से प्रस्तुत करना आदि पलटू साहिब की वाणी के विशेष गुण हैं। आपकी भाषा में ऐसी सहज गति है, ऐसी लय है कि पाठक उसके प्रवाह में बहता चला जाता है। आपकी कई पंक्तियाँ इतनी सुंदर हैं कि एकदम हृदय को छू लेती हैं और अनायास ही स्मृति-पटल पर अंकित हो जाती हैं। उदाहरण के लिए नीचे कुछ पंक्तियाँ देखी जा सकती हैं:

धुबिया फिर मर जायगा चादर लीजै धोय॥[1]

नाव मिली केवट नहीं कैसे उतरै पार॥[2]

पानी बीच बतासा साधो तन का यही तमासा है॥[3]

मन हस्ती मन लोमड़ी, मनै काग मन सेर।[4]

उपमा तथा रूपक ये दोनों अलंकार पलटू साहिब की वाणी में सहज रूप से पाए जाते हैं और अपनी मौलिकता से वे पाठकों को प्रभावित करते हैं। अकसर रूपक की सुंदरता एक या दो पंक्तियों में ही सीमित न रहकर पूरे पद में पाई जाती है। अपनी बात को समझाने या पाठक के मन में बिठाने के लिए पलटू साहिब ने कई बार एक ही पद में अनेक

उपमाओं अथवा रूपकों का प्रयोग किया है। एक साथ अनेक उपमाओं के प्रयोग का उदाहरण निम्नलिखित पद में देख सकते हैं जिसमें उन्होंने मनुष्य जीवन की क्षणिकता व्यक्त की है:

धूआँ का धौरेहरा ज्यों बालू की भीत॥*
ज्यों बालू की भीत ताहि को कौन भरोसा।
ज्यों पक्का फल डारि गिरत से लगै न दोसा॥
कच्चे घड़े ज्यों नीर पानी के बीच बतासा।
दारू भीतर अगिनि जिवन की ऐसी आसा॥
पलटू नर तन जात है घास के ऊपर सीत।
धूआँ का धौरेहरा ज्यों बालू की भीत॥[5]

कभी-कभी एक पद में दी गई कोई उपमा बाद में किसी अन्य पद में भी दोहराई गई है। उदाहरण के लिए ये पंक्तियाँ देखिए:

संत सासना सहत हैं जैसे सहत कपास॥[6]

अपनी ओर निहार तुझे क्या परी परारी।[7]

कितनौ नाचौ नाच नाक बिन नकटी बाई।[8]

मिलनसार मुसकान बचन मदु बोली मीठी।
पुलकित सीतल गात सुभग रतनारी दीठी॥[9]

अंतिम उदाहरण जिस पद में से लिया गया है, उसका विषय संतों के हृदय की कोमलता है। इसलिए इन दो पंक्तियों में म, स, न और त जैसे कोमल ध्वनि वाले वर्णों का बार-बार आना उनके विषय के अनुकूल होने के कारण बहुत सुहाता है।

* धौरेहरा=मीनार

पलटू साहिब की उपलब्ध वाणी कुंडलियाँ, रेख़ते, झूलने, शब्द, अरिल्ल तथा साखियाँ अर्थात् दोहे के रूप में है। सात कबित्त और दो सवैये भी वाणी में मिले हैं। आमतौर पर पद छोटे हैं, लेकिन ककहरा स्वाभाविक तौर पर लंबा है।

उपलब्ध शब्दों में बारहमासा और दो सोहर भी हैं। सोहर पुत्र जन्म के अवसर पर गाया जानेवाला एक मंगलगीत है। बारहमासा उन पदों या गीतों को कहा जाता है जिसमें बारह महीनों को आधार बनाकर प्रेम तथा विरह का वर्णन किया गया हो। अन्य संतों की तरह पलटू साहिब के दोनों सोहर और बारहमासा में भी आध्यात्मिक उपदेश छिपा है।

कुंडलियों में कुछ उलटबाँसियाँ भी हैं। ककहरा अरिल्लों के रूप में है। दो उलटबाँसियाँ और ककहरा प्रस्तुत पुस्तक के अंतिम अध्याय में दिए जा रहे हैं और इन दोनों का परिचय भी वहीं दे दिया गया है।

पलटू साहिब की कुल मिलाकर दो सौ अड़सठ कुंडलियाँ मिली हैं। इनमें से अधिकांश में नौ-नौ पंक्तियाँ हैं, जबकि कुछ सात-सात या ग्यारह-ग्यारह पंक्तियों की हैं। हर कुंडली की पहली पंक्ति का दूसरा आधा भाग दूसरी पंक्ति के पहले आधे भाग के रूप में दोहराया गया है और पहली पंक्ति ही कुंडली की अंतिम पंक्ति भी है। हर कुंडली में एक ही भाव व्यक्त किया गया है जिसे पाठकों के मन में बिठाने के लिए कई साधन, जैसे उपमाएँ और रूपक तथा ऐतिहासिक और पौराणिक उदाहरण आदि अपनाए गए हैं। प्रथम पंक्ति की पहले आंशिक और अंत में पूर्ण आवृत्ति से कुंडली में कही गई बात की हृदय पर बहुत गहरी छाप पड़ जाती है। यों लगता है जैसे नदी के जल में एक लहर उठी और अपनी लपेट में आई वस्तु को कुछ दूर तक अपने साथ बहाकर पुन: जल में समा गई। उचित विधि से गाई जाने पर ये श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर देती हैं। ये बहुत लोकप्रिय हुई हैं। निस्संदेह यह वाणी हिंदी के भक्ति-साहित्य को पलटू साहिब की बहुत बड़ी देन हैं।

शब्दों में पंक्तियों की संख्या निश्चित नहीं है। रेख़ते, झूलने तथा कबित्तों में आमतौर पर आठ-आठ पंक्तियाँ हैं। प्रत्येक सवैया भी आठ

पंक्तियों का है। अरिल्लों में चार-चार पंक्तियाँ हैं। प्रत्येक अरिल्ल की अंतिम पंक्ति 'अरे हाँ पलटू' इन शब्दों से आरंभ होती है जो कि पाठक को विशेष रूप से प्रभावित करती है।

पलटू साहिब की वाणी *सत्यं शिवं सुन्दरं* की कसौटी पर पूरी उतरती है, क्योंकि उसमें सत्य अपने शिव अर्थात् कल्याणकारी तथा सुंदर रूप में प्रकट हुआ है। इस वाणी का हर पद अनमोल रत्न है। वास्तव में हर पद में अध्यात्म-ज्ञान का सागर भरा हुआ है। इसका हम जितना अधिक अध्ययन करते हैं, उतना ही अधिक विषय की गहराई में उतरते चले जाते हैं। सारी वाणी मधुर, रसपूर्ण तथा प्रेरणादायक है। अढ़ाई सौ वर्ष के बाद भी इसका संदेश पहले की ही तरह नया है। आज भी यह पहले की ही तरह मनभावन लगती है। इसके कुछ चुने हुए अंश अलग-अलग शीर्षकों के अंतर्गत पुस्तक के दूसरे भाग में दिए जा रहे हैं ताकि पाठक इसका रसपान करते हुए इससे प्रेरणा प्राप्त कर सकें।

द्वितीय भाग
वाणी

4

परमात्मा

परमात्मा सर्वव्यापक है। वह सृष्टि के कण-कण में, हर वस्तु और हर प्राणी में विद्यमान है। समस्त संसार वास्तव में उसी का दृश्यमान रूप है, उससे भिन्न कोई चीज़ नहीं है क्योंकि यह संसार उसी से उत्पन्न हुआ है। देवी-देवता भी उसी के विभिन्न रूप हैं। आत्मा भी उसी की अंश है, उसी से निकली है, इसलिए वास्तव में उससे भिन्न नहीं है। उसने अनेक रूप धारण कर रखे हैं। वही आत्मा है और वही परमात्मा, वही जड़ है तथा वही चेतन। वही एकमात्र सत्य है, इस तथ्य का ज्ञान मनुष्य को जीवित सतगुरु की दया से दिव्य दृष्टि मिलने पर ही होता है।

अपने अंदर रहनेवाले परमात्मा को संसार में यहाँ-वहाँ ढूँढ़ना हमारी बहुत बड़ी भूल है। वह तो हर शरीर में विद्यमान है और उसे मनुष्य अपने अंदर ही पा सकता है। उसकी प्राप्ति सतगुरु के मार्गदर्शन में ही हो सकती है। जब हमें अपने अंदर परमात्मा का दर्शन हो जाता है तो परमात्मा हमें सब जगह, सब प्राणियों और सब पदार्थों में दिखाई देने लगता है। परमात्मा को पा लेने पर आत्मा उसमें समाकर उसी का रूप हो जाती है।

सृष्टि के असीम विस्तार का वर्णन करते हुए पलटू साहिब हमें बताते हैं कि इसका रचयिता परमात्मा ही इसका एकमात्र स्वामी है। अनगिनत खंडों में, भिन्न-भिन्न ब्रह्मांडों में अपना-अपना काम कर रहे असंख्य देवी-देवता उसी के आज्ञाकारी सेवक हैं।

नजर मँहै सब की पड़ै कोऊ देखै नाहिं॥
कोऊ देखै नाहिं सीस पै सब के छाजै।*
पूरन ब्रह्म अखंड सकल घट आपु बिराजै॥
दिवसै फिरै भुलान रहै तिरगुन महँ माता।
देखि देखि दै छाड़ि पंडित पहँ पूजन जाता॥
भूला सब संसार भेद नहिं जानै वा की।
देखत है इक संत ज्ञान की दीठी जा की॥
पलटू खाली कहूँ नहिं परगट है जग माहिं।
नजर मँहै सब की पड़ै कोऊ देखै नाहिं॥[1]

पलटू साहिब कहते हैं कि प्रभु सृष्टि के कण-कण में समाया हुआ है। वह सब जगह है और उसका साया सबके सिर पर है, पर वह किसी को दिखाई नहीं देता। वह पूर्ण प्रभु अखंड रूप में सबके अंदर विराजमान है, परंतु तीन गुणों वाले इस संसार के नशे में मस्त लोग मनुष्य जन्म पाकर भी भ्रम में पड़े इधर-उधर भटक रहे हैं। उस सर्वव्यापक परमात्मा को लोग पहचान नहीं पाते, इसलिए वे पंडितों और पुजारियों के पास उसी की पूजा करवाने जाते हैं। लोग उसका रहस्य नहीं जानते, इसलिए भ्रम में पड़े हुए हैं। वह केवल संतों को दिखाई देता है क्योंकि उनके पास ज्ञान की दृष्टि होती है, उनकी आंतरिक आँख खुली होती है। कोई भी स्थान प्रभु से ख़ाली नहीं, वह तो संसार में सब जगह प्रकट है पर कोई भी उसे देख नहीं पाता, पहचान नहीं पाता।

जल से उठत तरंग है जल ही माहिं समाय॥
जल ही माहिं समाय सोई हरि सोई माया।
अरुझा बेद पुरान नहीं काहू सुरझाया॥

* छाजै=सुशोभित

फूल मँहै ज्यों बास काठ में आग छिपानी।
दूध मँहै घिउ रहै नीर घट माहिं लुकानी॥
जो निर्गुन सो सर्गुन और न दूजा कोई।
दूजा जो कोइ कहै ताहि को पातक होई॥
पलटू जीव और ब्रह्म से भेद नहीं अलगाय।
जल से उठत तरंग है जल ही माहिं समाय॥[2]

जैसे जल में से उठी लहर जल से भिन्न नहीं होती और फिर उसी में समा जाती है, उसी तरह यह मायामय सृष्टि भी अपने स्रोत परमात्मा से भिन्न नहीं है और आख़िरकार उसी में समा जाएगी। जैसे फूल में सुगंध, दूध में घी, काठ में आग और घड़े में पानी छिपा होता है, वैसे ही तीन गुणों वाली सृष्टि में निर्गुण परमात्मा छिपा हुआ है। वास्तव में निर्गुण परमात्मा ने ही मायामय सगुण सृष्टि का रूप धारण किया हुआ है। वे एक दूसरे से भिन्न नहीं हैं। दोनों को एक-दूसरे से भिन्न बताना पाप है। इस रहस्य को वेद, पुराण आदि धर्मग्रंथ भी भलीभाँति नहीं सुलझा पाए हैं। जीवात्मा भी परमात्मा से अलग नहीं है; वह परमात्मा से निकली है, परमात्मा की ही अंश है और उसे परमात्मा में ही समाना है, जैसे जल में से उठी तरंग उसी में समा जाती है।

पलटू साहिब के कहने का भाव यह है कि परमात्मा सर्वव्यापक है। वह हर कीड़े-पतंगे में ही नहीं, हर पत्थर में भी मौजूद है। वह पत्ते-पत्ते में ही नहीं, रेत और मिट्टी के कण-कण में भी है। सारी सृष्टि उसी का प्रकट रूप है। वही सब कुछ है। वही जड़ है और वही चेतन। वेदांत का अद्वैतवाद भी यही कहता है और सूफ़ी संतों ने भी वहदत-उल-वुजूद (अस्तित्व की एकता अर्थात् कहीं भी परमात्मा के सिवा और कुछ नहीं है) सिद्धांत के माध्यम से हमें यही समझाया है।

जगन्नाथ जगदीस, जग में ब्यापि रहा॥ टेक॥
चारि खानि में लख चौरासी, और न कोई दूजा।

आपुइ ठाकुर आपुइ सेवक, करत आपनी पूजा॥
आपुइ दाता आपुइ मँगता, आपुइ जोगी भोगी।
आपुइ बिस्वा आपुइ बिसनी, आपु बैद अप रोगी॥
ब्रह्मा बिस्नु महेस आपुइ, सुर नर मुनि होइ आया।
आपुहि ब्रह्म निरूपम गावै, आपुहि प्रेरत माया॥
आपुइ कारन आपुइ कारज, बिस्वरूप दरसाया।
पलटूदास दृष्टि तब आवै, संत करै जब दाया॥[3]

पलटू साहिब हमें बताते हैं कि संसार का स्वामी परमात्मा समस्त संसार में व्याप्त है। वह चारों खानियों और चौरासी लाख योनियों के सभी प्राणियों में मौजूद है। उसके अलावा उनमें और कोई नहीं है। वह आप ही स्वामी है तथा आप ही सेवक। पूजा करनेवाला बनकर वह ख़ुद ही अपनी पूजा करता है। वह आप ही देनेवाला है और आप ही माँगनेवाला, आप ही भोग-विलास से दूर रहनेवाला योगी है और आप ही भोग-विलास में डूबा हुआ भोगी, आप ही वेश्या है और आप ही वेश्या के पास जानेवाला विषयी, आप ही बीमारी से छुटकारा दिलानेवाला वैद्य है और आप ही बीमारी का मारा रोगी। आप ही वह ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव है और आप ही वह अन्य देवी-देवताओं, मुनियों तथा साधारण मनुष्यों का रूप धारण करता है। आप ही वह साधु-संतों का रूप धारण करके अपनी महिमा का गान करता हुआ कहता है कि परमात्मा के तुल्य कोई नहीं और आप ही उसने अपनी माया को मनुष्य को भ्रम में डाले रखने के काम में लगा रखा है। वह आप ही कारण है और आप ही कार्य यानी उसी से सृष्टि की उत्पत्ति हुई है और वह स्वयं ही सृष्टि है। संसार उसी का प्रकट रूप है। परमात्मा सर्वव्यापक है, वही सब कुछ है। पर इस सत्य को प्रत्यक्ष देखनेवाली दिव्य दृष्टि मनुष्य को तब ही मिलती है जब कोई वक़्त का संत-सतगुरु उस पर दया करता है।

पूरब में राम है पच्छिम खुदाय है,
उत्तर औ दक्खिन कहो कौन रहता।
साहिब वह कहाँ है कहाँ फिर नहीं है,
हिन्दू और तुरुक तोफान करता॥
हिन्दू औ तुरुक मिलि परे हैं खैंचि में,
आपनी बर्ग दोउ दीन बहता।
दास पलटू कहै साहिब सब में रहै,
जुदा ना तनिक मैं साच कहता॥[4]

हिंदुओं और मुसलमानों के आपसी विरोध पर दुःख प्रकट करते हुए पलटू साहिब दोनों को समझाते हैं कि परमात्मा तो एक ही है और वह सब जगह है, सारी सृष्टि में व्याप्त है। यह अलग बात है कि पूर्व में स्थित भारत में उसे राम का नाम मिल गया है और पश्चिम में स्थित फ़ारस में उसे ख़ुदा कहा गया है। इस आधार पर जो यह समझते हैं कि राम केवल पूर्व में है और ख़ुदा पश्चिम में, उनसे मेरा यह सवाल है कि फिर उत्तर और दक्षिण में कौन रहता है? वह कहाँ है और कहाँ नहीं है, इस बात को लेकर दोनों धर्मों के लोग भेड़चाल में पड़े व्यर्थ ही आपस में खींचतान करते हैं, अपने-अपने धर्म को अच्छा बताते हैं और एक दूसरे से लड़ते-झगड़ते हैं। सच तो यह है कि सबका परमात्मा एक ही है। वह सब मनुष्यों में है, हिंदू में भी है और मुसलमान में भी है और दोनों में से किसी से अलग बिलकुल नहीं है।

साहिब साहिब क्या करै साहिब तेरे पास॥
साहिब तेरे पास याद करु होवै हाजिर।
अंदर धसि कै देखु मिलेगा साहिब नादिर॥*

* नादिर=अद्भुत

मान मनी हो फना नूर तब नजर में आवै।
बुरका डारै टारि खुदा बाखुद दिखरावै॥*
रूह करै मेराज† कुफर‡ का खोलि कुलाबा§।
तीसौ रोजा रहै अंदर में सात रिकाबा¶॥
*लामकान** में रब्ब को पावै पलटूदास।*
साहिब साहिब क्या करै साहिब तेरे पास॥[5]

परमात्मा से मिलाप के लिए मनुष्य को इधर-उधर भटकते देखकर पलटू साहिब उसे समझाते हैं कि कुल-मालिक परमात्मा को, तू बाहर क्यों ढूँढ़ता फिरता है? वह तो तेरे पास ही है, तेरे अंदर ही है। अगर तू उसे याद करेगा, उसके नाम का सुमिरन करेगा तो वह तेरे सामने ख़ुद ही हाज़िर हो जाएगा। तू अपने अंदर डुबकी लगाकर तो देख, उस परम अद्‌भुत परमात्मा को तू वहीं पा लेगा। अंतर में डुबकी लगाने से अभिमान और मोह का नाश हो जाता है और परमात्मा का प्रकाश दिखाई देता है। फिर जब आत्मा अपने सामने से अहं का परदा हटा देती है तो परमात्मा उसे ख़ुद ही दर्शन देता है। नाम का अभ्यास करके जब आत्मा भृकुटी मध्य में पहुँचकर वहाँ लगे वज्र कपाट को खोलती है तो अंदर चढ़ाई चढ़ने से वह निर्मल हो जाती है। रमज़ान के महीने में तीस दिन रोज़ा रखने का फल बिना रोज़ा रखे उसे मिल जाता है। इतना ही नहीं, आत्मा अंदर के सात आसमान यानी सात मंडलों को पार करके सबसे ऊँचे रूहानी मंडल में पहुँचकर परमात्मा को पा लेती है।

---

* **बाखुद**=अपने आप † **मेराज**=रूहानी चढ़ाई
‡ **कुफर**=नास्तिकता, हठ (कुफर का कुलाबा खोलने से अभिप्राय तीसरे तिल का वज्र कपाट खुलने से है।) § **कुलाबा**=साँकल या ज़ंजीर ¶ **रिकाबा**=आसमान
** **लामकान**=सबसे ऊँचे रूहानी मंडल का नाम

दिल में आवै है नजर उस मालिक का नूर॥*
उस मालिक का नूर कहाँ को ढूँढ़न जावै।
सब में पूर समान† दरस घर बैठे पावै॥
धरती नभ जल पवन तेही का सकल पसारा।
छुटै भरम की गाँठि सकल घट ठाकुरद्वारा॥
तिल भरि नाहिं कहीं जहाँ नहिं सिरजनहारा।
वोही आवै नजर फुरा बिस्वास हमारा॥
पलटू नेरे साच के झूठे से है दूर।
दिल में आवै है नजर उस मालिक का नूर॥[6]

पलटू साहिब जिज्ञासु से पूछते हैं कि तुम परमात्मा को ढूँढ़ने बाहर कहाँ जाते हो जबकि तुम अपने अंदर तीसरे तिल में ही उसका प्रकाश देख सकते हो? वह तो सबमें समान रूप से व्याप्त है और घर बैठे ही मनुष्य को उसका दर्शन हो सकता है। पृथ्वी, जल, वायु और आकाश आदि सब उसी का फैलाव है। अंतर्मुखी भक्ति से जब भ्रम की गाँठ खुल जाती है और माया का परदा हट जाता है, तब हमें परमेश्वर सब प्राणियों में बसा दिखाई देता है। तब तिल भर भी ऐसी जगह नहीं होती जहाँ हमें वह सिरजनहार न दिखता हो। मेरा यह सच्चा विश्वास है कि अपने अंदर उसका दर्शन हो जाने पर सब जगह वही नज़र आता है। जो उसे अपने अंदर ढूँढ़ता है वही उसका सच्चा भक्त है और वह उसके निकट से निकट है। जो भ्रम में पड़ा उसे बाहर ढूँढ़ता है, वह उससे बहुत दूर है।

---

* **दिल**=भाव तीसरा तिल † **पूर समान**=समान रूप से व्याप्त

खोजत खोजत मरि गये घर ही लागा रंग॥
घर ही लागा रंग कीन्ह जब संतन दाया।
मन में भा बिस्वास छूटि गइ सहजै माया॥
बस्तु जो रही हिरान ताहि का लगा ठिकाना।*
अब चित चलै न इत उत आपु में आपु समाना॥
उठती लहर तरंग हृदय में सीतल लागे।
भरम गई है सोय बैठि कै चेतन जागे॥
पलटू खातिर जमा† भई सतगुरु के परसंग।
खोजत खोजत मरि गये घर ही लागा रंग॥[7]

अपना ही अनुभव बताते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि मैं परमात्मा को बाहर जहाँ-तहाँ खोजते-खोजते थक गया था, पर उससे मिलाप का आनंद मुझे अपने अंदर ही मिला। यह आनंद मुझे तब प्राप्त हुआ जब सतगुरु ने मुझ पर दया की और मुझे परमात्मा के घट-घटवासी होने का भेद बता दिया। उनकी दया से मुझे उनके उपदेश पर पूरा विश्वास हो गया और मेरा माया-मोह धीरे-धीरे दूर हो गया। प्रभु तो एक खोई हुई वस्तु की तरह था। उसके ठिकाने का पता चल जाने पर शब्द के अभ्यास से धीरे-धीरे मेरी ऐसी अवस्था हो गई कि मन का इधर-उधर भागना बंद हो गया। मैं अपने अंतर में शब्द को सुनने में ही मस्त रहने लगा। अब मेरा ध्यान अंदर की ओर ही रहता है और हृदय में शीतल तरंगें उठती रहती हैं। दृढ़ आसन में बैठकर भक्ति करने से मेरी आत्मा जाग्रत हो गई है और मेरे सब भ्रमों का नाश हो गया है। सतगुरु की उत्तम संगति के फलस्वरूप मैं पूरी तरह से संतुष्ट हूँ क्योंकि मुझे अंतर में प्रभु से मिलाप का परम आनंद मिल गया है।

* **हिरान**=खो गई थी † **खातिर जमा**=संतोष

जो गया साहिब के खोजने को,
सो आपे गया हेराय है जी।*
समुँदर के बीच में बुन्द परा,
उसी में गया समाय है जी॥
पानी लहिर लहिर पानी,
को भेद सकै अलगाय है जी।
पलटू हरफ मसी† दोय नाहीं,
यह बात ले ठीक ठहराय है जी॥[8]

पलटू साहिब कुछ दृष्टांत देकर हमें समझाते हैं कि जो सही ढंग से परमात्मा की खोज में लग जाता है, खोज के पूरे हो जाने पर उसकी अपनी कोई हस्ती नहीं रहती; परमात्मा की प्राप्ति होने के साथ ही उसका अपना अलग अस्तित्व समाप्त हो जाता है। बूँद भी तो समुद्र में गिर जाने पर बूँद नहीं रहती, उसमें समाकर उससे एकरूप हो जाती है। पानी ही लहर का रूप लेता है और फिर वह लहर पानी में समाकर पानी ही हो जाती है। फिर दोनों में कौन अंतर कर सकता है या उन्हें एक-दूसरे से अलग कर सकता है? यह बात अच्छी तरह मन में बिठा लो कि जैसे किसी लिखावट में अक्षर और स्याही अलग-अलग नहीं होते, वैसे ही संत में आत्मा और परमात्मा एकमेक होते हैं।

सातहू सर्ग‡ अपबर्ग§ के पार में,
जहाँ मैं रहौं ना पवन पानी।
चाँद ना सूर ना राति ना दिवस है,
उहाँ कै मर्म ना बेद जानी॥

* **हेराय**=खो गया † **मसी**=स्याही ‡ **सातहू सर्ग**=पुराणों में सात स्वर्गों का उल्लेख है।
§ **अपबर्ग**=मोक्ष

ज्ञान ना ध्यान ना ब्रह्मा न बिस्नु है,
पहुँच ना सकै कोउ ब्रह्म-ज्ञानी।*
दास पलटू कहै एक ही एक है,
दूसरा नहीं कोउ राव रानी॥[9]

पलटू साहिब प्रभु के धाम की अगम्यता का उल्लेख करते हैं। वे हमें साथ ही यह भी बता देते हैं कि जो संत प्रभु से अभेद हो चुके होते हैं, वे भौतिक जगत में रहते हुए भी वास्तव में उस धाम के वासी होते हैं।

आप कहते हैं कि अब मेरा जिस लोक में वास है, वह भौतिक जगत से बिलकुल परे है। वहाँ रत्ती भर भी भौतिक तत्त्व नहीं है। वहाँ जल, वायु आदि पाँच महाभूतों में से कोई नहीं है और न उनसे बने सूरज, चाँद आदि कोई पदार्थ। वह तो सात स्वर्गों और मोक्ष-पद से भी परे है। वहाँ दिन और रात भी नहीं हैं क्योंकि वह समय की सीमाओं में बँधा हुआ नहीं है। वेदों को भी उस धाम का भेद ज्ञात नहीं। धर्मग्रंथों के ज्ञान या मूर्तियों आदि के ध्यान के द्वारा वहाँ नहीं पहुँचा जा सकता। वह ब्रह्मा, विष्णु आदि बड़े-बड़े देवताओं तथा ब्रह्मज्ञानी माने जानेवाले महात्माओं की पहुँच से भी परे है। वहाँ तो अकेला वह परमात्मा ही है। वही वहाँ का स्वामी है, वहाँ अन्य कोई राजा या रानी नहीं है।

कोटि हैं बिस्नु जहँ कोटि सिव खड़े हैं,
कोटि ब्रह्मा तहाँ कथैं बानी।
कोटि देवी जहाँ खड़ी हैं चेरियाँ,
कोटि फन सहस ना मरम जानी॥
कोटि आकास पाताल फिरि कोटि हैं,
कोटि ब्रह्मांड सौ कोटि ज्ञानी।

* **ब्रह्म-ज्ञानी**=जिसे ब्रह्म तक का ज्ञान हो

दास पलटू कहै बड़े दरबार में,
इंद्र हैं कोटि तहँ भरैं पानी॥[10]

परमात्मा के परमधाम की विशालता और कल्पना से परे उसके विस्तार की महिमा बताते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि करोड़ों विष्णु और शिव आदि देवता उस परमपिता के सेवक हैं। वहाँ पर करोड़ों ब्रह्मा अपनी वाणी से उसकी अपार महिमा का गान कर रहे हैं। अनगिनत संख्या में वहाँ देवी और इंद्र सेवा कर रहे हैं। उसका भेद करोड़ों शेषनाग भी नहीं जानते। वह धाम करोड़ों आकाश, पाताल और ब्रह्मांडों से भी अधिक विशाल है।

5

माया

पलटू साहिब हमें समझाते हैं कि जीव को भ्रम में डालनेवाली शक्ति माया का राज्य सारे संसार में फैला हुआ है। साधारण लोगों की तो बात ही क्या, बड़े-बड़े ऋषि-मुनि, योगी, यति, तपस्वी, देवता और अवतार भी इसके जाल से बच नहीं सके हैं। इसने सबको ठग लिया है। संतों को छोड़ और कोई भी इसके हाथों लुटने से नहीं बचा है। सारा संसार माया की लहरों में ग़ोते खा रहा है। इसने सबको दु:खी कर रखा है।

माया कई रूप धारण करके मनुष्य को लुभाती है। इसके मोह में डूबा वह अपने सृजनकर्ता परमात्मा को बिलकुल भुला देता है। माता-पिता, पति-पत्नी आदि सभी संबंधी, मित्र, धन-संपत्ति, प्रभुत्व, यश, मान-प्रातिष्ठा सब इसी के रूप हैं। वास्तव में सारा संसार ही मायामय है। यहाँ सब कुछ भ्रममात्र है, केवल धोखा है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि माया शब्द का अर्थ धन-संपत्ति भी है। पलटू साहिब हमें माया के दो रूपों से सावधान करते हैं—धन-संपत्ति और काम वासना। आप गुरु भक्ति के लिए दोनों को घातक बताते हैं। धन-संपत्ति के विषय में चेतावनी देते हुए वे कहते हैं कि इसका संग्रह करने से भक्ति कलंकित होती है। एक अन्य स्थान पर वे यहाँ तक कहते हैं कि अगर संत भी धन-संपत्ति को सँभाल-सँभालकर रखेंगे तो वे भी अपनी आध्यात्मिक शक्ति खो बैठेंगे।

आपने योगीश्वर शिव, देवराज इंद्र, देवर्षि नारद तथा ऋषि शृंगी, इन चारों का उदाहरण देकर समझाया है कि काम वासना के रूप में माया क्या कुछ कर सकती है।

पलटू साहिब एक ओर माया की शक्ति का वर्णन करते हैं तो दूसरी ओर उनकी वाणी में संतों के सामने इसकी बेबसी का चित्रण भी देखने को मिलता है। वे हमें बहुत प्रभावशाली ढंग से यह जताते हैं कि माया चाहे किसी भी रूप में संतों के पास आए, उन्हें लुभाने का चाहे कितना ही प्रयत्न करे पर उसे निराश होना पड़ता है।

माया की चक्की चलै पीसि गया संसार॥
पीसि गया संसार बचै ना लाख बचावै।
दोऊ पट के बीच कोऊ ना साबित जावै॥*
काम क्रोध मद लोभ चक्की के पीसनहारे।
तिरगुन डारै झीक† पकरि कै सबै निकारे॥
दुरमति बड़ी सयानि सानि कै रोटी पोवै‡।
करम तवा में धारि सेंकि कै साबित होवै॥
तृस्ना बड़ी छिनारि§ जाइ उन सब घर घाला¶।
*काल बड़ा बरियार** किया उन एक निवाला॥*
पलटू हरि के भजन बिनु कोऊ न उतरै पार।
माया की चक्की चलै पीसि गया संसार॥[1]

पलटू साहिब हमें समझाते हैं कि माया की चक्की चल रही है और सब अनाज के दानों की तरह इसमें पिस रहे हैं। इसके जन्म-मरणरूपी दो पाटों के बीच पड़ा कोई भी जीव बचाव की लाख कोशिश करने पर भी पिसे बिना नहीं रह सकता। काम, क्रोध आदि पाँच विकार माया के सेवक हैं जो यह चक्की चला रहे हैं और सब आत्माएँ अनाज का एक ढेर हैं जिसमें से तीन गुण मुट्ठी-मुट्ठी भर दाने निकाल-निकालकर चक्की में डाल रहे हैं। दुर्मति बड़ी समझदार है। वह आटा गूँथकर, पहले पेड़े

---

* **दोऊ पट**=भाव जन्म और मरण † **झीक**=अनाज को रखने की झोली
‡ **पोवै**=रोटियाँ बनाती है § **छिनारि**=कुलटा ¶ **घाला**=बरबाद कर दिया
** **बरियार**=बलवान

और फिर उनसे रोटियाँ बनाकर उन्हें कर्मों के तवे पर डालकर सेंकती है जिससे वे पककर तैयार हो जाती हैं। जैसे कुलटा घर-घर जाती है और सब घरों को तबाह कर देती है, वैसे ही तृष्णा हर मन में पैदा होती है और हर मनुष्य का जीवन बरबाद कर देती है, दुःखपूर्ण बना देती है और अंत में अत्यंत बलवान मृत्यु हर जीव को अपना ग्रास बना लेती है। पलटू साहिब हमें चेतावनी देते हैं कि प्रभु की भक्ति किए बिना कोई भी माया की चक्की में पिसने से नहीं बच सकता, भवसागर के पार नहीं उतर सकता। माया की चक्की चलती जाती है और सब जीव इसमें पिसते चले जाते हैं।

माया ठगनी जग ठगा इकहै ठगा न कोय॥
इकहै ठगा न कोय लिये है तिर्गुन गाँसी।*
सुर नर मुनि देय डिगाय करै यह सब की हाँसी॥
इंद्रहु को यह ठगा ठगा दुर्बासै जाई।
नारद मुनि को ठगा चली ना कछु चतुराई॥
सिवसंकर को ठगा बड़े जो नेजाधारी।
सिंगी ऋषी जवान बीछ कै बन में मारी॥
पलटू इह को सो ठगा जो साचा भक्त होय।
माया ठगनी जग ठगा इकहै ठगा न कोय॥[2]

पलटू साहिब अनेक उदाहरण देकर हमें समझाते हैं कि माया किसी को नहीं छोड़ती। यह देवताओं और ऋषियों को भी अपने जाल में फँसा लेती है। केवल कोई सच्चा प्रभु-भक्त ही इसकी मार से बच सकता है।

आप कहते हैं कि माया बड़ी धोखेबाज़ है। इसने सारे संसार को ठग लिया है, पर इसको कोई चकमा नहीं दे सका। इसके पास तीन गुणों

* गाँसी=बंधन

के रूप में एक बड़ा कारगर फंदा है। यह साधारण मनुष्य, मुनि और देवता सबको पथभ्रष्ट कर देती है और उनकी हँसी उड़ाती है। इसने देवराज इंद्र को भी ठगा और महर्षि दुर्वासा को भी। नारद राजकुमारी के स्वयंवर में चतुराई बरतने चले थे, पर इसने उनका ख़ूब मज़ाक उड़वाया और उनकी दाल न गली। शिव का तो त्रिशूलधारी के रूप में बड़ा प्रताप है, पर माया ने उन्हें भी ठग लिया। युवा ऋषि शृंगी को इसने वन में जा दबोचा। इसे तो कोई ऐसा सच्चा भक्त ही ठग सकता है जिसने प्रभु को पा लिया हो और कोई नहीं, जबकि यह सारे जग को ठग लेती है।

माया की लहर संसार सब मगन है,
खाय भरि पेट भरि नींद सोया।
राम को नाम नहिं चेत सपनेहु किहा,
सुभग तन पाइ कै वृथा खोया॥
मोर औ तोर के परा झकझोर में,
काम औ क्रोध का बीज बोया।
दास पलटू कहै देखि संसार को,
बैठि के महूँ भरि पेट रोया॥[3]

हमारी दर्दनाक हालत बयान करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि संसार माया की लहरों में ग़ोते खा रहा है। हम पेट भरकर खाते हैं और जी भर सोते हैं परंतु सपने में भी प्रभु का नाम नहीं लेते। सौभाग्य से मिली नरदेह हम व्यर्थ गँवा रहे हैं। हम मेरी-तेरी की आँधी के थपेड़े खा रहे हैं और काम-क्रोध के वश में हुए कुकर्मों के बीज बोते चले जा रहे हैं। अंत में पलटू साहिब हमें बताते हैं कि संसार की यह दुर्दशा देखकर वे बहुत दुःखी हैं।

धरौ फूँकि के पांव कुसँग ना कीजिये।
भजन मँहै भँग होय सोच ना लीजिये॥
कोउ ना पकरै फेट* करै जो त्याग है।
अरे हाँ पलटू माया संग्रह करै भक्ति में दाग है॥[4]

पलटू साहिब ख़बरदार करते हैं कि हमें मायारूपी कुसंगति से बचना है और फूँक-फूँककर क़दम रखना है। माया के बारे में सोच-विचार करने से भजन में बाधा पड़ती है। अगर जीव माया का संग्रह छोड़ दे तो उसे परमार्थ के मार्ग पर चलने से कोई नहीं रोक सकता। परंतु यदि कोई माया के पदार्थों को ही बटोरने में लगा रहे तो उसकी भक्ति को कलंक ज़रूर लग जाएगा।

माया यार फकीर कहै जंजाल है।
सांप खिलौना करै एक दिन काल है॥
मांछी† मधु लै धरै छोरि कोइ खाइगा।
अरे हाँ पलटू सिंह करै जो जतन स्यार होइ जायगा॥[5]

पलटू साहिब सभी दुनियावी शक्लों-पदार्थों को माया का भ्रमजाल बताते हैं। प्रकृति में माया से प्रेरित सब जीव-जंतु अपने स्वभाव अनुसार कार्य करते हैं जैसे साँप को यदि कोई खिलौना बनाकर अपने पास रखे तो एक न एक दिन उसे वह साँप डसकर मार देगा। मधुमक्खियाँ शहद इकट्ठा करती हैं लेकिन उसे खाता कोई और है। शेर अगर अपनी और शेरनी तथा बच्चों की भूख मिटा लेने के बाद शिकार के बाक़ी बचे मांस को सँभाल-सँभालकर रखने लगे तो वह गीदड़ जैसा हो जाएगा।

* **फेट**=फेंटा † **मांछी**=मक्खी

हम से फरक* रहु दूर, माया मौत तुलानी† ॥ टेक॥
आन के लेखे तुम अमृत लागहु, हमरे लेखे जस पानी।
हमरे तुँह लौंड़ी अस नाहीं, औरन के लेखे घर रानी॥
औरन के लेखे तू परबत, हम राई सम जानी।
सगरो अमल‡ करेहु तुँह माया, हम से रहौ अलगानी॥
तीन लोक तुँह निगल गई है, तेहि पर नाहिं अघानी।
पलटूदास कह बकसहु माया, नरक कि तुँही निसानी॥[6]

इस पद में हमें सावधान किया गया है कि माया में फँसना नरक में गिरना है। ख़ुद माया को संबोधित करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि तू मुझसे फ़ासला रख, मुझसे दूर रह। सब तुझे अमृत समझते हैं पर मेरी समझ में तो तू पानी के समान है। मेरे विचार में तू दासी के तुल्य भी नहीं है जबकि और लोग तुझे घर की रानी मानते हैं। औरों की दृष्टि में तू पर्वत के समान है, किंतु मेरे लिए तू राई के दाने के समान है। तू सारे संसार पर शासन करती है पर मेरे निकट तू मत आ, मुझसे दूर ही रह। तूने तीनों लोकों के जीवों को अपने मोहजाल में फँसा रखा है, फिर भी तेरा जी नहीं भरा। तू तो नरक की एक पक्की निशानी है इसलिए मेरा पीछा छोड़ दे।

कुसल कहाँ से पाइये नागिनि के परसंग§ ॥
नागिनि के परसंग जीव कै भच्छक सोई।
पहरू कीजै चोर कुसल कहवाँ से होई॥
रूई के घर बीच तहाँ पावक लै राखै।
बालक आगे जहर राखि करिके वा चाखै॥

* **फरक**=फ़ासला, दूरी † **तुलानी**=तुल्य है ‡ **अमल**=शासन, अधिकार
§ **परसंग**=संगति

कनक धार जो होय ताहि ना अंग लगावै।
खाया चाहै खीर गाँव में सेर बसावै॥
पलटू माया से डेरै करै भजन में भंग।*
कुसल कहाँ से पाइये नागिनि के परसँग॥[7]

पलटू साहिब ने माया की तुलना नागिन, आग, ज़हर, तलवार की धार और शेर से करते हुए हमें समझाया है कि भक्ति में मायामय संसार का मोह बाधक है।

आप कहते हैं कि यदि चोर को ही पहरेदार बना लिया जाए तो किसी की भी सलामती की आशा नहीं की जा सकती, उसी प्रकार मायारूपी नागिन की संगति में रहते हुए कोई भी सकुशल कैसे रह सकता है? क्योंकि वह नागिन तो जीवों की हत्यारिन है। माया की संगति करना ऐसे ही है जैसे रूई से भरे घर में आग लाकर रख देना या छोटे बच्चे के सामने ज़हर रख देना। आग रूई को जलाकर भस्म कर देती है, जबकि अनजान बच्चा ज़हर को खाकर अपने प्राण दे देता है। तलवार चाहे सोने की ही क्यों न बनी हो, उसे अपने अंग से कोई नहीं लगाएगा। यदि कोई खीर का शौक़ीन हो, तो वह अपने गाँव में दूध देनेवाले पशुओं को मारकर खा जानेवाले शेर तो नहीं बसाएगा। इसी प्रकार हमें भी भजन में बाधा डालनेवाली मायारूपी नागिन से डरना चाहिए, इसकी संगति में रहते हुए हम सकुशल नहीं रह सकते।

गुरु की भक्ति और माया ज्यों छूरी तरबूज॥
ज्यों छूरी तरबूज कुसल दोऊ बिधि नाहीं।
गिरे गिराये घाव लगे तरबूजै माहीं॥
कनक कामिनी बड़ी दोऊ है तीछन धारा।

* डेरै=डरे

तब बचिहै तरबूज रहै छूरी से न्यारा॥
छोट बड़ा कतलाम नहीं छूरी को दाया।*
बचै बिबेकी संत गये जिन अंग लगाया॥
पलटू उन से बैर है पड़ै न मूरख बूझ।
गुरु की भक्ति और माया ज्यों छूरी तरबूज॥[8]

माया को गुरु भक्ति का प्रबल शत्रु बताते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि गुरु भक्ति और माया का आपस में वही संबंध है जो छुरी और तरबूज़ का है। चाहे तरबूज़ छुरी पर गिरे या कोई तरबूज़ पर छुरी चलाए, कटता तो तरबूज़ ही है। इसी तरह चाहे गुरु-भक्त माया के पीछे भागे और चाहे माया ख़ुद उसके पास आ जाए, हानि तो गुरु-भक्त की ही होती है, माया का कुछ नहीं बिगड़ता। माया बड़ी तेज़ दुधारी छुरी है जिसकी दो धारें—धन-संपत्ति और काम-वासना हैं। जिस प्रकार तरबूज़ तभी कटने से बच सकता है यदि वह छुरी के संपर्क में न आए, इसी प्रकार गुरु-भक्त भी अपनी गुरु भक्ति को तभी सुरक्षित रख सकता है यदि वह इस माया रूपी दुधारी छुरी से दूर रहे। कोई छोटा हो या बड़ा, यह छुरी किसी पर दया नहीं करती। यह बड़ी निर्दयी है, सबको मारती चली जाती है। केवल संत जो आंतरिक अनुभव से सच-झूठ की पहचान कर चुके हैं इसकी मार से बचते हैं। इसे गले लगानेवालों की बहुत दुर्दशा होती है, लेकिन मूर्खों की समझ में यह बात नहीं आती कि माया उनकी दुश्मन है।

माया तू जगत पियारी वे, हमरे काम की नाहीं।
द्वारे से दूर हो लंडी† रे, पइठु न घर के माहीं॥
माया आपु खड़ी भइ आगे, नैनन काजर लाये।
नाचै गावै भाव बतावै, मोतिन माँग भराये॥

* कतलाम=जनसंहार † लंडी=कुलटा

रोवै माया खाय पछारा, तनिक न गाफिल पाऊँ।*
जब देखौ तब ज्ञान ध्यान में, कैसे मारि गिराऊँ॥
ऋद्धि सिद्धि दोउ कनक समाजी†, बिस्नु डिगन को भेजा।
तीन लोक में अमल तुम्हारा, यह घर लगै न तेजा॥
तू क्या माया मोहिं नचावै, मैं हौं बड़ा नचनियाँ।
इहवाँ बानिक लगै न तेरी, मैं हौं पलटू बनियाँ॥[9]

माया को दुत्कारते हुए पलटू साहिब कहते हैं, 'अरी! तू संसार भर की प्यारी है, पर मेरे किसी काम की नहीं। अरी कुलटा! दरवाज़े से ही दूर भाग जा, मेरे घर में मत घुस।'

अपने सामने माया की अत्यंत बेबसी पर तरस खाते हुए आप आगे कहते हैं कि मुझे छलने के लिए मनमोहक रूप बनाकर यह स्वयं ही मेरे सामने आ खड़ी हुई है। आँखों में इसने काजल लगा रखा है और माँग को मोतियों की लड़ी से सजा रखा है। यह नाचती है, गाती है, हाव-भाव दिखाती है। बेचारी रोती है, बार-बार बेहोश होकर गिरती है। सोचती है कि यह पलटू तो क्षणभर के लिए भी मुझे ग़ाफिल नहीं मिलता। जब भी देखती हूँ, प्रभु की भक्ति करने में लगा होता है। क्या उपाय करूँ जिससे इसका पतन हो और यह पथभ्रष्ट हो जाए?

माया को पुनः संबोधित करके पलटू साहिब कहते हैं कि लक्ष्मीपति भगवान विष्णु ने मेरे पतन के लिए धन-संपत्ति के साथ समृद्धि तथा चमत्कारी शक्तियों को भी मेरे पास भेज दिया, पर बात नहीं बनी। तू तीनों लोकों पर शासन करती है पर मेरे घर में तेरा ज़ोर नहीं चलेगा। अरी! तू मुझे क्या नचाएगी? मैं तो अपने ही ढंग का एक कुशल नाचनेवाला हूँ। तू मेरे पास चाहे कोई भी भेष धारण करके आ जा, मुझ पर कोई असर नहीं होगा। मैं बहुत समझदार व्यापारी हूँ, तेरे चंगुल में फँसनेवाला नहीं।

---

* **खाय पछारा**=पछाड़ खाकर गिरना † **समाजी**=संगी

6

मन

पलटू साहिब मन को मनुष्य के अंदर ही बैठा एक शक्तिशाली शत्रु बताते हैं। वह कहते हैं कि सारे संसार में मन का राज्य है और उसके प्रमुख कार्यकर्ताओं—काम, क्रोध आदि पाँच विकारों ने मिलकर यहाँ अँधेर मचा रखा है, सब जीवों को दुःखी कर रखा है। मन नौ द्वारों के रास्ते संसार में फैला हुआ है। दूसरे शब्दों में इंद्रियों के वश में हुआ वह विषय-भोग का भूखा है, संसार के नाशवान सुखों तथा सुविधाओं के लिए तरसता है। इस सच्चाई की ओर उसका ध्यान जाता ही नहीं कि संसार में कुछ भी स्थायी नहीं। सब कुछ असत्य है, मिथ्या है। आत्मा मन की दासी बनी हुई है और मन माया के हाथ में कठपुतली। माया से इशारा पाकर यह जो चाहता है, आत्मा से करवा लेता है। इस तरह मन के वश में पड़ी हुई आत्मा कर्म-फल भोगने के लिए जन्म-मरण के चक्कर में फँसी हुई है।

मन बहुत चंचल है, इसे वश में करना अति कठिन है। यह बड़ा नीच है, अच्छाई छोड़ बुराई ग्रहण करना इसका स्वभाव है। अपने आप को सबसे बड़ा समझने की इसकी प्रवृत्ति, इसकी क्रूरता और कुटिलता तथा विषय-भोग में रुचि का पलटू साहिब ने बड़ा सुंदर वर्णन किया है।

आप बहुत ज़ोर देकर कहते हैं कि सच्ची बहादुरी मन को मारने में है। सच्चा सूरमा वही है जो मन को वश में कर ले। आप यह भी समझाते हैं कि इसको जीतने का एकमात्र साधन सतगुरु से नाम का भेद लेकर उसका अधिक से अधिक अभ्यास करना है। लगन के साथ जीते-जी मरने का अभ्यास करते रहने से मन की सब इच्छाएँ मिट जाती हैं। फलस्वरूप आत्मा आवागमन के चक्कर से छूट जाती है।

मन माया छोड़ै नहीं बझै आपु से जाय॥
बझै आपु से जाय गही ज्यों मरकट मूठी।
ज्यों नलनी का सुआ बात सब ऐसी झूठी॥
छोड़ै नहीं आपु भरम में पड़ा गँवारा।
खैंचि लेय जो हाथ कोऊ ना पकड़नहारा॥
जिव लै बचै तो भागु भूलि गइ सब चतुराई।
रोवन लागे पूत काल ने पकरा आई॥
पलटू आसा बधिक है लालच बुरी बलाय।
मन माया छोड़ै नहीं बझै आपु से जाय॥[1]

पलटू साहिब कहते हैं कि मन माया का मोह नहीं छोड़ता और इस कारण मनुष्य ख़ुद ही माया के फंदे में फँस जाता है। जैसे बंदर अपनी मुट्ठी में अनाज भरे रखने के कारण मदारी के हाथों में आ जाता है और तोता पंजों से नली को पकड़े रखने के कारण बहेलिए के हाथ आ जाता है, इसी तरह मनुष्य ख़ुद ही माया के फंदे में फँस जाता है। माया का सारा खेल मन के साथ ऐसा ही धोखा है। बंदर और तोता दोनों भ्रम में पड़े हैं। वे दोनों मूर्ख हाथ में पकड़ी चीज़ नहीं छोड़ते। अगर बंदर चने छोड़कर बरतन में से हाथ निकाल ले और तोता नली को छोड़ दे तो उनको कोई नहीं पकड़ सकता। जान बचानी हो तो उन्हें भागना चाहिए पर वे सब चतुराई भूल जाते हैं। मनुष्य भी अपने बचाव के लिए विवेक से काम नहीं लेता और माया के जाल में फँस जाता है। मौत उसके सिर पर आ खड़ी होती है, परिवार के लोग रोने-पीटने लगते हैं परंतु फिर भी उसका मन माया का मोह नहीं छोड़ता। संसार मायामय है। इसके पदार्थों की आशा एक शिकारी है, उनका लालच मुसीबतों की जड़ है। पर मन माया का मोह नहीं छोड़ता जिससे मनुष्य माया के जाल में फँस जाता है और फँसा रहता है।

बनिया यह बानि ना छोड़ता है,*
फिर फिर पसँगा† मारता है।
केतक बार तैं चोट खाया,
उस याद को फेर बिसारता है॥
खारी के बीच में खाँड डारै,
दुरमति को नाहिं मिटावता है।
पलटू केता समझाय देखा,
तिस पर भी नाहिं सम्हारता है॥[2]

मन को संबोधित करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि जैसे लोभी दुकानदार बार-बार कम तोलता है, अपनी आदत नहीं छोड़ता, तू भी ऐसे ही बुरे स्वभाव का है। अपनी दुष्टता के कारण कितनी ही बार तू चोटें खा चुका है पर तू यह बात भूल जाता है। खारी वस्तु में तू मिठास का गुण जताता है यानी तू आत्मा को दुःखमूल तथा नश्वर सांसारिक पदार्थों को सुखदायक बताता है और इस नासमझी को कभी छोड़ता ही नहीं। तुझे बहुत समझाकर देख लिया है पर इतना समझाने पर भी तू अपने आप को सँभालता नहीं है।

मनै को राज है एक तिहुँ लोक में,
तेहि के अमल में डंड लागै।
पाँच मोसील‡ मिलि लगे घर घर मंहै,
मारि औ पीटि के रोज माँगैं॥
चोरी कै भीख लै देत हैं दंड सब,
अमल तो एक फिर कहाँ भागै।

* **बानि**=आदत † **पसँगा**=कम तोलना ‡ **मोसील**=कर उगाहने वाला

दास पलटू कहै मच्यो अंधेर है,
बसै सतसंग यहि अमल त्यागै॥[3]

पलटू साहिब हमें समझाते हैं कि तीनों लोकों में मन का राज है। मन के अधीन होकर जीव जो भी कर्म करता है उसे उसकी सज़ा भुगतनी पड़ती है। पाँच विकार मन के कारिंदे हैं जो जीव को कर्म करने के लिए उकसाते हैं और फिर उसका हिसाब माँगते तथा दंड (महसूल) देते हैं। पूर्व कर्मों का फल भुगतते हुए मनुष्य केवल कष्ट तथा दुःख ही नहीं सहता बल्कि इस दौरान अज्ञानतावश कई अनुचित कर्म कर बैठता है। पलटू साहिब कहते हैं कि अज्ञानता की इस अँधेरी नगरी में मन का ही बोलबाला है, मन का ही शासन है। मन के आगे सभी जीव विवश हैं, जाएँ तो कहाँ जाएँ? इसलिए मनुष्य को चाहिए कि संत की संगति में रहे और उससे युक्ति सीखकर मन की हुकूमत से छुटकारा पा ले।

काम क्रोध बसि किहा नींद अरु भूख को।
लोभ मोह बसि किया दुक्ख औ सुक्ख को॥
पल में कोस हजार जाय यह डोलता।
अरे हाँ पलटू वह ना लागा हाथ जौन यह बोलता॥[4]

आप समझाते हैं कि मनुष्य में चाहे कितना ही संयम क्यों न आ जाए, अत्यंत चतुर मन किसी भी समय उसे अपनी अंगुलियों पर नचा सकता है, उससे कुछ भी करवा सकता है। यह समझाते हुए पलटू साहिब हमें सावधान करते हैं कि काम, क्रोध, लोभ और मोह, नींद और भूख, सुख और दुःख, इन सभी को यदि वश में कर लिया जाए तो भी यह मन जो अंदर से बोलकर अपनी इच्छाएँ बताता रहता है, वश में नहीं आता। यह अत्यंत चंचल है, किसी भी पल हज़ारों कोस दूर निकल जाता है। इसे लगाम देना बहुत कठिन है।

नापै चारिउ खूँट थहावै† समुँद को।*
सब परबत को तौलि गनै फिर बूँद को॥
हारा सब संसार बात है फेर का।
अरे हाँ पलटू वह नहिं लागै हाथ जो चालिस सेर‡ का॥[5]

यह मन अत्यंत शक्तिशाली है और इसे वश में करना बहुत कठिन है। पलटू साहिब कहते हैं कि चाहे कोई बहुत-से असंभव कार्य भी कर ले, जैसे चारों दिशाओं को नाप ले, समुद्र की गहराई का भी पता लगा ले, पर्वतों तक को तोल ले और समुद्र की बूँद-बूँद तक गिन डाले, फिर भी मन को वश में लाना उसके लिए चकरा देनेवाली बात होगी। सारा संसार मन से हार गया है। यह मन चालीस सेर की तोल के मन जैसा है जिसे हाथ से उठाया नहीं जा सकता।

मन हस्ती मन लोमड़ी, मनै काग मन सेर§।
पलटुदास साची कहै, मन के इतने फेर॥[6]

मन के बदलते रंगों और समय-समय पर दिखाई देनेवाली उसकी बुराइयों का वर्णन करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि यह कभी अहंकार से फूलकर हाथी हो जाता है यानी ख़ुद को सबसे बड़ा समझता और जताता है, कभी शेर की-सी क्रूरता दिखाता है तथा कभी लोमड़ी की-सी धूर्तता, और कभी कौए की तरह गंदगी में मुँह मारता है यानी विषय-भोग का आनंद लेता दिखाई देता है। मैं यह जो कुछ कह रहा हूँ, सब सच है, मन के इतने फेर हैं।

---

* **खूँट**=दिशा † **थहावै**=थाह लेता है ‡ **चालिस सेर**=एक मन वज़न, सैंतीस किलो
§ **सेर**=शेर

पलटू यह मन अधम है, चोरौं से बड़ चोर।
गुन तजि औगुन गहतु है, तातें बड़ा कठोर॥[7]

मन की दुष्टता और नीचता का उल्लेख करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि यह महा नीच है। यह सबसे बड़ा चोर है यानी अनेक कुकर्म करता है और उन्हें सबसे छिपाए रखता है। क्षमा, संतोष, नम्रता आदि सद्गुणों को त्यागकर क्रोध, लोभ, अहंकार आदि दुर्गुणों को अपनाना इसका स्वभाव है। इसीलिए तो यह इतना कठोर है।

उसी सावज को मारना जी,*
न हाड़ न माँस न चाम स्वासा।
पूँछ न पाँव न मुख वा के,
उसी का सालन† बनै खासा॥
मुरदा के मारे वह मरै,
जीवत बधिक की नाहिं आसा।
पलटू जो सावज मारि खावै,
तिसी का आवागवन नासा॥[8]

जीव-हत्या के विरोधी पलटू साहिब फ़रमाते हैं कि अगर शिकार मारना हो तो केवल वही शिकार मारना चाहिए जिसके तन में न हड्डियाँ हैं, न मांस है और न उस पर चमड़ी है, जो साँस नहीं लेता और जिसके पूँछ, पाँव और मुख भी नहीं हैं। उसी का सबसे बढ़िया सालन (तरकारी) बनता है। उसे वही शिकारी मार सकता है जो ख़ुद जीते-जी मर गया हो; ज़िंदा रहते हुए कोई शिकारी उसे मारने की आशा न रखे। जो उस शिकार

* **सावज**=शिकार किया जानेवाला जानवर भाव मन
† **सालन**=रसेदार तरकारी

को मारकर खा लेगा, जो मन को वश में कर लेगा, उसी का आवागमन का चक्कर ख़त्म होगा।

सहज कूप में परै सहज रन जूझना।
सहजै सिंह सिकार अगिन कै कूदना॥
कितनी करै हियाव बात सब गर्द है।*
अरे हाँ पलटू मन को राखै मार सिपाही मर्द है॥[9]

पलटू साहिब बड़े प्रभावशाली ढंग से हमें समझाते हैं कि मन पर विजय पाना ही सच्ची बहादुरी है। आप कहते हैं कि कुएँ में कूद जाना, युद्ध में लड़ते हुए प्राण त्याग देना, शेर का शिकार कर लेना और आग में छलाँग लगा देना आसान है। कोई कितना ही बड़ा साहसपूर्ण कार्य कर ले, वह मिट्टी के बराबर है। बहादुर सिपाही तो असल में वही है जो मन को मार लेता है।

इधर से उधर तू जायगा किधर को,
जिधर तू जाय मैं उधर आवों।
कोस हज्जार तू जाय चलि पलक में,
ज्ञान की कुटी मैं उहैं छावों॥
सुमति जंजीर को गले में डारि कै,
जहाँ तू जाय मैं खींच लावों।
दास पलटू कहै मारि हौं ठौर में,
जहाँ मैदान में पकरि पावों॥[10]

* **हियाव**=साहस

मन को जीतने के लिए निरंतर प्रयत्नशील तथा सावधान रहने की शिक्षा देते हुए मन को संबोधित करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि मैं तुझे हर हालत में वश में कर लूँगा। तू भागकर जाएगा कहाँ? जहाँ भी जाएगा, मैं तुझे पकड़ने वहीं पहुँच जाऊँगा। तू एक पल में हज़ार कोस दूर भाग भी जाए लेकिन मैं वहाँ भी ज्ञान की कुटिया बनाकर तुझे क़ाबू कर लूँगा। तू जहाँ भी जाएगा, तेरे गले में सुबुद्धि की ज़ंजीर डालकर मैं तुझे वहाँ से खींच लाऊँगा। संसार के इतने बड़े मैदान में मैं तुझे जहाँ भी पकड़ लूँगा, वहीं मार डालूँगा यानी वश में कर लूँगा।

7

नाम

उपदेश के अध्याय में यह बताया जा चुका है कि पलटू साहिब तथा अन्य सब संतों ने जिस नाम या शब्द की महिमा की है, वह परमात्मा का कोई वर्णात्मक नाम नहीं है, वह तो उसका धुनात्मक नाम है। सतगुरु से मिले वर्णात्मक नाम का पूरी लगन से नियमपूर्वक सुमिरन करने पर ही आत्मा धुनात्मक नाम से जुड़ती है और उससे जुड़कर भवसागर को पार करके प्रभु के धाम में पहुँचती है, प्रभु को पा लेती है।

शब्द या नाम में केवल ध्वनि ही नहीं है, प्रकाश भी है। पलटू साहिब की वाणी में कई जगह इसकी ध्वनि तथा प्रकाश दोनों का एक साथ उल्लेख मिलता है। *उलटा कूवा गगन में* और *इक नाम अमोलक मिलि गया* आदि पद इसके उदाहरण हैं।

यद्यपि शब्द को पलटू साहिब ने यद्यपि अनाम नाम, नाद, अनहद बानी, गैबी अवाज (दिव्य ध्वनि) आदि अनेक नामों से याद किया है, फिर भी उनके पदों में इसके लिए सबसे अधिक नाम और शब्द का प्रयोग देखने में आता है।

अन्य संतों की तरह पलटू साहिब का भी कहना है कि मनुष्य के शरीर में आई हुई आत्मा के लिए संचित करने योग्य वस्तु केवल प्रभु का सच्चा नाम है, धुनात्मक नाम है। संसार की अन्य सब वस्तुएँ नश्वर हैं, सब संबंध भी अस्थायी हैं। लेकिन नाम अविनाशी है, नित्य है। इसलिए मनुष्य को केवल नाम का धन ही इकट्ठा करना चाहिए और इस कार्य में उसे बिलकुल भी देरी नहीं करनी चाहिए क्योंकि मौत किसी भी समय आ सकती है।

नाम बहुत मीठा है। इसके मधुर संगीत को सुनने के बाद जीव को संसार तुच्छ लगता है, उसे संसार की कोई भी वस्तु अच्छी नहीं लगती। काम, क्रोध आदि पाँच मनोविकारों पर विजय पाने का यह बड़ा कारगर साधन है। इसका सहारा लेनेवालों को वह चिंता जिसकी आग में सारा संसार जल रहा है नहीं सताती। आवागमन से मुक्ति तथा प्रभु प्राप्ति का यही एकमात्र साधन है।

योग का अर्थ है जुड़ना और योगी का अर्थ है प्रभु से जुड़ा हुआ। पलटू साहिब हमें समझाते हैं कि सच्चा योगी वही है जो नाम की कमाई करके नाम का भंडार हो गया है, शब्द का अभ्यास करके शब्द की खान बन गया है, शब्द-स्वरूप हो गया है, प्रभु से जुड़ गया है।

पलटू साहिब ने यह भी कहा है कि नाम का भेद उसी को दिया जाना चाहिए जो परखने पर नाम का सच्चा प्रेमी दिखाई दे। नामदान पाने के लिए ग्रंथों के ज्ञान का गर्व तथा लोकलाज त्यागनी पड़ती है।

अरे मोरे सबद बिबेकी हंसा हो, बैठो सबद की डार॥ टेक॥
सबदै ओढ़ौ सबद बिछाओ सबदै भूख अहार।
निसि दिन रहौ सबद के घर में, सबदै गुरू हमार॥
लै हथियार सबद कै मारौ, सबद खेत ठहराओ।
कबहुँ कुचाल जो होइ तुम्हारी, सबद में भागि लुकाओ॥
आदि अनादि सबद है भाई, सबदै मूल बिचारा।
जिनके चोट सबद की लागी, आवागवन निवारा॥
सबदै मूल है सबदै साखा, सबदै सबद समाना।
पलटूदास जो सबद बिबेकी, सबद के हाथ बिकाना॥[1]

पलटू साहिब कहते हैं कि सत्संग में आने से संसार की नश्वरता और शब्द की नित्यता की जानकारी प्राप्त कर चुके ऐ मेरे जीवात्मा रूपी हंस! उड़ो और शब्द की डाल पर जा बैठो—शब्द का अभ्यास करो और अंदर के रूहानी मंडलों में पहुँचो। शब्द ही तुम्हारे लिए सब कुछ हो।

उसी की तुझे हमेशा भूख लगे, वही तुम्हारा भोजन हो। शब्द ही तुम्हारी ओढ़नी हो और शब्द ही तुम्हारा बिछौना हो। शब्द ही देह स्वरूप में आया हुआ हम सबका गुरु है। इसलिए तुम दिन-रात उसी के संग रहो। शब्द के मैदान में डटे रहो और शब्द का शस्त्र लेकर अपने शत्रुओं यानी पाँच विकारों को मार डालो। जब भी तुम्हारे मन में कोई कुकर्म करने का विचार उठे, एकदम अपना ध्यान शब्द की ओर मोड़ दो, शब्द की आड़ लेकर अपना बचाव कर लो। शब्द अनादि है, उसकी कभी उत्पत्ति नहीं हुई; और वह सबका आदि है, उसी से सारी सृष्टि की उत्पत्ति हुई है। पलटू साहिब का अभिप्राय है कि साधक का एकमात्र ध्येय शब्द होना चाहिए, उसे निरंतर शब्द के अभ्यास में लगे रहना चाहिए, उसका ध्यान खाते-पीते, सोते-जागते अर्थात् कोई भी कार्य करते समय शब्द या सुमिरन में ही लगा रहना चाहिए। आगे पलटू साहिब कहते हैं कि शब्द ही मूल है और शब्द ही शाखा अर्थात् वही परमात्मा है और वही उसमें से निकली हुई आत्मा है। जो शब्द-विवेकी आत्मा अपने आप को शब्द के हवाले कर देती है अर्थात् शब्द के अभ्यास में लीन हो जाती है, वह परमात्मा में जा समाती है।

सबद छुड़ावै राज को सबदै करै फकीर॥
सबदै करै फकीर सबद फिर राम मिलावै।
जिन के लागा सबद तिन्हैं कछु और न भावै॥
मरे सबद की घाव उन्हें को सकै जियाई।
होइ गा उनका काम परी रोवैं दुनियाई॥
घायल भा वह फिरै सबद कै चोट है भारी।
जियतै मिरतक होय झुकै फिर उठै सँभारी॥
पलटू जिन के सबद का लगा कलेजे तीर।
सबद छुड़ावै राज को सबदै करै फकीर॥[2]

शब्द की महिमा का बखान करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि शब्द अपने मधुर संगीत से मनुष्य को राजपाट तक से विरक्त करके साधु बना देता है और आख़िर उसे परमात्मा से मिला देता है। जिसके अंदर शब्द प्रकट हो जाता है, जिसे शब्द की मधुर धुन सुनने का चसका लग जाता है, उसे कुछ भी अच्छा नहीं लगता। वह तो बस शब्द में खोकर परमात्मा को पा लेना चाहता है। जो शब्द से घायल हुआ संसार की ओर से मर जाता है, उसे फिर कौन जीवित कर सकता है, फिर से उसकी संसार में रुचि कौन उत्पन्न कर सकता है? प्रभु से मिलानेवाला शब्द उसके अंतर में प्रकट हो जाता है और उसका काम पूरा हो जाता है। वह दुनिया से विरक्त हो जाता है, दुनिया की उसे कोई परवाह नहीं होती। शब्द की चोट बड़ी गहरी होती है; उसके घाव से वह व्याकुल हो उठता है। प्रभु-प्रेम से व्याकुल हुए उससे एक पल का बिछोड़ा भी सहा नहीं जाता।

पलटू साहिब शब्द-अभ्यासी को अभ्यास के दौरान होनेवाले एक अद्‌भुत अनुभव का भी ज़िक्र करते हैं। आप कहते हैं कि वह जीते-जी मर जाता है, उसकी चेतना शरीर में से सिमटकर तीसरे तिल पर इकट्ठी हो जाती है। अभ्यास की समाप्ति पर शरीर में पुन: चेतना का संचार हो जाता है और वह सँभलकर उठ खड़ा होता है।

पलटू साहिब शब्द के प्रबल आकर्षण का उल्लेख करते हुए फिर कहते हैं कि जिसके दिल में शब्द का तीर चुभ जाता है, उसके लिए राजपाट या राजसी वैभव का भी कोई महत्त्व नहीं रहता और वह एक साधु का-सा निर्लेप जीवन व्यतीत करता है।

पीवता नाम सो जुगन जुग जीवता,
नाहिं वो मरै जो नाम पीवै।
काल ब्यापै नहीं अमर वह होयगा,
आदि औ अंत वह सदा जीवै॥
संत जन अमर हैं उसी हरि नाम से,

उसी हरि नाम पर चित्त देवै।
दास पलटू कहै सुधा रस छोड़ि कै,
भया अज्ञान तू छाछ लेवै॥[3]

आप कहते हैं कि जो शब्द के अमृत का पान करता है, जो पूरी तरह लिव लगाकर उसकी मधुर धुन सुनता है, वह काल के दायरे से पार होकर अमरपद प्राप्त कर लेता है। सृष्टि का आदि और अंत होता रहता है पर उस जीव का पुन: जन्म-मरण नहीं होता। संत प्रभु के इस नाम के प्रताप से ही अमर हैं, इसलिए मनुष्य को इसी के अभ्यास में मन लगाना चाहिए। माया-मोह से लिप्त मनुष्य को संबोधित करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि तू बड़ी मूर्खता कर रहा है जो अमृत रस छोड़कर छाछ पी रहा है यानी शब्दरूपी अमृत का आनंद न लेकर सारहीन लौकिक सुख भोगने में मग्न है।

लहना है सतनाम का जो चाहै सो लेय॥
जो चाहै सो लेय जायगी लूट ओराई।
तुम का लुटिहौ यार गाँव जब दहिहै लाई॥
ताकै कहा गँवार मोट भर बाँध सिताबी।*
लूट में देरी करै ताहि की होय खराबी॥
बहुरि न ऐसा दाँव नहीं फिर मानुष होना।
क्या ताकै तू ठाढ़† हाथ से जाता सोना॥
पलटू मैं उतृन‡ भया मोर दोस जनि देय।
लहना है सतनाम का जो चाहै सो लेय॥[4]

पलटू साहिब कहते हैं कि मनुष्य जन्म में प्राप्त करने योग्य वस्तु केवल प्रभु का सच्चा नाम है। जिस किसी को भी इसकी इच्छा हो, इसे लूट

* मोट=गठरी † ठाढ़=खड़ा हुआ ‡ उतृन=फ़र्ज़ पूरा कर देना

सकता है। मौत के आ जाने पर यह दौलत लूटने का अवसर तुम्हारे हाथ से निकल जाएगा। जब तुम्हारे मृत शरीर को आग लगा दी जाएगी, तब तुम भला यह दौलत क्या लूटोगे? जल्दी से नाम की दौलत लूट लो, इससे अपनी गठरी भरो और बाँध लो। इस काम में जो देरी करता है, उसकी बहुत दुर्गति होती है। ऐसा अवसर फिर तुम्हारे हाथ नहीं आएगा, मनुष्य चोला तुम्हें दोबारा नहीं मिलेगा। खड़े-खड़े क्या देख रहे हो? एक अनमोल वस्तु तुम्हारे हाथ से निकली जा रही है। मैंने तुम्हें समझाकर अपना फ़र्ज़ पूरा कर दिया है। अब मुझे दोष मत देना। मैं फिर कहता हूँ, मनुष्य जन्म में केवल प्रभु का सच्चा नाम ही बटोरने योग्य धन है।

लगन महूरत झूठ सब और बिगाड़ै काम॥
और बिगाड़े काम साइत जनि सोधै कोई।*
एक भरोसा नाहिं कुसल कहवाँ से होई॥
जेकरे हाथै कुसल ताहि को दिया बिसारी।
आपन इक चतुराई बीच में करै अनारी॥
तिनका टूटै नाहिं बिना सतगुरु की दाया।
अजहूँ चेत गँवार जगत है झूठी काया॥
पलटू सुभ दिन सुभ घड़ी याद पड़ै जब नाम।
लगन महूरत झूठ सब और बिगाड़ै काम॥[5]

अनेक तरह के वहमों, भ्रमों में फँसे हुए नादान संसारी जीवों को सावधान करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि ज्योतिषियों द्वारा सोधे गए शुभ लगन-मुहूर्तों पर भरोसा मत करो। वे तो मात्र झूठे भरोसे होते हैं जो हमें भ्रम में डाल देते हैं। हमारे भाग्य में वे तनिक भी फेरबदल नहीं कर सकते।

* साइत=मुहूर्त

होता तो वही है जो प्रभु ने हमारे कर्मों के आधार पर हमारे प्रारब्ध में लिख दिया होता है। लगन-मुहूर्तों पर भरोसा करने से तो हमारा काम उलटे बिगड़ जाता है। क्योंकि लगन-मुहूर्तों पर भरोसा करने का अर्थ है प्रभु पर भरोसा न रखना, उसके विधान पर भरोसा न रखना और यदि उस एक पर भरोसा न हो तो कुशल-मंगल भला कैसे हो सकता है?

कुशल-मंगल ज्योतिषियों के नहीं, बल्कि प्रभु के हाथ में होता है। उसे तो मनुष्य भुला देता है और अपने मन की तरह-तरह की चतुराई से अपना भाग्य सुधारना चाहता है। यह तो निरी मूर्खता है, निपट अनाड़ीपन है। प्रभु के ही प्रकट रूप सतगुरु की दया के बिना मनुष्य से एक तिनका भी नहीं टूट सकता, वह अपना प्रारब्ध तनिक भी नहीं सँवार सकता। पलटू साहिब हमें चेतावनी देते हैं कि यह संसार और हमारा शरीर दोनों झूठे हैं क्योंकि दोनों नश्वर हैं। जीव का कल्याण इसी में है कि वह परम दयालु सतगुरु की शरण में जाए और उनसे नाम की अमोलक दात लेकर प्रभु पर भरोसा रखते हुए प्रेमपूर्वक लगन के साथ उसके नाम का सुमिरन करे, प्रभु को याद करे। सारांश यह कि जो दिन, जो घड़ी अर्थात् जो समय नाम का सुमिरन करने में बीतता है, वही शुभ और मंगलकारी है क्योंकि नाम का सुमिरन करने से हमारा लोक और परलोक दोनों सुधरते हैं। लगन के साथ नाम का सुमिरन करते रहने से हम धीरे-धीरे प्रभु की रज़ा में राज़ी रहना, उसके दिए कष्टों को सहजता से भोगना सीख जाते हैं और इस तरह हमारा प्रारब्ध सँवर जाता है।

नाम के रे परताप से भये आन कै आन॥
भये आन कै आन बड़े के पाँव पड़ूँगा।
का बपुरा तिल तेल फूल संग बिकता महँगा॥
संत हैं बड़े दयाल आप सम मो को कीन्हा।
जैसे भृंगी कीट सिच्छा कुछ ऐसी दीन्हा॥

राई किहा सुमेर अजया गजराज चढ़ाई।*
तुलसी होइगा रेंड़ सरन की पैज† बड़ाई॥
पलटू जातिन नीच मैं सब औगुन की खान।
नाम के रे परताप से भये आन कै आन॥[6]

आप कहते हैं कि नाम के प्रताप से अब मैं वैसा नहीं रहा जैसा पहले था। अब तो मैं अपने महान सतगुरु के चरणों में ही पड़ा रहूँगा क्योंकि उन्हीं की कृपा से मेरा कायाकल्प हुआ है। तिलों का तेल बेचारा क्या चीज़ है? पर फूलों का संग पाकर इत्र बना वह बड़ा महँगा बिकता है। संत बड़े दयालु होते हैं। जैसे भृंगी एक दूसरी जाति के कीड़े को भी अपने जैसा बना लेती है, वैसे ही मेरे सतगुरु ने मुझे कुछ ऐसी शिक्षा दी और अपने जैसा ही बना लिया। सतगुरु ने मानों राई के दाने को सुमेरु पर्वत बना दिया और बकरी को एक हाथी की सवारी करवा दी। उनकी कृपा से इस निक्कमे एरंड ने तुलसी के पवित्र पौधे का रूप ले लिया है। यह संतों की महानता है कि वे शरण में आए जीव की लाज रखने की अपनी टेक निभाते हैं। मैं निम्न जाति का था और अवगुणों से भरा था, परंतु अपने सतगुरु के दिए नाम की कृपा से कुछ का कुछ हो गया हूँ।

भीठ बहुत सतनाम है पियत निकारै जान॥
पियत निकारै जान मरै की करै तयारी।
सो वह प्याला पियै सीस को धरै उतारी॥
आँख मूँदि कै पियै जियन की आसा त्यागै।
फिरि वह होवै अमर मुए पर उठि कै जागै॥
हरि से वे हैं बड़े पियो जिन हरि रस जाई।

* अजया=बकरी † पैज=मान, इज़्ज़त

ब्रह्मा बिस्नु महेस पियत कै रहे डेराई॥*
पलटू मेरे बचन को ले जिज्ञासु मान।
मीठ बहुत सतनाम है पियत निकारै जान॥[7]

पलटू साहिब कहते हैं कि प्रभु का सच्चा नाम, वह अंतर में गूँज रहा शब्द बहुत मीठा है। पर उसका रसपान करने के लिए मनुष्य को जीते-जी मरना पड़ता है यानी एकाग्र मन से सुमिरन करके शरीर को चेतनाशून्य करना पड़ता है। उसके रस का प्याला पीने के लिए मनुष्य को मरने की तैयारी करनी पड़ती है। जो जीवित रहने की इच्छा छोड़कर आँखें बंद करके, जीते-जी मरकर वह प्याला पीने का अभ्यास करता है वह यह सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है कि वह जब चाहे मरकर फिर उठ सकता है, वह अमर हो जाता है यानी उसे बार-बार नहीं मरना पड़ता, वह आवागमन के चक्कर से छूट जाता है। जिन्होंने अपने अंदर जाकर हरिनाम का रस पी लिया है, वे हरि से भी बड़े हैं। उनके नामरस पी लेने से ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी उनसे डरने लग गए हैं। पलटू साहिब कहते हैं कि हे जिज्ञासु! तू मेरे वचन पर विश्वास कर, इसे मान ले, प्रभु का सच्चा नाम बहुत मीठा है। हाँ, इतनी बात ज़रूर है कि उसे पीने के लिए मनुष्य को पहले जीते-जी मरना पड़ता है।

जेहि सुमिरे गनिका तरी ता को सुमिरु गँवार॥
ता को सुमिरु गँवार भला अपना जो चाहो।
झूठा है संसार रैन सुपने सा जानो॥
मात पिता सुत बन्धु झूठ इनको सब जानो।
सतसंगति हरि भजन सत्त दुइ इनको मानो॥
और देव सब बृथा आस इन की ना कीजै।

* रहे डेराई=डरने लगे

सब देवन के देव हरी अन्तर भजि लीजै॥
पलटू हरि के भजन बिन कोउ न उतरै पार।
जेहि सुमिरे गनिका तरी ता को सुमिरु गँवार॥[8]

पलटू साहिब कहते हैं कि अरे गँवार! अगर तुम अपना भला चाहते हो तो जिस रामनाम का सुमिरन करके वेश्या भी तर गई थी, उसी का सुमिरन करो। यह संसार तो झूठा है, इसे रात के सपने जैसा जानो। माता, पिता, संतान तथा अन्य सब संबंधी इन सबको भी मिथ्या समझो। प्रभु की भक्ति और संतों की संगति इन दो को ही सत्य जानो। मुक्ति पाने की दृष्टि से देवी-देवताओं की भक्ति व्यर्थ है, उनसे मुक्ति पाने की आशा न रखो। परमात्मा तो सभी देवताओं से बड़ा है। अंतर में उसी का नाम भजो। भक्ति किए बिना कोई भी भवसागर को नहीं तर सकता। प्रभु के नाम का सुमिरन करके ही तो वेश्या ने इस महासागर को पार किया था।

भीतर औंटै तत्व† को उठै सबद की खानि॥*
उठै सबद को खानि रहै अंतर लौ लागी।
सुरति देइ उदगारि‡ जोगिनी§ आपुइ जागी॥
*सहज¶ घाट** हरि ध्यान ज्ञान से मन परमोधै††।*
नहिं संग्रह नहिं त्याग अपनी काया सोधै॥
प्रेम भभूत लगाइ धरै धीरज मृगछाला।
तिलक उनमुनी‡‡ भाल जपत है अजपा माला॥

* **औंटै**=भाव अभ्यास करना † **तत्व**=सार भाव शब्द
‡ **उदगारि**=उफान देना भाव ऊपर उठाना § **जोगिनी**=जादूगरनी
¶ **सहज**=चेतना की सबसे ऊँची अवस्था
** **सहज घाट**=भौंहों का केंद्र भाव तीसरा तिल †† **परमोधै**=समझा-बुझा लेता है
‡‡ **उनमुनी**=अंतर्मुख ध्यान

पलटू ऐसा होय जो सो जोगी परमान।
भीतर औंटै तत्व को उठै सबद की खानि॥[9]

पलटू साहिब सच्चे योगी की पहचान बताते हुए कहते हैं कि सच्चा योगी वही होता है जो शब्द-योग का अभ्यास करके शब्द-स्वरूप हो गया हो।

आप कहते हैं कि जो साधक अंतर में शब्द का ख़ूब अभ्यास करता है, वह साधना के पूर्ण हो जाने पर शब्द की खान हो जाता है। ऐसे साधक का ध्यान सदा अंदर की ओर रहता है और शब्द उसकी आत्मा को खींचकर ऊपर के मंडलों में ले जाता है। वह तो मन को तीसरे तिल पर टिकाकर सदा प्रभु के ध्यान में मग्न रहता है और इस अभ्यास से प्राप्त होनेवाले ज्ञान से वह मन को वश में कर लेता है। वह अपने मन को सांसारिक पदार्थों के संचय या त्याग की ओर नहीं जाने देता और अपने शरीर के अंदर प्रभु की खोज करने में लगा रहता है। वह प्रभु-प्रेम की भस्म लगाकर धैर्यरूपी मृगछाला पर आसन जमाता है। अंतर्मुख ध्यान उसके माथे का तिलक होता है। अंतर में निरंतर गूँज रहे शब्द को सुनना ही उसके लिए माला का जाप है। जो अंतर में शब्द का अभ्यास करके शब्द की खान बन गया हो, शब्द-स्वरूप हो गया हो, उसी को तुम सच्चा योगी जानो, रूहानियत के बारे में केवल उसकी कही बात को ही सच्ची मानो।

इक नाम अमोलक मिलि गया,
परगट भये मेरे भाग हैं जी।
गगन की डारि पपिहा बोलै,
सोवत उठी मैं जागि हौं जी॥
चिराग बरै बिनु तेल बाती,
नहिं दीया नहिं आग है जी।

पलटू देखि के मगन भया,
सब छुट गया तिर्गुन दाग है जी॥[10]

निजी अनुभव बताते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि मेरा भाग्य जाग उठा है, मेरे अंतर में वह अनमोल नाम, प्रभु का सच्चा नाम, वह अनाहत नाद प्रकट हो गया है। अब मुझे उसकी पपीहे की आवाज़ जैसी मधुर धुन सुनाई देती है। उसे सुन-सुनकर मेरी सोई हुई आत्मा जाग उठी है। बिना तेल और बत्ती के मेरे अंदर एक ज्योति जल रही है। अंदर न कोई दीया है, न आग, फिर भी प्रकाश ही प्रकाश है और उसे देखकर मैं उसमें मग्न हो गया हूँ। मेरी आत्मा की अब यह अवस्था है कि उसका तीन गुणों में लिप्त होने का कलंक पूरी तरह मिट चुका है।

बूड़ी जात जहाज है नाम निवर्तिक बोल॥*
नाम निवर्तिक बोल हाथ से तेरे जाती।
माँझ धार में फटी सूम† की जोगवै‡ थाती§॥
ऐसे मूरख लोग लालच में जनम गँवावैं।
गई हाथ से चीज तेहू पर लेखा लावैं॥
कंठा रूँधन भये मोह में लागा अजहूँ।
कीन्हे प्रान पयान¶ नाम ना सुमिरे तबहूँ॥
पलटू नर तन रतन सम भा कौड़ी के मोल।
बूड़ी जात जहाज है नाम निवर्तिक बोल॥[11]

पलटू साहिब कहते हैं कि तुम्हारा जीवनरूपी जहाज़ भवसागर में डूबता जा रहा है अर्थात् तुम्हारा मनुष्य जीवन बेकार जा रहा है। अब तो प्रभु

* **निवर्तिक**=रोकनेवाला † **सूम**=कंजूस ‡ **जोगवै**=सँभाल रहा है
§ **थाती**=पूँजी ¶ **पयान**=प्रस्थान

का नाम जप लो क्योंकि केवल वही इसे डूबने से बचा सकता है। बड़े कंजूस हो तुम, तुम्हारी जीवन-नौका तो मँझधार में फँसी टूटने को है, पर तुम अब भी अपनी दुनियावी पूँजी को सँभालने में लगे हो। तुम जैसे मूर्ख लोग सांसारिक पदार्थों के लोभ में अपना जीवन गँवा देते हैं, हर समय यही हिसाब लगाते रहते हैं कि अमुक वस्तु के हाथ से निकल जाने से इतना नुकसान हो गया। तुम्हारी जान तो गले में अटकी हुई है, पर तुम अब भी संसार के मोह में फँसे हुए हो; तुम्हारे प्राण तो कूच करने को हैं, पर तुम अब भी नाम का सुमिरन नहीं करते। यह नर-तन एक रत्न है, एक बहुत क़ीमती चीज़ है, पर तुमने इसे कौड़ी के मोल बेच डाला है। अरे, तुम्हारा यह मनुष्य जीवन व्यर्थ जा रहा है, तुम्हारे जीवन का जहाज़ डूबा जा रहा है। इसे बचाने की तरफ़ ध्यान दो।

चिन्ता रूपी अगिन में जरै सकल संसार॥
जरै सकल संसार जरत निरपति को देखा।
बादसाह उमराव जरत हैं सैयद† सेखा‡॥*
सुर नर मुनि सब जरैं जोगी औ जती§ सन्यासी।
पंडित ज्ञानी चतुर जरै कनफटा उदासी॥
जंगम सिवरा जरै जरै नागा बैरागी।
तपसी दूना जरै बचै नहिं कोऊ भागी॥
पलटू बचते संत जन जेकरे नाम अधार।
चिन्ता रूपी अगिन में जरै सकल संसार॥[12]

पलटू साहिब कहते हैं कि सारा संसार चिंता की आग में जल रहा है। राजाओं को भी जलते देखा है तथा बादशाह और दरबारी, ख़ानदानी और

* **उमराव**=सामंत, दरबारी † **सैयद**=हज़रत मुहम्मद के दामाद अली के वंशज
‡ **सेखा**=प्रतिष्ठित व्यक्ति § **जती**=जितेंद्रिय

इज़्ज़तदार लोग भी जल रहे हैं। इसकी आग में देवता, मुनि, योगी, यति और संन्यासी भी जल रहे हैं। चतुर, विद्वान, ज्ञानवान व्यक्ति और भिन्न-भिन्न श्रेणियों के साधु भी इस आग से नहीं बचे। तपस्या में लगे व्यक्ति तो दुगुना जल रहे हैं—मन से भी और तन से भी। कहीं भागकर भी कोई चिंता से बच नहीं सकता। इस आग से तो केवल संत ही बचते हैं जिन्होंने नाम का सहारा लिया होता है; जबकि संसार के और सब लोग इसमें जलते ही रहते हैं।

खोजत हीरा को फिरै नहीं पोत को दाम॥*
नहीं पोत को दाम जौहरि की गाँठ खुलावै।
बातन की बकवाद जौहरि को बिलमावै†॥
लंबी बोलत बात करै बातन की लदनी‡।
कौड़ी गाँठी नाहिं करत है बातैं इतनी॥
लिहा जौहरी ताड़ फिरा है गाहक खाली।
थैली लई समेटि दिहा गाहक को टाली॥
लोक लाज छूटै नहीं पलटू चाहै नाम।
खोजत हीरा को फिरै नहीं पोत को दाम॥[13]

जो व्यक्ति अपने ज्ञान तथा बुद्धि पर गर्व करता है, वह नाम का अधिकारी नहीं हो सकता। ऐसे दंभी के विषय में पलटू साहिब का कहना है कि वह उस व्यक्ति के समान होता है जो हीरा ढूँढ़ता फिरता है, लेकिन उसके पास पैसे काँच के एक छोटे-से दाने का मोल चुकाने को भी नहीं होते। उसकी गाँठ में तो एक फूटी कौड़ी भी नहीं होती और चाहता यह है कि जौहरी गठरी खोलकर उसे अपना माल दिखा दे। उसके पास केवल

* **पोत**=मनके जैसा काँच का छोटा-सा दाना † **बिलमावै**=समय बरबाद करता है
‡ **लदनी**=माल लादना

बातों का ढेर होता है और लंबी-चौड़ी बातें करते हुए यानी व्यर्थ की बातें करते हुए वह जौहरी का समय नष्ट करता है। जौहरी ताड़ लेता है कि यह ग्राहक मेरे माल का दाम चुकाने में समर्थ नहीं है, इसलिए वह अपनी थैली समेटकर उसे टाल देता है। उस बेचारे को ख़ाली हाथ ही लौटना पड़ता है। यही हाल ज्ञान के अभिमानी झूठे परमार्थी का होता है। वह वैसे तो नाम का अभिलाषी होने का दावा करता है, पर संत के पास जाकर भी वह अपने को बहुत बड़ा विद्वान जताता है और व्यर्थ बहस करता है। नामरूपी रत्न पाने के लिए तो अपने ज्ञान का अहंकार तथा लोकलाज त्यागकर नम्रतापूर्वक संत की शरण लेनी पड़ती है और यह मूल्य चुकाने की क्षमता उसमें होती नहीं। फिर वह बहुमूल्य रत्न उसे कैसे मिल सकता है? वह तो कोई मामूली-सी रूहानी दात पाने का अधिकारी भी नहीं होता, इसलिए संत उसे युक्तिपूर्वक टाल देते हैं।

8

संत, फ़क़ीर और सतगुरु

उपदेश के अध्याय में स्पष्ट कर दिया है कि संत उस महात्मा को कहा जाता है जिसने प्रभु को पा लिया हो। अरबी में ऐसे महापुरुष को फ़क़ीर कहते हैं। सतगुरु वह संत होते हैं जो जीवों को प्रभु से मिलाप की युक्ति सिखाते हैं। सतगुरु लोगों को प्रभु-प्राप्ति के लिए नाम यानी शब्द की साधना करने की ही शिक्षा देते हैं और नामदान पाने के पात्र बन चुके जीवों को नाम का भेद देकर, नाम मार्ग पर डालकर उनकी रूहानी यात्रा में शुरू से आख़िर तक उनका साथ देते हैं, उनका मार्गदर्शन करते हैं। सतगुरुओं का संसार में आगमन का उद्देश्य ही जीवों से नाम भक्ति करवाना और उन्हें भवसागर के पार ले जाकर प्रभु से मिलाना होता है। वे जीवों को धार्मिक आडंबर और बहिर्मुखी भक्ति से हटाकर अंतर्मुखी भक्ति में लगाते हैं।

संतों के लक्षणों का पलटू साहिब बहुत विस्तार के साथ वर्णन करते हैं। उनके वचनों का सारांश यह है कि संत शब्द-स्वरूप होते हैं। वे सत्य के ज्ञाता होते हैं और उनका ज्ञान पुस्तकों पर आधारित न होकर आंतरिक अनुभव पर आधारित होता है। उन्होंने काम, क्रोध आदि पाँचों विकारों पर पूर्ण विजय पा ली होती है और वे निंदा-स्तुति, सुख-दुःख, मित्र-शत्रु तथा इस तरह के अन्य द्वंद्वों के जाल में कभी नहीं फँसते। वे समदर्शी होते हैं और सब जीवों से एक जैसा प्यार करते हैं। संतों के मन में किसी भी सांसारिक पदार्थ की इच्छा नहीं होती। वे मन, माया और कर्मों के बंधनों से बँधे नहीं होते, जीवनमुक्त होते हैं। वे अत्यंत दयालु, धैर्यवान, शीलवान, क्षमाशील तथा मधुरभाषी होते हैं। अपनी आजीविका के लिए वे दूसरों पर निर्भर नहीं होते, बल्कि ख़ुद की कमाई से गुज़ारा करते हैं।

राजा-महाराजा और बड़े-बड़े धनवान तरह-तरह की बहुमूल्य भेंट लेकर उनके पास आते हैं, पर वे अपने लिए कभी किसी से कुछ नहीं लेते। वे बड़े उदार होते हैं और परोपकार के लिए अपना नाम का ख़ज़ाना दोनों हाथों से मुफ़्त लुटाते हैं।

पलटू साहिब कहते हैं कि किसी पूर्ण संत को ही अपना गुरु धारण करना चाहिए, अधूरे गुरु का सहारा लेकर जीव मँझधार में ही डूब जाता है। पूरा गुरु मिल जाए तो जीव प्रभु को पा लेता है, पर पूरा और सच्चा गुरु जीव को प्रभु की दया से ही मिलता है।

पलटू साहिब यह भी कहते हैं कि सतगुरु की संगति जीव को पूर्व जन्मों के पुण्यों के कारण और प्रभु की कृपा से मिलती है। स्पष्ट है कि प्रभु की ओर से पूरे गुरु से मिलाप की कृपा मनुष्य पर तभी होती है जब उसके बहुत-से पिछले पुण्य इकट्ठे हो जाते हैं।

सील सनेह सीतल बचन, यही संतन की रीति है जी।
*सुनत कै प्रान जुड़ाय जावै**, *सब से करते वे प्रीति हैं जी॥*
चितवनि चलनि मुसक्यानि नवनि†, *नहिं राग दोष हारि जीति है जी।*
पलटू छिमा संतोष सरल, तिन कौ गावै स्रुति नीति है जी॥[1]

संतों के शील, क्षमा, संतोष, नम्रता, स्नेहशीलता आदि गुणों का उल्लेख करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि संत स्वभाव से ही शीलवान और स्नेहशील होते हैं और उनकी वाणी कोमल तथा शांतिदायक होती है जिसे सुनने से तप्त प्राणों को ठंडक पहुँचती है। संत सबसे प्यार करते हैं और उनकी दृष्टि से, चाल से तथा मुसकान से नम्रता झलकती है। वे राग-द्वेष से मुक्त होते हैं तथा हार और जीत में कोई अंतर नहीं करते। वेद उनकी प्रशंसा करते हुए कहते हैं कि वे सबके साथ क्षमा, संतोष तथा सरलता का व्यवहार करते हैं।

---

* **जुड़ाय जावै**=ठंडक पाते हैं † **नवनि**=नम्रता

संत बराबर कोमल दूसर को चित नाहिं॥
दूसर को चित नाहिं करैं सब ही पर दाया।
हित अनहित सब एक असुभ सुभ हाथ बनाया॥
कोमल कुसुमी चाह नहीं सुपने में दूषन।*
देखैं परहित लागि प्रेम रस चूखैं ऊखन॥
मिलनसार मुसकान बचन मदु बोली मीठी।
पुलकित सीतल गात सुभग† रतनारी‡ दीठी॥
पलटू कौनो कछु कहै तनिको ना अकुताहिं§।
संत बराबर कोमल दूसर को चित नाहिं॥[2]

संतों के हृदय की कोमलता का वर्णन करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि संतों जैसा कोमल हृदय और किसी का नहीं होता। वे सब पर दया करते हैं। कोई उनका भला करता है या बुरा, इससे उन्हें कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता क्योंकि वे अशुभ को भी शुभ बना लेते हैं यानी कोई उनका बुरा भी करे तो उन्हें उसमें अपना भला ही दिखाई देता है। उनका हृदय फूल-सा कोमल होता है। वे सपने में भी किसी के दोष नहीं देखते। हर पल दूसरों के हित का ध्यान रखते हैं। वे गन्ने के रस जैसा मीठा प्रभु-प्रेम का रस पीते हैं। वे सबसे प्यारभरी मुसकराहट के साथ मिलते हैं; उनके वचनों में कोमलता और वाणी में मिठास होती है। वे सदा प्रसन्न रहते हैं और उनके दर्शन से जीवों को ठंडक पहुँचती है। उनकी प्रेम से रँगी दृष्टि बड़ी सुखदायक होती है। उन्हें कोई कुछ भी कहता रहे, वे अधीर नहीं होते। संतों जैसा नरम दिल और किसी का नहीं होता।

संत दरबार¶ तहसील संतोष की,
कचहरी ज्ञान हरि नाम डंका।

* **कोमल कुसुमी**=फूल के समान कोमल † **सुभग**=सुखद
‡ **रतनारी**=स्नेह से रँगी हुई § **ना अकुताहिं**=अधीर नहीं होते
¶ **दरबार**=किसी महात्मा का आश्रम या डेरा

रिद्धि औ सिद्धि दोउ हाथ बाँधे खड़ी,
बिबेक ने मारि कै दिहा धक्का॥
मुक्ति सिर खोलि कै करै फिरियाद को,
दिहा दुदकार यह अदल बंका।*
मारि माया कँहै अमल† ऐसा किहा,
दास पलटू अहै हरीफ‡ पक्का॥[3]

संतों की महिमा का बखान करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि संतों की संगत में संतोष और तृप्ति के भाव व्याप्त हैं। उनकी शरण में आनेवालों से यह आशा की जाती है कि वे संतोष का जीवन बिताएँगे, लोभवश अंधाधुंध संसार के पदार्थों के पीछे नहीं भागेंगे। संतों के दरबार में परमार्थ की चर्चा होती है और प्रभु के नाम की महिमा बताई जाती है। संत विवेकी होते हैं, इसलिए समृद्धि तथा चमत्कार करने की शक्ति को कोई महत्त्व नहीं देते, हालाँकि दोनों उनका आदेश पाने के लिए हरदम हाथ जोड़े उनके सामने खड़ी रहती हैं। वे तो मुक्ति को भी कोई महत्त्व नहीं देते, उस बेचारी की दीनताभरी प्रार्थना की परवाह न करते हुए वे उसे दुत्कार देते हैं क्योंकि वे तो परमपिता परमात्मा के प्रेम में मग्न होते हैं। कितना विचित्र न्याय होता है उनकी सभा में! उन्होंने स्वयं तो माया पर विजय प्राप्त की होती है, अन्य बहुत-से जीवों को भी उसकी ओर से विमुख करने का कार्य करते हैं, जिसे देखकर मानना पड़ता है कि संत माया का डटकर मुक़ाबला करते हैं।

बिगत राग जो होय ज्ञान में चक्कवै§।
तुरिया से आतीत¶ भजन में पक्कवै॥

* **अदल**=न्याय † **अमल**=काम ‡ **हरीफ**=प्रतिद्वंद्वी, विरोधी
§ **चक्कवै**=चक्रवर्ती, सम्राट ¶ **आतीत**=पार गया हुआ

रहनी गहनी एक सबद पहिचानिये।
अरे हाँ पलटू ऐसा जो कोइ होय गुरू करि मानिये॥[4]

पलटू साहिब कहते हैं कि जिस महात्मा के मन में सांसारिक पदार्थों के प्रति तनिक भी आसक्ति न हो, जो उच्चतम कोटि का ज्ञानी हो, चेतना की चौथी अवस्था पार करके सहज अवस्था में पहुँच गया हो, जिसकी भक्ति पूर्ण हो चुकी हो और जिसने बड़े दृढ़ संकल्प के साथ प्रेमपूर्वक शब्द का अभ्यास किया है, उसी को गुरु धारण कीजिए।

बूझि बिचारि गुरु कीजिये, जो कर्म से न्यारा।
कर्म-बन्ध हरि दूरि है, बूड़हु मँझधारा॥ टेक॥
काम क्रोध जिनके नहीं, नहिं भूख पियासा।
लोभ मोह एकौ नहीं, नहिं जग की आसा॥
ज्यों कंचन त्यों काँच है, अस्तुति सो निन्दा।
सत्रु मित्र दोउ एक हैं, मुरदा नहिं जिन्दा॥
जोग भोग जिनके नहीं, नहिं संग्रह त्यागी।
बन्द मोष एकौ नहीं, सत सबद के दागी॥
पाप पुन्य जिनके नहीं, नहिं गरमी पाला।
पलटू जीवन-मुक्त ते, साहिब के लाला॥[5]

पूरे गुरु के लक्षण विस्तार से बताते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि गुरु सोच-समझकर ही धारण करना चाहिए। ऐसे महात्मा को गुरु धारण करना चाहिए जो कर्मों के बंधन से छूट चुका हो। जो गुरु कर्मों के बंधन में बँधा हो, उससे परमात्मा बहुत दूर होता है। यदि ऐसा अधूरा गुरु धारण करोगे तो उसके साथ तुम भी मँझधार में डूब जाओगे। ऐसा गुरु धारण करो जो भूख-प्यास और सर्दी-गरमी की परवाह न करता हो तथा जो काम, क्रोध, लोभ और मोह से मुक्त हो, जिसे किसी भी सांसारिक पदार्थ की इच्छा

न हो, वह गृहस्थ और संन्यास, संग्रह और त्याग, बंधन और मुक्ति, पाप और पुण्य, हर तरह के द्वैत से ऊपर उठ चुका हो। गुरु उसे धारण करो जो सच्चे शब्द का अभ्यास करके शब्द-स्वरूप हो गया हो और जो सदा प्रभु की इच्छा को ध्यान में रखकर निष्काम भाव से कर्म करता हो जिससे वह पाप-पुण्य से लिप्त न हो। ऐसे महात्मा जीते-जी तन, मन, माया तथा कर्मों के बंधनों से मुक्त होते हैं और प्रभु को बहुत प्यारे होते हैं।

पलटू संत जो कहि गये, सोई बात है ठीक।
बचन संत कै नहिं टरै, ज्यों गाड़ी की लीक॥[6]

पलटू साहिब कहते हैं कि संत जो कह देते हैं, वही ठीक होता है क्योंकि उनका कहा अवश्य होता है, कभी टलता नहीं, जैसे गाड़ी के आने-जाने से उसके पहियों से बनी लकीर मिटती नहीं।

साध बचन साचा सदा जो दिल साचा होय॥
जो दिल साचा होय रहै ना दुबिधा भागै।*
जो चाहै सो मिलै बात में बिलँब ना लागै॥
मन बचन कर्म लगाय संत की सेवा लावै।
उकठा काठ बियास† साच जो दिल में आवै॥
जिनको है बिस्वास तेही को बचन फुरानी‡।
ह्वैगा उन का काम सन्त की महिमा जानी॥
पलटू गाँठि में बाँधिये खाली पड़ै न कोय।
साध बचन साचा सदा जो दिल साचा होय॥[7]

---

* **दुबिधा**=दुचित्ती † **उकठा काठ बियास**=भाव सूखे वृक्ष में भी कोंपलें फूटना
‡ **फुरानी**=सच्चा होता है

पलटू साहिब कहते हैं कि अगर मन में सतगुरु पर पूरा विश्वास हो तो उसे सतगुरु का प्रत्येक वचन सत्य प्रतीत होता है। उन पर पूरा विश्वास हो तो मनुष्य डाँवाँडोल नहीं होता, उसके मन में कोई भी दुविधा नहीं रह जाती, कोई अनिश्चय नहीं रह जाता बल्कि दृढ़ता से सतगुरु के आदेशों का पालन करता है। उसकी रूहानी तरक़्क़ी की इच्छा पूरी होने लगती है, रूहानी तरक़्क़ी करने में उसे देर नहीं लगती। अगर मन में पक्का विश्वास बैठ जाए तो शिष्य मन, वचन और कर्म से सतगुरु की सेवा में लग जाता है और पहले प्रभु-प्रेम के रस के बिना सूखा पड़ा उसका हृदय वह प्रेम रस पाकर हरा-भरा हो जाता है, आनंद-मग्न हो जाता है, जैसे जल मिलने से सूखे वृक्ष में भी कोंपलें फूट आती हैं। जिसे सतगुरु पर विश्वास हो, वही उनके मुँह से निकली हर बात सच्ची मानता है। उसका काम बन जाता है और उसे सतगुरु की महिमा का ज्ञान हो जाता है। यह बात हर किसी को मन में बिठा लेनी चाहिए कि सतगुरु पर पूरा विश्वास रखनेवाला कोई भी साधक पारमार्थिक लाभ से वंचित नहीं रहता। वह उनकी कही बात को हमेशा सच मानता है और वह वास्तव में होती भी सच है।

साहिब वही फकीर है जो कोइ पहुँचा होय॥
जो कोइ पहुँचा होय नूर का छत्र बिराजै।
सबर तखत पर बैठि तूर अठपहरा बाजै॥
तम्बू है असमान जमीं का फरस बिछाया।
छिमा किया छिड़काव खुसी का मुस्क लगाया॥*
नाम खजाना भरा जिकिर का नेजा† चलता।
साहिब चौकीदार देखि इबलीसहुँ‡ डरता॥
पलटू दुनिया दीन में उनसे बड़ा न कोय।
साहिब वही फकीर है जो कोइ पहुँचा होय॥[8]

* **मुस्क**=कस्तूरी, यहाँ सुगंध से अभिप्राय है † **नेजा**=भाला ‡ **इबलीसहुँ**=शैतान

पूर्णता प्राप्त कर चुके सच्चे संतरूपी शाहंशाह के पवित्र वैभव का वर्णन करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि उसके ऊपर दिव्य प्रकाश का छत्र सजा होता है और वह संतोष के सिंहासन पर विराजमान होता है। वहाँ अंतर में आठों पहर बजनेवाला अनाहत नाद का बाजा बजता रहता है। ज़मीन उसका बिछौना होती है और आसमान उसकी छत। वह पापियों के मन का ताप दूर करने के लिए क्षमा के जल का छिड़काव करता है और अपने चारों ओर ख़ुशी की सुगंध बिखेरता है। उसके पास नाम का एक बहुत बड़ा भंडार होता है। सदैव चलनेवाला सुमिरन उसका भाला होता है। ख़ुद कुलमालिक परमात्मा को उसका चौकीदार बना देख शैतान भी डरता है। उसे माया अथवा आशा-तृष्णा आदि किसी के आक्रमण का भय नहीं होता। इस लोक या परलोक दोनों में कोई भी संत से बड़ा नहीं होता।

फाका जिकर किनात ये तीनों बात जगीर॥*
तीनों बात जगीर खुसी की कफनी† डारै।
दिल को करै कुसाद‡ आई भी रोजी टारै॥
इबादत दिन रात याद में अपनी रहना।
खुदी खूब को खोइ जनाजा जियतै करना॥
सीकन्दर और गदा§ दोऊ को एकै जानै।
तब पावै टुक नसा फना का प्याला छानै॥
पलटू मस्त जो हाल में तिसका नाम फकीर।
फाका जिकर किनात ये तीनों बात जगीर॥[9]

सच्चे फ़क़ीर के लक्षण बताते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि अल्प आहार, सुमिरन और संतोष ये तीनों चीज़ें ही उसकी संपत्ति होती हैं।

* **किनात**=संतोष † **कफनी**=फ़क़ीरों का एक विशेष वस्त्र ‡ **कुसाद**=उदार
§ **गदा**=भिखारी

वह प्रसन्नता का चोला पहने रखता है। अगर दूसरे को ज़रूरत हो तो उदारता से पास आई ज़रूरी से ज़रूरी चीज़ भी उसे दे देता है। उसने दिन-रात भक्ति की होती है, वह सदा प्रभु की याद में ही मग्न रहता है। जीते-जी मरने का अभ्यास करके वह अपने अहं को पूरी तरह ख़त्म कर देता है। राजा और रंक उसके लिए समान होते है। जीते-जी मरकर जब वह नाम रस का जाम पी लेता है तो उसे नाम की खुमारी चढ़ जाती है। फ़क़ीर उसी को कहते हैं जो हर अवस्था में मस्त रहता है।

संत चढ़े मैदान पर तरकस बाँधे ज्ञान॥
तरकस बाँधे ज्ञान मोह दल मारि हटाई।
मारि पाँच पच्चीस दिहा गढ़ आगि लगाई॥
काम क्रोध को मारि कैद में मन को कीन्हा।
नव दरवाजे छोड़ि सुरत दसएँ पर दीन्हा॥
अनहद बाजै तूर अटल सिंहासन पाया।
जीव भया संतोष आय गुरु नाम लखाया॥
पलटू कफ्फन बाँधि कै खेंचो सुरति कमान।
संत चढ़े मैदान पर तरकस बाँधे ज्ञान॥[10]

परमार्थ के खोजियों को संबोधित करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि संत की पदवी प्राप्त करनेवाले सब साधक सतगुरु से मिले शब्द मार्ग के ज्ञान का तरकस बाँधकर ही परमार्थ के मैदान में उतरे थे। तरकस बाँधे हुए उन्होंने मोह की सेना को मार भगाया था और पाँच तत्त्वों और पच्चीस प्रकृतियों वाले शरीर को मुर्दा करके यानी जीते-जी मरकर, माया के क़िले में आग लगा दी थी। काम, क्रोध आदि पाँच विकारों को नष्ट करके उन्होंने मन को क़ैद यानी वश में कर लिया था। उन्होंने ध्यान को शरीर के नौ दरवाज़ों की ओर से हटाकर दसवें पर टिका लिया था, जिससे उनके अंतर में अनाहत नाद गूँज उठा था जिसके फलस्वरूप उन्हें

परमधाम के अविनाशी सिंहासन पर बैठने का सौभाग्य प्राप्त हो गया था। वे अविनाशी प्रभु में समाकर उससे अभेद हो गए थे। गुरुकृपा से उनके अंतर में शब्द के प्रकट हो जाने पर उनकी आत्मा संतुष्ट हो गई थी। तुम भी जीते-जी मरने के लिए तैयार होकर अपने ध्यान का धनुष तान लो। संतों के स्तर पर पहुँचने वाले सब भक्त शब्द मार्ग के ज्ञान का तरकस बाँधकर ही मन के साथ लड़ने के लिए रणभूमि में उतरे थे।

अनुभै परगास भया जिस को,
तिस ही की बात प्रमान है जी।
भीतर के सब खुलि गये पट,
पक्का उसी का ज्ञान है जी॥
खिल लोक प्रविर्ति† की बात कहै,*
वा का तेज कैसा जैसे भान है जी।
पलटू जगत से पीठि देवै,
नहिं संत होना औसान है जी॥[11]

पलटू साहिब कहते हैं कि जिसका आध्यात्मिक ज्ञान धार्मिक और दार्शनिक ग्रंथों के अध्ययन पर नहीं, बल्कि आंतरिक अनुभव पर आधारित है, उसी की कही बात मानने योग्य है। जिसके अंदर के सब किवाड़ खुल गए हैं अर्थात् जिसको रूहानी मंडलों में प्रवेश प्राप्त है, उसी का ज्ञान पूर्ण है। संसार के अन्य सब लोगों की बातें उनकी विषयों में आसक्ति प्रकट करती हैं या दुनियावी कामकाज से संबंध रखती हैं, लेकिन अनुभवी और पूर्ण ज्ञानी संत में सूर्य जैसा तेज होता है यानी उसके ज्ञान का प्रकाश लोगों के मोहरूपी अंधकार का नाश कर देता है। पर संत होना आसान नहीं क्योंकि संत होने का मतलब है संसार के प्रति पूरी तरह उदासीन होना।

* **खिल**=सारा † **प्रविर्ति**=विषयों के प्रति आसक्ति और दुनियावी धंधों में लगे रहना

कहिबे से क्या भया भाई, जब ज्ञान आपु से होई॥ टेक॥
अललपच्छ कै चेटुका†, वा को कौन करै उपदेस।*
उलटि मिलै परिवार में, वा से कौन कहै संदेस॥
ज्यों सिसु होत मराल‡ के, वा को कौन सिखावे ज्ञान।
नीर कँहै अलगाइ कै, वह छीर करतु है पान॥
सिंह कै बच्चा गिरि पर्‌यौ, वह खेलत तुरत सिकार।
वा को कौन सिखावई, वो हस्ती डारत मार॥
संत को कौन सिखावता, उन्ह अनुभव भा परकास।
सिखई बुधि केहि काम की, जो हृदय न पलटूदास॥[12]

आप कहते हैं कि ज्ञान तो मनुष्य स्वयं परिश्रम करके ही प्राप्त करता है। अलल पक्षी के बच्चे को भला कौन शिक्षा देता है? वह आकाश में नीचे गिर रहे अंडे में से निकलकर ख़ुद ही ऊपर की ओर उड़कर अपने परिवार में जा मिलता है। उसे ऊँची उड़ान भरने को कहने के लिए उसके परिवार का संदेश लेकर तो कोई उसके पास नहीं आता। हंस का बच्चा भी स्वयं ही पानी को दूध से अलग करके दूध पीने में लग जाता है। उसे भी कोई यह करना सिखाता नहीं। शेर का बच्चा जन्म लेने के कुछ दिन बाद ही शिकार खेलना शुरू कर देता है और बड़ा होने पर बिना सिखाए हाथी को मार डालता है। हर जीव कुछ करके ही सीखता है, करनी द्वारा ही ज्ञान प्राप्त करता है। संतों को भी आध्यात्मिक ज्ञान उपदेश से नहीं मिला होता। उन्होंने नाम का अभ्यास करके आंतरिक अनुभव प्राप्त किया होता है। उनका आध्यात्मिक ज्ञान उन्हें अपनी करनी से प्राप्त उस अनुभव पर ही आधारित होता है। उपदेश से मिला बौद्धिक ज्ञान भला किस काम का, अगर हृदय का कायापलट नहीं हुआ या फिर मनुष्य का ध्यान संसार

* **अललपच्छ**—एक काल्पनिक पक्षी जो आकाश में बहुत ऊँचाई पर उड़ता है। वह आकाश में ही अंडा देता है और अंडा आकाश में ही फट जाता है। अंडे में से जो बच्चा निकलता है, वह एकदम ऊपर की ओर उड़ना शुरू कर देता है।

† **चेटुका**=बच्चा ‡ **मराल**=हंस

की ओर से हटकर पूरी तरह प्रभु की ओर नहीं हो गया। वास्तव में ऐसा हृदय-परिवर्तन केवल करनी से होता है।

राम समीपी संत हैं वे जो करैं सो होय॥
वे जो करैं सो होय हुकुम में उन के साहिब।
संत कहैं सोइ करैं राम ना करते बायब॥*
राम के घर के बीच काम सब संतै करते।
देवता तेंतिस कोट संत से सबही डरते॥
राई पर्बत करैं करैं परबत को राई।
राम के घर के बीच फिरत है संत दुहाई॥
पलटू घर में राम के और न करता कोय।
राम समीपी संत हैं वे जो करैं सो होय॥[13]

पलटू साहिब हमें समझाते हैं कि संत प्रभु के बहुत समीप होते हैं। वे जो भी करना चाहें, वह हो जाता है क्योंकि स्वयं प्रभु भी उनकी इच्छा को नहीं टालता। वह वही करता है जो संत चाहते हैं; उनकी इच्छा के विपरीत वह कुछ नहीं करता। संत जो कुछ भी कर दें, प्रभु को स्वीकार होता है। तैंतीस करोड़ देवता भी† उनसे डरते हैं। संत असंभव कार्य भी कर सकते हैं, राई को पहाड़ और पहाड़ को राई में बदल सकते हैं। प्रभु के दरबार में केवल संतों की ही मर्ज़ी चलती है।

सतगुरु सिकलीगर‡ मिलैं तब छुटै पुराना दाग॥
छुटै पुराना दाग गड़ा मन मुरचा§ माहीं।

* **बायब**=विरुद्ध † पुराणों में देवताओं की यह संख्या बताई गई है।
‡ **सिकलीगर**=चाकू, छुरी, तलवार आदि की धार तेज़ करने और उन्हें चमकाने वाला
§ **मुरचा**=ज़ंग

सतगुरु पूरे बिना दाग यह छूटै नाहीं॥
झाँवाँ लेवै जोग तेग को मलै बनाई।*
जौहर† देय निकार सुरत को रंद‡ चलाई॥
सब्द मस्कला§ करै ज्ञान का कुरँड¶ लगावै।
जोग जुगत से मलै दाग तब मन का जावै॥
*पलटू सैफ** को साफ करि बाढ़ धरै†† बैराग।*
सतगुरु सिकलीगर मिलैं तब छुटै पुराना दाग॥[14]

पलटू साहिब कहते हैं कि तलवार पर लगा ज़ंग का दाग़ सिकलीगर ही उतारता है और मन पर लगा इच्छाओं, विकारों और जन्म-जन्म के पापों का पुराना दाग़ सतगुरु रूपी सिकलीगर ही छुड़ाता है। मन पर लगा यह दाग़ बहुत गहरा है और सतगुरु के मिले बिना यह कभी नहीं छूटता। जिज्ञासु को चाहिए कि सतगुरु से शब्द-योग का सान ले और अपने मन की तलवार को उस पर अच्छी तरह घिसे यानी लगन के साथ सुमिरन करे। आत्मा की शब्द को सुनने की शक्ति को जगाकर उससे मन पर रंदा चलाने का काम ले। इस तरह वह मन को निर्मल, गुणी और उज्ज्वल बना ले। मनुष्य जब मन को शब्द से सैक़ल करता है और फिर उसे आंतरिक अनुभव के कुरंड पर घिसता है या यों कह लें कि शब्द-योग की युक्ति से उसकी अच्छी तरह सफ़ाई करता है, तभी मन पर लगा पक्का दाग़ उतरता है। मन को इस युक्ति से साफ़ करने से साधक का वैराग्य बढ़ता है। अंत में पलटू साहिब एक बार फिर कहते हैं कि मन की तलवार पर लगा पुराना, गहरा दाग़ सतगुरु के मिलने पर ही छूटता है, वैसे नहीं।

---

* **झाँवाँ**=पत्थर या बहुत पकी हुई ईंट का टुकड़ा † **जौहर**=चमक
‡ **रंद (रंदा)**=समतल करके चमकीला बनानेवाला औज़ार
§ **मस्कला**=चमकदार ¶ **कुरँड**=सान बनाने के काम आनेवाला पत्थर
** **सैफ**=तलवार †† **बाढ़ धरै**=बढ़ाए

धुबिया फिर मर जायगा चादर लीजै धोय॥
चादर लीजै धोय मैल है बहुत समानी।
चल सतगुरु के घाट भरा जहँ निर्मल पानी॥
चादर भई पुरानि दिनों दिन बार न कीजै।*
सतसंगत में सौंद† ज्ञान का साबुन दीजै॥
छूटै कलमल‡ दाग नाम का कलप§ लगावै।
चलिए चादर ओढ़ि बहुर नहिं भवजल आवै॥
पलटू ऐसा कीजिये मन नहिं मैला होय।
धुबिया फिर मर जायगा चादर लीजै धोय॥[15]

हमारे मन का मैल केवल जीवित सतगुरु ही धो सकते हैं, यह समझाते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि सतगुरु ही वह धोबी है जो मन की चादर को धो सकता है। यह चादर फ़ौरन धुलवा लो, देर कर दोगे तो धोबी ही नहीं रहेगा। यह मनरूपी चादर कई जन्मों से तुम्हारे साथ है और इसमें अनगिनत कर्मों की मैल समाई हुई है। इसे जल्दी सतगुरु के घाट पर ले चलो जहाँ शब्द का निर्मल जल है। इसे धुलवाने में अब देर न करो। इसे सतगुरु की संगति की रेह¶ में सानकर आध्यात्मिक ज्ञान का साबुन लगाओ। तभी इस पर लगा इच्छाओं और विकारों का दाग़ उतरेगा। इसे उज्ज्वल बनाने के लिए भी इसे शब्द की ही माँड़ी लगाओ। अगर आत्मा ऐसी साफ़ और उजली चादर ओढ़े यानी ऐसा निर्मल तथा उज्ज्वल मन साथ लिये संसार से जाती है तो उसे फिर यहाँ नहीं आना पड़ता। पलटू साहिब कहते हैं कि अगर मेरी बताई हुई युक्ति अपनाओगे तो तुम्हारा मन मैला नहीं रहेगा। जल्दी करो, चादर धुलवा लो। फिर तो धोबी ही नहीं रहेगा।

---

* **बार**=देर † **सौंद**=सानकर ‡ **कलमल**=(कलिमल) पापकर्म
§ **कलप**=कपड़े में लगाई जानेवाली माँड़ी
¶ **रेह**=खार मिश्रित धूल जिसका प्रयोग कपड़े की मैल निकालने के लिए होता था।

करम बँधा संसार बँधावै आप से।
जमपुर बाँधा जाय करम की फाँस से॥
कोइ न सकै छुड़ाय रस्सा यह मोट है।
अरे हाँ पलटू संतन डारा काटि, नाम की ओट से॥[16]

पलटू साहिब कहते हैं कि सब जीव कर्मों के बंधन में बँधे हैं और यह बंधन उनका अपना ही तैयार किया हुआ है। अपने ही कर्मों के फंदे में फँसे वे मरकर हर बार धर्मराज के सामने पेश होते हैं जो उनके कर्म देखकर उन्हीं के अनुसार अगला जन्म दे देता है। कर्मों के रस्से से उन्हें कोई नहीं छुड़ा सकता, वह बहुत मोटा है। हाँ, संत नाम के ज़रिये ज़रूर उसे काट डालते हैं।

तड़पै बिजुली गगन में, कलस जात है फूटि।
पलटू संत के नाँव से, पाप जात है छूटि॥[17]

संतों की कृपा से जीवों के जन्म-जन्म से संचित पापों के नष्ट हो जाने और आवागमन के चक्कर से मुक्ति की ओर संकेत करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि संत अंदर के आकाश में प्रकाश एवं ध्वनि का स्वरूप लिए जिस नाम के साथ आत्मा का संबंध जोड़ते हैं, वह जब प्रकट हो जाता है तो उसके पापों के भंडार को वैसे ही नष्ट कर डालता है जैसे बाहर के आकाश में कड़कती बिजली घड़े को फोड़ डालती है। संत-सतगुरु के बख़्शे नाम के अभ्यास से जीव पापों के दुःखदायी बंधन से छुटकारा पा लेता है।

पलटू तीरथ को चला, बीचे मिलि गे संत।
एक मुक्ति के खोजते, मिलि गइ मुक्ति अनन्त॥[18]

संतों की संगति की महिमा करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि सांसारिक जीव किसी एक मुक्ति की खोज में तीर्थयात्रा करता है परंतु सच्चे संत के मिलाप से और उसके उपदेश पर चलने से, वह हमेशा के लिए आवागमन के चक्कर से मुक्त हो जाता है।

राम का मिलना सहज है, संत का मिलना दूरि।
पलटू संत के मिले बिनु, राम से परै न पूरि॥[19]

संतों की महिमा का बखान करते हुए आप कहते हैं कि परमार्थी का यदि किसी संत से मिलाप हो जाए और उस संत की शरण मिल जाए तो प्रभु उसे आसानी से मिल जाएगा। परंतु संत की शरण बड़ी कठिनाई से मिलती है। बहुत पुण्य संचित किए हों और प्रभु की कृपा हो तभी मिलती है और यह प्रभु का विधान है कि संतों की शरण के बिना जीव का मनोरथ पूरा नहीं हो सकता।

भाव यह है कि प्रभु की प्राप्ति सतगुर के मार्गदर्शन में नाम भक्ति करने से ही होती है, प्रभु की और किसी भी प्रकार की भक्ति करने से नहीं।

पलटू चाहैं सो करैं, उनसे सब कुछ होय।
राम का मिलना सहज है, संत मिला जो होय॥[20]

पलटू साहिब कहते हैं कि संत जो चाहें कर दें। वे सब कुछ कर सकते हैं। अगर गुरु के रूप में संत मिल जाएँ तो प्रभु की प्राप्ति आसानी से हो जाती है क्योंकि संत संसार में आते ही जीवों को प्रभु से मिलाने के लिए हैं।

पूरब पुन्न भये परगट, सतसंग के बीच में जाय परी।
आनंद भयो जब संत मिले, वही सुभ दिन वहि सुभ घरी॥
दरसन करत त्रय ताप मिटे, बिनु कौड़ी दाम मैं जाय तरी।
पलटू आवागवन छुटा, रज चरनन की जब सीस धरी॥[21]

सतगुरु की संगति से कृतार्थ हुई आत्मा कह रही है कि जब मेरे पूर्व जन्मों के अनेक पुण्यों के फलने का समय आया तो मुझे सतगुरु का संग मिल गया। उनसे मिलाप हुआ तो मैं आनंदित हो उठी। जिस दिन और जिस घड़ी वह मिलन हुआ, उसी को मैं जीवन का सबसे शुभ दिन तथा घड़ी मानती हूँ। सतगुरु का दर्शन करने से मुझे तीनों प्रकार के कष्टों से राहत मिली। जब मैंने उनके आंतरिक चरणों की शरण ले ली तो मुझे आवागमन से छुटकारा मिल गया। इस प्रकार एक कौड़ी भी ख़र्च किए बिना मैं भवसागर को पार कर गई।

जग खीझै तो का भया रीझै सतगुरु संत॥
रीझै सतगुरु संत आस कुछ जग की नाहीं।
एक द्वार को छोड़ और ना माँगन जाही॥
जिउ मेरो बरु जाय जन्म बरु जाय नसाई।
करों न दूसर आस संत की करों दुहाई॥
तीन लोक रिसियाय सकल सुर नर और नारी।*
मोर न बाँकै बार पठंगा† पाया भारी॥
पलटू सब रोवै पड़ा मोर भया सलतंत‡।
जग खीझै तो का भया रीझै सतगुरु संत॥[22]

* **रिसियाय**=रूठ जाए † **पठंगा**=सहारा ‡ **सलतंत**=राज्य

शिष्य कहता है कि अब सतगुरु मुझ पर प्रसन्न हो गए हैं तो मुझे सारे संसार की नाराज़गी की भी कोई परवाह नहीं। अब मैं संसार से कोई आशा नहीं रखता; अब तो मैं सतगुरु का दर छोड़ और कहीं माँगने जाऊँगा ही नहीं। मेरे प्राण भले ही निकल जाएँ, इस जन्म का भले ही अंत हो जाए, पर मैं सहायता के लिए सतगुरु को ही पुकारूँगा, किसी और से कोई आशा नहीं करूँगा। मुझे इतना बड़ा सहारा मिल गया है कि अब चाहे सारी त्रिलोकी, सभी नर-नारी और सब देवता भी मुझसे रूठ जाएँ तो वे मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। सतगुरु की प्रसन्नता प्राप्त कर लेना तो मेरे लिए सारे संसार का राज्य पा लेना है। अब चाहे मेरे सब हितैषी रोते रहें, मुझे क्या फ़र्क़ पड़ता है। अब तो मैं सारे संसार की नाराज़गी की भी परवाह नहीं करता।

जै जै जै गुरु गोबिन्द आरती तुम्हारी।
निरखत पद कंज कमल, कोटि पतित तारी॥ टेक॥*
कोटि भानु उदै जा के, दीपक के बारी†।
छीर है समुद्र‡ जा के, चरन का पखारी॥
लख चौरासी तीनि लोक, जा की फुलवारी।
पुहुप लै कै का चढावों, भँवर कै जुठारी॥
बाल भोग§ कहा दीजै, द्वारे पदारथ चारी¶।
कुबेरजी भंडारी जा के, देबी पनिहारी॥
*सुन्न** सिखर भवन जा के, तुरिया†† असवारी।*

* **कंज**=कमल † **के बारी**=क्या जलाऊँ
‡ **छीर है समुद्र**=दूध से भरा सागर, क्षीर सागर
§ **बाल भोग**=देवमूर्तियों के आगे रखे जानेवाले खाद्य पदार्थ
¶ **पदारथ चारी**=धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ** **सुन्न**=तीसरा आध्यात्मिक मंडल
†† **तुरिया**=चेतना की चौथी अवस्था

आठ पहर बाजा बजै, सबद की झनकारी॥
काम क्रोध लोभ मोह, सतगुरु धै मारी।*
पलटुदास देखि लिया, तन मन धन वारी॥[23]

अपने सतगुरु गोबिन्द साहिब को प्रभु का साक्षात रूप मानते हुए पलटू साहिब बड़ी नम्रता से उनकी जय-जयकार करते हुए कहते हैं कि उनके आंतरिक चरण-कमलों का दर्शन करनेवाले अनगिनत पापी भवसागर से पार हो गए। जी चाहता है कि आपकी आरती उतारूँ, पूजा करूँ। पर सोचता हूँ कि जिनके अंदर करोड़ों सूर्यों का प्रकाश है, उनकी आरती या पूजा के लिए मैं दीप क्या जलाऊँ? जो जब चाहें क्षीर सागर में अपने पैर धो सकते हैं, उनके चरण मैं जल से क्या पखारूँ?

तीनों लोक तथा जीवों की चौरासी लाख योनियाँ जिनकी फुलवारी हैं, उन्हें मैं भँवरों के जूठे किए फूल लेकर क्या चढ़ाऊँ? धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चारों पदार्थ जिनके द्वार पर उपस्थित हैं, धन के देवता कुबेर जिनके ख़ज़ांची हैं और धन की देवी लक्ष्मी जिनकी सेविका है, उन्हें भला मैं भोग कैसे लगाऊँ? सबसे ऊँचे आध्यात्मिक मंडल में जिनका वास है, जो तुरीय अवस्था से ऊपर उठ गए हैं और जिन्हें अंतर में आठों पहर अनाहत का बाजा सुनाई देता है, शब्द की मधुर झंकार सुनाई देती है, उन्हें भला मैं भोग क्या लगाऊँ? हे सतगुरु! काम, क्रोध आदि विकारों पर आपने पूर्ण विजय पा ली है। मैं आपके चरणों पर अपना तन, मन, धन, सब कुछ क़ुरबान करता हूँ। यही मेरी सच्ची आरती होगी।

---

* धै=पकड़कर

9

संतों की अवस्था और उनकी नम्रता

जैसा कि पहले भी उल्लेख किया जा चुका है, पलटू साहिब ने संत गोबिन्द साहिब से नामदान लेकर लगन के साथ नाम का अभ्यास किया और भवसागर को पार कर लिया; वह परमधाम में पहुँचकर परमात्मा से अभेद हो गए थे। आपकी वाणी में इस बात का उल्लेख पाया जाता है। आपके ऐसे कथनों को गर्वभरे वचन समझना, भारी भूल होगी। संत तो नम्रता के पुंज होते हैं। वे अपने लिए पापी, अज्ञानी, निम्न आदि शब्दों का प्रयोग करते हैं परंतु कभी-कभी मौज में आकर अपने वास्तविक स्वरूप तथा आध्यात्मिक प्राप्ति की ओर भी संकेत कर देते हैं। पलटू साहिब की वाणी में भी इस प्रकार के कुछ प्रसंग प्राप्त होते हैं। इस प्रकार के विवरणों से यह पता चलता है कि पूर्ण संत शारीरिक तौर पर पंच तत्त्व की देह में होते हुए भी आध्यात्मिक स्तर पर प्रभु से मिलकर प्रभु का ही रूप हो चुके होते हैं।

ऐसे प्रसंग निर्बल अज्ञानी जीवों को यह प्रेरणा देते हैं कि वे भी प्रभु की भक्ति द्वारा प्रभु में समाकर उसका रूप बन सकते हैं। जैसा कि उपदेश के अध्याय में बताया जा चुका है, पलटू साहिब ने अपनी वाणी में अपने गुरु की भरपूर महिमा की है और अपने ऊपर उनकी दया के लिए उनकी शुक्रगुज़ारी प्रकट की है। आपको इस बात का पूरा विश्वास है कि यदि गुरु से नामदान मिला तो इसका कारण प्रभु की आप पर दया-दृष्टि ही थी।

अन्य संतों की तरह आपने भी अपने महान कार्य का श्रेय कहीं गुरु और कहीं प्रभु को दिया है, जैसा कि नीचे दिए जा रहे उनके कुछ पदों में देखा जा सकता है।

झंडा गड़ा है जाय के हद बेहद के पार॥
हद बेहद के पार तूर जहँ अनहद बाजै।
जगमग जोति जड़ाव सीस पर छत्र बिराजै॥*
मन बुधि चित रहे हार नहीं कोउ वह घर पावै।
सुरत सब्द रहै पार बीच से सब फिरि आवै॥
बेद पुरान की गम्म सकै ना उहवाँ जाई।
तीन लोक के पार तहाँ रोसन रोसनाई॥
पलटू ज्ञान के परे है तकिया† तहाँ हमार।
झंडा गड़ा है जाय के हद बेहद के पार॥[1]

परमधाम में पहुँचे हुए पलटू साहिब कह रहे हैं कि मैं तो उस लोक में पहुँच गया हूँ जो सृष्टि की सीमाओं से ही नहीं, समय और स्थान से भी परे है। वहाँ सदा अनाहत नाद का बाजा बजता रहता है। अब मैं वहाँ के सिंहासन पर बैठा हूँ जिसके ऊपर ज्योति से जगमगाता छत्र सुशोभित है। मनुष्य के मन, बुद्धि तथा चित्त तीनों ने हार मान ली है, क्योंकि इन तीनों में से किसी की भी उस धाम तक पहुँच नहीं है। केवल सुरत-शब्द योग का मार्ग अपनाने वाले ही वहाँ पहुँच सकते हैं, अन्य मार्गों से जानेवाले सब बीच में से ही लौट आते हैं। पलटू साहिब कहते हैं कि उनका वास ज्ञान से परे, वेदों और पुराणों की पहुँच से बाहर और तीनों लोकों से ऊपर है जहाँ परम उज्ज्वल प्रकाश है।

आदि अंत हम हीं रहे सब में मेरो बास॥
सब में मेरो बास और ना दूजा कोई।
ब्रह्मा बिस्नु महेस रूप सब हमरै होई॥
हमहीं उतपति करैं करैं हमहीं संहारा।

* **जड़ाव**=जड़ा हुआ † **तकिया**=भाव विश्राम-स्थान

घट घट में हम रहैं रहैं हम सब से न्यारा॥
पारब्रह्म भगवान अंस हमरै कहवाये।
हमहीं सोहं सब्द जोति ह्वै सुन्न में आये॥
पलटू देह के धरे से वे साहिब हम दास।
आदि अंत हम हीं रहे सब में मेरो बास॥[2]

पलटू साहिब हमें यह बता रहे हैं कि वह परमात्मा से भिन्न नहीं हैं।

पलटू साहिब कह रहे हैं कि जब सृष्टि का आरंभ हुआ तो केवल मैं ही था और इसका अंत हो जाने पर भी केवल मैं ही रहूँगा। सब प्राणियों में मेरा ही निवास है, किसी और का नहीं। ब्रह्मा, विष्णु और शिव के रूप भी मैंने ही धारण किए है; मैं ही सृष्टि को उत्पन्न और नष्ट करता हूँ। मैं हर शरीर के अंदर विद्यमान हूँ, पर फिर भी सबसे अलग रहता हूँ। पारब्रह्म और भगवान कहलाने वाली सब शक्तियाँ मेरी ही अंश हैं। सोहं के मंडल में सुनाई देनेवाला नाद मैं ही हूँ और सुन्न मंडल की ज्योति भी मेरा ही रूप है। सारे संसार का स्वामी वह परमात्मा ही नर देह धारण करके अपना एक सेवक यह पलटू बन गया है। सृष्टि के आदि में केवल मैं ही था और जब इसका अंत हो जाएगा, तब भी केवल मैं ही होऊँगा क्योंकि मैं स्वयं परमात्मा ही तो हूँ।

होनी रही सो ह्वै गई रोइ मरै संसार॥
रोइ मरै संसार काज कुछ उनसे नाहीं।
गये हाथ से निबुकि तेही से सब पछिताहीं॥*
भये काग से हंस काग सब निन्दा करते।
लोहा से भये कनक सोच सब लोहा मरते॥
ज्ञानी अब हम भये रोवैं सब मूरख संगी।

* **निबुकि**=बच निकलना

तिल से भये फुलेल तेल सब मार तिलंगी॥*
पलटू उतरे पार हम भाड़ झोकि† सब भार।
होनी रही सो ह्वै गई रोइ मरै संसार॥[3]

पलटू साहिब कहते हैं कि जो होना था, सो हो गया; अब लोग चाहे रो-रो मरते रहें, मुझे क्या फ़र्क़ पड़ता है? मुझे अब उनसे कोई काम नहीं रहा। मैं तो उनके हाथ से बच निकला हूँ, इसी लिए सब पछता रहे हैं। सतगुरु की संगति से मेरा कायापलट हो गया है। मैं अब सच्चा ज्ञानी बन गया हूँ, लेकिन संसार के मोहजाल में फँसे मेरे सब संगी-साथी, मित्र और संबंधी आदि अब भी मूर्ख ही हैं, इसलिए मुझे बौराया समझकर रोते हैं। यों समझें कि एक कौआ मानसरोवर में नहाकर हंस बन गया है और बाक़ी सब कौए उसकी निंदा कर रहे हैं; या फिर लोहे का एक टुकड़ा पारस का संग पाकर सोना बन गया है और बाक़ी सब टुकड़े इस बात पर दु:खी हो रहे हैं। ऐसा मान लें कि तिलों का तेल तो फूलों की संगति पाकर फुलेल बन गया है और बाक़ी सब तेल ही रह गए हैं। मैंने तो सतगुरु के मार्गदर्शन में सच्ची भक्ति करके इच्छाओं, विकारों तथा कर्मों का सब भार सिर पर से उतार फेंका है और जीते-जी भवसागर के पार उतर गया हूँ। मेरे भाग्य में जो लिखा था, वह पूरा हो गया है। अब संसार को रोना ही है तो रोता रहे, मैं क्या कर सकता हूँ? मैं तो अब बेपरवाह हो गया हूँ।

भाव यह है कि प्रभु के सच्चे भक्त सतगुरु की संगति में संसाररूपी भवसागर पार कर जाते हैं। जबकि संसार के जंजाल में फँसे उनके सगे-संबंधी और मित्र आदि उन्हें संसार की ओर से उदासीन देखकर व्यर्थ ही दु:खी होते रहते हैं।

---

* **फुलेल**=ख़ुशबूदार तेल † **भाड़ झोकि**=फेंककर

जोग जुगत ना ज्ञान कछु गुरु दासन को दास॥
गुरु दासन को दास सन्तन ने कीन्ही दाया।
सहज बात कछु गहिनि† छुड़ाइनि हरि की माया॥*
ताकिनि‡ तनिक कटाच्छ§ भक्ति भूतल उर जागी।
स्वस्ता¶ मन में आई जगत की भ्रमना भागी॥
भक्ति अभय पद दीन्ह सनातन मारग वा की।
*अबिरल** ओकर नाम लगै ना कबहीं टाँकी††॥*
पलटू ज्ञान न ध्यान तप महा पुरुष कै आस।
जोग जुगत ना ज्ञान कछु गुरु दासन को दास॥[4]

पलटू साहिब कहते हैं कि मुझे योगाभ्यास की किसी विधि का रत्ती भर भी ज्ञान नहीं था। केवल इतनी बात थी कि सतगुरु के भक्तों के प्रति मेरे मन में बड़ा आदरभाव था, मैं ख़ुद को उनका दास मानता था। उनकी संगति से ही मुझे सतगुरु की संगति का सौभाग्य प्राप्त हुआ और मैं उनका कृपा-पात्र बना। सतगुरु ने जब मुझे चेतना की सबसे ऊँची अवस्था—सहज, के बारे में बताया तो उनकी बातें कुछ-कुछ मेरी समझ में आ गईं जिससे मैं प्रभु की माया यानी संसार की ओर से उदासीन हो गया। जब सतगुरु ने मुझ पर तनिक-सी दयादृष्टि डाली तो मेरी हृदयरूपी धरती में भक्ति जाग उठी जिससे मेरे मन में ठहराव आ गया और संसार में मेरा भटकना बंद हो गया। भक्ति ने मुझे उस परमधाम में पहुँचा दिया जो सर्वथा भयमुक्त है। सतगुरु का बताया हुआ वहाँ का मार्ग तो नित्य है। यह अनादि काल से चला आ रहा है और इस पर चलने का अर्थ है निरंतर प्रभु के नाम की भक्ति में लगे रहना यानी नाम भक्ति में कभी कोई बाधा न पड़ने देना। सतगुरु का दयापात्र बन जाने के बाद मैं किसी ज्ञान, ध्यान या तपस्या के चक्कर में कभी नहीं पड़ा। मैंने तो केवल सतगुरु से

---

* **सहज**=चेतना की उच्चतम अवस्था † **गहिनि**=ग्रहण कर ली
‡ **ताकिनि**=देखा § **कटाच्छ**=दया दृष्टि ¶ **स्वस्ता**=स्थिरता
** **अबिरल**=निरंतर †† **टाँकी**=छेनी

ही अपने कल्याण की आशा रखी। अंत में पलटू साहिब फिर कहते हैं कि मुझे योग-साधना की किसी विधि का तनिक भी ज्ञान नहीं था। अत्यंत नम्रता तथा आदरभाव के साथ सतगुरु के भक्तों की संगति तथा सेवा करने पर मुझे सतगुरु की दया-मेहर प्राप्त हुई और मैं परमधाम में पहुँच गया।

सतगुरु के परताप से पकरा पाँचो चोर॥
पकरा पाँचो चोर नगर में अदल चलाया।*
तिर्गुन दिया निकारि आनि कै भक्ति बसाया॥
लोभ मोह को पकरि ताहि की गरदन मारी।
तृस्ना औ हंकार पेट दियो इनको फारी॥
दुर्मति दई निकारि सुमति का चाबुक दीन्हा।
चढ़े सिपाही संत अमल† कायागढ़ कीन्हा॥
पलटू संजम मै किया परा मुलुक में सोर।
सतगुरु के परताप से पकरा पाँचो चोर॥[5]

आप कहते हैं कि सतगुरु के प्रताप से, उनसे मिले नाम की शक्ति से मैंने पाँचों विकारों पर विजय पा ली है। जैसे किसी नगर में चोरों के पकड़े जाने पर वहाँ के लोगों के जीवन में अनुशासन आ जाता है, वैसे ही मनोविकारों के मेरे वश में हो जाने पर मेरे जीवन में अनुशासन आ गया है। मैंने मन से त्रिगुणात्मक संसार का मोह निकालकर वहाँ प्रभु की भक्ति को ला बसाया है। लोभ, मोह, तृष्णा और अहंकार इन शत्रुओं का मैंने पूरी तरह नाश कर दिया है, दुर्बुद्धि को मैंने सुबुद्धि के चाबुक से मार भगाया है। इस संत-सिपाही ने अपने शरीररूपी क़िले पर धावा बोलकर उसे जीत लिया है, अब यह उस दुर्ग का बंदी नहीं रहा। मैंने पूरा संयम रखकर अपनी साधना पूरी की है और अब मेरी धूम मची हुई है, पर मेरे

* **अदल**=न्याय भाव अनुशासन † **अमल**=अधिकार

संयम का यानी पाँचों विकारों पर मेरी विजय का श्रेय वास्तव में सतगुरु के प्रताप को ही है।

दूसर पलटू इक रहा भक्ति दई तेहि जान॥
भक्ति दई तेहि जान नाम पर पकर्यो मोकहँ।
गिरा परा धन पाय छिपायौं मैं ले ओकहँ॥
लिखा रहा कुछ आन कर्म में दीन्हा आनै।*
जानौं महीं अकेल कोऊ दूसर नहिं जानै॥
पाछे भा फिर चेत† देय पर नाहीं लीन्हा।
आखिर बड़े की चूक जोई निकसा सोइ कीन्हा॥
पलटू मैं पापी बड़ा भूल गया भगवान।
दूसर पलटू इक रहा भक्ति दई तेहि जान॥[6]

अपनी संतसुलभ नम्रता को विनोद का पुट देते हुए पलटू साहिब अपने ऊपर प्रभु की अपार दया का वर्णन करते हैं कि मेरे अलावा एक और पलटू भी था जो सचमुच धर्मात्मा था। मुझे ग़लती से वही समझ लिया गया और इसी भ्रम में प्रभु ने उसके बजाय मुझे भक्ति की सौग़ात दे दी! इस तरह मेरे नाम के कारण ही प्रभु ने मुझे पकड़ लिया। सो मुझे तो यह नामधन एक तरह से कहीं गिरा हुआ मिला और मैंने उसे उठाकर छिपा लिया। मेरे भाग्य में लिखा तो कुछ और था, पर प्रभु ने मुझे कुछ और ही दे दिया। यह बात अकेला मैं ही जानता हूँ, कोई और नहीं जानता। बाद में प्रभु को अपनी भूल का पता तो चल गया, पर उसने मुझे जो दे दिया था, वह वापस नहीं लिया। आख़िर बड़ों की भूल ऐसी ही होती है कि भूलकर भी जो कर दिया सो कर दिया। पलटू साहिब कहते हैं कि मैं तो

* **आनै**=अन्य ही † **चेत**=ज्ञान

बहुत बड़ा पापी हूँ; प्रभु से भूल हो गई जो उसने मुझे वह दूसरा पलटू समझ लिया और इसी धोखे में मुझे अपनी भक्ति दे दी।

राम नाम जेहि मुखन तें, पलटू होय प्रकास।
तिन के पद बंदन करौं, वो साहिब मैं दास॥[7]

आप कहते हैं कि जिनके मुख से जिज्ञासुओं को प्रभु के सच्चे नाम के ज्ञान का प्रकाश मिला है, उनके चरणों की मैं पूजा करता हूँ। पलटू साहिब सतगुरु के प्रति गहरी भक्ति-भावना प्रकट करते हुए कहते हैं कि वही मेरे मालिक हैं और मैं उनका गुलाम हूँ।

10

अहंकार का त्याग तथा शरण

मनुष्य के मायाजाल में बँधे होने का कारण मन ही है और इस मन के पाँच विकार काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार हैं। अहंकार इनमें सबसे अधिक बलवान है। यह शेष चारों का पोषक है और यदि मनुष्य उनमें से किसी एक पर विजय पा ले, उससे भी इसका पोषण होता है। इस पर विजय पाना परमार्थी के लिए सबसे अधिक कठिन होता है। इसी लिए स्वयं नम्रता के पुंज पलटू साहिब तथा अन्य सब संतों ने इसे जीतने के बजाय नम्रता को अपनाने पर इतना बल दिया है।

जब मनुष्य का अहं (मैं का भाव) या ममत्व (मेरा-मेरी का भाव) प्रबल हो जाता है तो अहंकार का रूप धारण कर लेता है तथा बुराई को जन्म देता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि अहंकार मूल रूप में अहंभाव या ममत्व ही होता है। यही कारण है कि संतों ने अपनी वाणी में कहीं अहंकार को त्यागने का उपदेश दिया है, तो कहीं अहंभाव और मेरा-मेरी के भाव को त्यागने का। पलटू साहिब की पंक्ति *हमता ममता को दूरि करै*[1], का आशय अहंकार को जड़ से उखाड़ फेंकने से ही है।

पलटू साहिब ने अपनी वाणी में सतगुरु की और प्रभु की शरण लेने की बात भी की है। सतगुरु की शरण लेना प्रभु की शरण लेना ही है क्योंकि सतगुरु प्रभु का ही प्रकट रूप होते हैं। प्रभु तो निराकार और अदृश्य है। उसकी शरण कोई कैसे ले सकता है? सतगुरु के माध्यम से ही जीव उसकी शरण लेता है और सतगुरु की शरण लेने का अर्थ है उनसे नामदान लेकर उनकी बताई रहनी अपनाना और पूरी लगन के साथ नाम

का अभ्यास करना। अपनी मैं-मेरी की भावना को मिटाकर अपनी इच्छा को उनकी इच्छा में विलीन कर देना यानी उनकी रज़ा या भाणे में रहना और बिना शर्त आत्म-समर्पण कर देना।

बढ़ते बढ़ते बढ़ि गये जैसे बढ़ी खजूर॥
जैसे बढ़ी खजूर पथिक छाया नहिं पावै।
ज्यों ज्यों कै जो फरै ताहि कैसे कोउ खावै॥*
पात में काँटा रहै छुवत कै लोहू आवै।
पेड़ सोऊ बेकाम कुवा को धरन† बनावै॥
सम्पति में बढ़ि जाय दया बिन भला भिखारी।
जातिहु में बढ़ि जाय भक्ति बिन भला चमारी॥
पलटू सोभा दोऊ की दया भक्ति से पूर।
बढ़ते बढ़ते बढ़ि गये जैसे बढ़ी खजूर॥[2]

पलटू साहिब इस बात की ओर हमारा ध्यान दिलाते हैं कि खजूर का वृक्ष बढ़ते-बढ़ते बहुत ऊँचा हो जाता है, पर पथिक को उससे छाया नहीं मिलती। काफ़ी समय के बाद जब उस पर फल लग भी जाता है तो उसे आसानी से खा कौन सकता है? पत्ते काँटों की तरह चुभते हैं, उन्हें छूते ही ख़ून निकल आता है। इसलिए खजूर का वृक्ष और किसी काम का नहीं, उससे केवल कुएँ के ऊपर रखा जानेवाला शहतीर ही बन सकता है। इसी तरह जो इनसान उन्नति करते-करते बहुत धनवान तो हो जाता है, पर किसी पर दया नहीं करता, उससे तो भिखारी भला। जो व्यक्ति धन या विद्या के कारण या और किसी कारण से बड़ी जाति का माना जाने लगता है पर भक्ति से ख़ाली है, उससे अच्छा तो निम्न जाति का मनुष्य है जो दयावान है और जिसका हृदय भक्ति-भावना से भरा है, उन दोनों की बड़ी शोभा है। पर जिसमें न दया है न भक्ति, वह तो

* फरै=फले † धरन=शहतीर

धन या जाति की दृष्टि से बड़ा होते हुए भी खजूर के लंबे पेड़ की तरह किसी काम का नहीं।

बड़ा भया तौ क्या भया, जो दिल का नाहिं उदार है जी।
बड़ा सब से समुद्र भया, पानी पड़ा वो खार है जी॥
समुद्र सेती इक कूप भला, पिये सकल संसार है जी।
पलटू सबसे छोट भया, सोई सब का सिरदार है जी॥[3]

पलटू साहिब कहते हैं कि जो दिल का छोटा है, वह बड़ा आदमी भी बन जाए तो कोई फ़ायदा नहीं। नदियों का जल आकर समुद्र में गिरता रहता है जिससे समुद्र बहुत बड़ा हो गया है। पर उसमें जो भी पानी गिरता है, वह खारा हो जाता है, उसे कोई पी नहीं सकता। इसलिए समुद्र से तो कुआँ अच्छा जिसका पानी सारी दुनिया पीती है। असल में वही सबसे बड़ा है, जो अपने को सबसे छोटा समझता है, जिसने अहंकार त्याग दिया है।

भाव यह है कि असली बड़प्पन नम्रता में ही है।

हमता ममता को दूरि करै, यही तो मूल जंजाल है जी।
चाह अचाह को छोड़ि देवै, यही सहज सुभाव की चाल है जी॥
मोर औ तोर बिकार छूटै, सब से मिलै हर हाल है जी।
पलटू जिन बासना बीज भूना, वोही साहिब का लाल है जी॥[4]

पलटू साहिब जिज्ञासु को समझाते हैं कि मैं-मेरी की भावना को दूर कर, खत्म कर, क्योंकि यही तो तेरी तमाम उलझनों और परेशानियों की जड़ है; यही तो सब इच्छाओं को जन्म देती है। मनुष्य को न किसी चीज़ की इच्छा होनी चाहिए और न कोई चीज़ उसके लिए अनचाही यानी अप्रिय होनी चाहिए। चेतना की सबसे ऊँची अवस्था यानी सहज अवस्था को प्राप्त

मनुष्य इच्छा-अनिच्छा से मुक्त होता है। यह चीज़ मेरी है, वह चीज़ तेरी है जब यह विकार उसके मन में से निकल जाता है और वह अहंकार से मुक्त हो जाता है तब वह हर दशा में हर किसी से स्वाभाविक सद्भावना के साथ मिलने को तैयार रहता है। बीज को यदि भून दिया जाए तो वह उगता नहीं। इसी तरह जीव यदि अपनी इच्छाओं को जड़ से मिटा दे तो फिर उसका जन्म नहीं होता। ऐसा जीव ही प्रभु को प्यारा होता है।

मेरी मेरी तू क्या करै, मेरी मँहै अकाज है जी।
साहिब सब काम सँभारि लेवै, मेरी से आवै बाज है जी॥
जिसका तू दास कहावता है, तिसको इस बात की लाज है जी।
पलटू तू मेरी छोड़ि देवै, तीनि लोक तेरा राज है जी॥[5]

पलटू साहिब जिज्ञासु को समझाते हैं कि तुम मेरी-मेरी क्या करते हो? चीज़ों को मेरी कहने से ही तो काम बिगड़ता है। अगर तुम संसार की चीज़ों को अपनी कहना छोड़ दो और मन में अच्छी तरह बिठा लो कि ये सब तुम्हारी नहीं बल्कि मालिक की हैं तो मालिक तुम्हारे सभी काम सँभाल लेगा, तुम्हारा कोई भी काम बिगड़ेगा नहीं। तुम जिसका दास कहलाते हो, उसे तुम्हारे उसका दास होने की लाज रखनी है। अगर तुम अहंकार को त्यागकर सही माने में उसका दास बन जाओ, उसी को सबका स्वामी मान लो और किसी भी वस्तु को अपनी न समझो तो तुम त्रिलोकी के स्वामी बन जाओगे यानी तुम्हारी हर आवश्यकता पूरी होगी, कहीं भी तुम्हें किसी चीज़ की कमी महसूस नहीं होगी।

करम धरम सब छाड़ि कै पड़े सरन में आय॥
पड़े सरन में आय तजी बल बुधि चतुराई।

जप तप नेम अचार नहीं जानौं कछु भाई॥
पूजा ज्ञान न ध्यान तिलक नहिं देवै जानौं।
जोग जुगत कछु नहीं नहीं तीरथ ब्रत मानौं॥
एक भरोसा पाय दिया सिर भार लराई।
पंछी को पछ गया रहा इक नाम सहाई॥*
पलटू मैं जियतै मुवा नाम भरोसा पाय।
करम धरम सब छाड़ि कै पड़े सरन में आय॥[6]

पलटू साहिब कहते हैं कि कर्मकांड और धर्मग्रंथों में बताए गए अन्य सब कर्म-धर्म छोड़कर मैंने संत-सतगुरु की शरण ले ली, उनसे नाम का भेद प्राप्त करके उनके उपदेश के अनुसार जीवन बिताने लग गया। अपने बल, बुद्धि तथा चतुराई को मैंने उठाकर ताक़ पर रख दिया। मंत्रों तथा स्तोत्रों† का जाप, तपस्या, धर्म और आचार-व्यवहार के नियम, देव-पूजा, शास्त्रों का ज्ञान, मूर्ति आदि का ध्यान, तिलक लगाना, योग-साधना की भिन्न-भिन्न रीतियाँ, तीर्थयात्रा और व्रत मुझ परमार्थी के लिए इन सबका अब कोई महत्त्व नहीं रह गया, इनमें से मेरा विश्वास उठ गया। मैंने केवल नाम पर भरोसा रखा और उसका अभ्यास करके अपने सिर पर से इच्छाओं, विकारों तथा कर्मों का सारा भार उतार फेंका। आत्मारूपी पक्षी के पास अब उड़ने के लिए और कोई पंख नहीं रह गए। अब तो उसे केवल नाम का सहारा है, एक वही उसका सहायक है। कर्मकांड तथा अन्य सब प्रचलित धर्म कार्य छोड़कर मैंने सतगुरु की शरण ले ली। मैंने नाम पर पूरा भरोसा रखते हुए जीते-जी मरने का अभ्यास किया। इससे मेरी आत्मा पर पड़ा तमाम बोझ उतर गया, मैं जीवनमुक्त हो गया।

---

* **पछ**=पंख † **स्तोत्र**=किसी देवी-देवता की स्तुति का मंत्र।

पलटू सोवै मगन में साहिब चौकीदार॥
साहिब चौकीदार मगन होइ सोवन लागे।
दूनों पाँव पसार देखि कै दुस्मन भागे॥
जाकै सिर पर राम ताहि को बार न बाँकै।
गाफिल में मैं रहौं आपनी आपुइ ताकै॥*
हम को नाहीं सोच सोच सब उन को भारी।
छिन भरि परै न भोर† लेत है खबर हमारी॥
लाज तजा जिन राम पर डारि दिहा सिर भार।
पलटू सोवै मगन में साहिब चौकीदार॥[7]

एक बार फिर अपना ही उदाहरण प्रस्तुत करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि प्रभु की शरण लेकर मैं दोनों पाँव पसारे मस्त हुआ सोता हूँ। मेरी चौकीदारी, मेरी देख-रेख मालिक ख़ुद करता है। मुझे देखते ही दुश्मन भाग जाते हैं। जिसका रक्षक स्वयं प्रभु हो उसका तो कोई बाल भी बाँका नहीं कर सकता, उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। मैं अब अपने बारे में बेफ़िक्र रहता हूँ। प्रभु अपने काम यानी मेरी सँभाल का ख़ुद ही ध्यान रखता है। मेरी सब चिंताएँ अब उसकी हैं; उन सबका भारी बोझ अब उसी के कंधों पर है। वह पल भर के लिए भी मुझे भूलता नहीं, मेरी पूरी ख़बर रखता है। जिन्होंने लोकलाज छोड़कर अपने सिर का सारा बोझ मालिक पर डाल दिया है, वे बेफ़िक्र होकर सोते हैं। उनकी चौकीदारी मालिक ख़ुद करता है।

भाव यह है कि जब मनुष्य प्रभु की शरण ले लेता है, अपने आप को पूरी तरह उसके हवाले कर देता है और उसकी रज़ा में रहना शुरू कर देता है तो प्रभु स्वयं ही उसका रक्षक बनकर सदा उसकी सँभाल करता है।

---

* गाफिल=लापरवाह † भोर=भूल

11

सत्संग

संतों की भाषा में सत्संग अथवा सत्संगति का अर्थ संतों की संगति है। संतों की संगति की महिमा का बखान करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि यह परम सुख और शांति का स्रोत है। इससे सच्चा ज्ञान प्राप्त होता है, दुर्मति दूर होती है, लाभ-हानि, मान-अपमान आदि द्वंद्वों से उत्पन्न होनेवाले दुःख से छुटकारा मिलता है। सत्संग से बड़े से बड़ा पापी भी संत बन जाता है। आत्मा के भव-बंधन का कारण उसका जन्म-जन्म का साथी मन होता है, जिसने उसे अपने वश में किया होता है। संतों की संगति करने से वह मन की दासता से छुटकारा पा लेती है। परमात्मा को वही आत्मा प्यारी होती है जो किसी पूर्ण संत की संगति करके उससे नामदान लेकर प्रभु-प्रेम के रंग में रँग जाती है।

पलटू साहिब हमें जल्दी से बीतते जा रहे अपने बहुमूल्य मनुष्य जन्म के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए शीघ्र ही किसी संत की संगति में नाम भक्ति आरंभ करने और नेकी का जीवन बिताने की प्रेरणा देते हैं। आप हमें समझाते हैं कि पाँच मनोविकारों के प्रबल प्रहारों से वही जीव बच सकता है जिसने किसी संत-सतगुरु की संगति की हो और उससे नामदान लेकर हर समय सावधान रहते हुए उसका अभ्यास किया हो।

संतन संग अनन्द परम सुख॥ टेक॥
जेकरी संगति ज्ञान होत है, मिटत सकल दुख द्वंद।
उनके निकट काल नहिं आवै, टूटि जात जम फंद॥
फूल संग से तेल बखानो, सब कोई करत पसंद।

पारस छुए लोह भा कंचन, दुरमति सकल हरंद॥
हेलुवाई ज्यों अवटि जारि कै, करत खाँड़ से कंद।
पलटूदास यह बिनती मोरी, अजहुँ चेत मतिमंद॥[1]

हमें संतों की संगति करने की प्रेरणा देते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि इससे जीव को आनंद मिलता है, परमसुख प्राप्त होता है। इससे उसे सच्चे ज्ञान की प्राप्ति होती है और वह मान-अपमान, हानि-लाभ आदि सब द्वंद्वों से ऊपर उठ जाता हैं। किसी संत की संगति करने से धर्मराज उसके पास नहीं फटकता। धर्मराज का फंदा टूट जाता है, जीव जन्म-मरण के चक्कर से छुटकारा पा लेता है। तेल की महिमा फूलों की संगति से इत्र बन जाने पर होती है, हर कोई उसे पसंद करता है और लोहा पारस के छूने से निर्मल सोना बन जाता है। इसी तरह संत की संगति मनुष्य की दुर्मति को पूरी तरह से दूर कर देती है, वह निर्मल बुद्धि वाला हो जाता है। जिस प्रकार हलवाई शक्कर को आँच पर रखकर देर तक उबालकर उसे साफ़ करके सफ़ेद चीनी की शक्ल दे देता है, उसी प्रकार संत-सतगुरु अपनी संगति में आए जीव से नाम की भक्ति करवाकर उसे निर्मल कर देते हैं। अरे मूर्ख! मेरी बिनती सुन, आज भी होश में आ जा, किसी संत की संगति कर ले।

बिना सतसंग ना कथा हरि नाम की,
बिना हरि नाम ना मोह भागै।
मोह भागे बिना मुक्ति ना मिलैगी,
मुक्ति बिनु नाहिं अनुराग लागै॥
बिना अनुराग से भक्ति ना मिलैगी,
भक्ति बिनु प्रेम उर नाहिं जागै।
प्रेम बिनु नाम ना नाम बिनु संत ना,
पलटू सतसंग बरदान माँगै॥[2]

पलटू साहिब हमें समझाते हैं कि गुरु सत्संग में हरि की पहचान देता है, उससे मिलाप की युक्ति बताता है। यह युक्ति उसका बख़्शा हुआ नाम है। नाम की कमाई के बिना मनुष्य का मोह कम नहीं होता। मोह के कम हुए बिना उसको इन नश्वर पदार्थों की दासता से छुटकारा नहीं मिलता और इनसे छुटकारा पाए बिना उसका प्रभु-प्राप्ति की ओर झुकाव नहीं होता। यदि प्रभु-प्राप्ति की ओर झुकाव न हो, प्रभु को पाने की चाह न हो तो भक्ति-भावना उत्पन्न नहीं होती। भक्ति किए बिना हृदय में प्रभु के लिए प्रेम नहीं जागता। हृदय में प्रभु-प्रेम के जाग्रत हुए बिना आत्मा नाम में नहीं समाती और आत्मा के नाम में समाए बिना मनुष्य संत नहीं बनता, उसे प्रभु की प्राप्ति नहीं होती। इसलिए यह पलटू प्रभु से जीवों के लिए सत्संग का ही वरदान माँगता है।

पारस के परसंग से लोहा महँग बिकान॥
लोहा महँग बिकान छुए से कीमत निकरी।
चंदन के परसंग चंदन भई बन की लकरी॥
जैसे तिल का तेल फूल सँग महँग बिकाई।
सतसंगति में पड़ा संत भा सदन कसाई॥
गंग में है सुभगंग मिली जो नारा सोती†।*
सीप बीच जो पड़ै बूँद सो होवै मोती॥
पलटू हरि के नाम से गनिका‡ चढ़ी बिमान।
पारस के परसंग से लोहा महँग बिकान॥[3]

पलटू साहिब ने अनेक दृष्टांत तथा उदाहरण देकर समझाया है कि संतों की संगति करके बड़े से बड़ा पापी भी संत बन सकता है।

---

* **नारा**=नाला † **सोती**=धारा ‡ **गनिका**=वेश्या

आप कहते हैं कि पारस की उत्तम संगति से लोहा सोना बन जाता है और महँगा बिकता है। पारस का स्पर्श पा लेने से लोहे का मोल बढ़ जाता है। वन का एक साधारण-सा वृक्ष अगर चंदन के निकट उगा हो तो उसमें चंदन की सुगंध आ जाती है। तिलों का तेल फूलों का संग पाकर इत्र बनकर बड़ा महँगा बिकता है। सदना कसाई संत की संगति मिलने से ख़ुद संत बन गया। नाले की धारा जब गंगा में जा मिलती है तो पवित्र गंगा ही बन जाती है। स्वाति नक्षत्र के दिनों में सीप के मुँह में गिरी वर्षा की बूँद मोती बन जाती है। किसी साधु की कृपा से प्रभु का नाम जपकर वेश्या भी प्रभु के धाम में पहुँच गई थी, क्योंकि पारस का संग मिलने से लोहा सोना बन जाता जाता है और उसकी क़ीमत बहुत बढ़ जाती है।

लड़िका चूल्हे में लुका ढूँढ़त फिरै पहार॥
ढूँढ़त फिरै पहार नहीं घट की सुधि जानै।
जप तप तीरथ बरत जाय के तिल तिल छानै॥
गई आप को भूलि और की बात न मानै।
चूल्है लड़िका रहै चतुरई अपनी ठानै।
भरमी फिरै भुलान जाइ कै देस देसान्तर।
लड़िका से नहिं भेट मिलत है पानी पाथर॥
पलटू सतसंगति करै भूल में वाही सार।
लड़िका चूल्हे में लुका ढूँढ़त फिरै पहार॥[4]

पलटू साहिब हमें समझाते हैं कि हमारा अपने शरीर में ही छिपे हुए प्रभु को वहाँ न ढूँढ़कर बाहर इधर-उधर घूमते फिरना ऐसे ही है जैसे किसी माता का घर में ही चूल्हे की ओट में छिपे बैठे बेटे को पहाड़ पर जाकर ढूँढ़ना। घर के बाहर वह माता बेटे को चाहे कितने ही स्थानों पर ढूँढ़ ले या उसे पाने के कितने ही उपाय कर ले, पर वह उसे मिलेगा नहीं। प्रभु को पाने के लिए जिज्ञासु भी क्या-क्या नहीं करता? वह पहाड़ों की

गुफाओं में जाता है, तीर्थयात्रा करता है, जगह-जगह भटकता है। मंत्रों का जाप करता है, तपस्या करता है, व्रत रखता है। वह अपना होश खो बैठता है परंतु दूसरों की बात मानता नहीं। प्रभु उसके अपने अंदर होता है और वह उसे बाहर ढूँढ़ने में अपनी चतुराई दिखाने पर तुला होता है। भ्रम में पड़ा वह प्रभु को देश-विदेश ढूँढ़ता है तो घूमते-घूमते उसे नदियों का जल और पत्थर की मूर्तियाँ तो अवश्य मिल जाती हैं पर उनकी पूजा करने से उस प्रभु की प्राप्ति नहीं होती। उसे चाहिए कि किसी संत की संगति करे, उसके मार्गदर्शन में अंतर्मुखी भक्ति करे क्योंकि भूल को सुधारने का यही एक कारगर तरीक़ा है। नहीं तो वही बात होगी कि लड़का घर में चूल्हे की ओट में छिपा है और माँ पहाड़ पर जाकर वहाँ उसकी तलाश करने में लगी है।

बिन खाये चित चैन नहिं खाये आलस होय॥
खाये आलस होय कहो कैसी बिधि कीजै।
दोऊ बिधि से बिपति दोस का को हम दीजै॥
मन बैरी है बड़ा कहे में अपने नाहीं।
पुन्न में करता पाप पाप में पुन्न कराही॥
सुभ आसुभ के बीच पड़ा है जीव बिचारा।
दोऊ में वह मिला बात सब वही बिगारा॥
पलटू सतसंगत दोऊ छुटै करै जो कोय।
बिन खाये चित चैन नहिं खाये आलस होय॥[5]

पलटू साहिब ने इसमें यह बताया है कि आत्मा के कर्म-बंधन का कारण मन है, जिसे वश में करना बहुत कठिन है। केवल संतों की संगति से ही मनुष्य इसे वश में करके पाप-पुण्य के बंधन से छुटकारा पा सकता है।

पलटू साहिब कहते हैं कि सांसारिक पदार्थों का भोग किए बिना मन को चैन नहीं मिलता, अगर हम उन्हें भोगने में लगे रहें तो प्रभु की भक्ति

करने में आलस्य होता है। दोनों तरह मुसीबत है। फिर किया क्या जाए? किसी दूसरे को दोष नहीं दिया जा सकता, क्योंकि दोषी तो अपना मन ही होता है। यह जीवात्मा का बहुत बड़ा शत्रु है। उसका कहा यह मानता ही नहीं, अपनी मरज़ी करता है। जिसे मन पुण्य समझता है वह पाप भी हो सकता है और जिसे पाप समझता है वह पुण्य भी हो सकता है। इसके वश में हुई बेचारी जीवात्मा पुण्य और पाप के चक्कर में फँसी रहती है। दोनों तरह के कर्मों में मन जीवात्मा का साथी होता है और वही सारी बात बिगाड़ता है क्योंकि उसके वश में रहकर किए गए दोनों तरह के कर्म बंधन का कारण बनते हैं। जीवात्मा को दोनों का फल भोगना पड़ता है, बार-बार जन्म लेना पड़ता है। लेकिन अगर मनुष्य किसी संत-सतगुरु की संगति करे तो दोनों तरह के कर्म छूट जाते हैं क्योंकि तब जीवात्मा सतगुरु के बताए रूहानी अभ्यास के द्वारा मन की दासता से छुटकारा पाकर सतगुरु के आदेशानुसार कर्म करने लग जाती है। इस तरह किए कर्मों का फल उसे नहीं भोगना पड़ता। जो जीव सतगुरु की संगति में जाता है, वह पुण्य और पाप के फल तथा आवागमन के बंधन से छूट जाता है। यदि मन को भोग प्राप्त न हों तो वह बेचैन रहता है, यदि मिल जाएँ तो भोग में डूबा भक्ति में आलस करता है। संत की संगति मिलने पर बेचैनी और आलस्य दोनों छूट जाते हैं।

पिय से मान न कीजै रजनी, सजनीं हठ तजि दीजै॥
जो तू पिय को चाहै प्यारी, सतसंगति भजि लीजै॥
पलटुदास तन मन धन दै कै, प्रेम पियाला पीजै॥[6]

आत्मा को संबोधित करते हुए पलटू साहिब समझा रहे हैं कि मनुष्य जन्म पाकर तू प्रभु से दूर न रह। यही उससे मिलने का समय है इसलिए हठ न कर। अगर तू अपने प्रियतम प्रभु को पाना चाहती है तो किसी संत-सतगुरु की संगति में रहकर भक्ति कर। अपना तन, मन, धन, सब कुछ प्रियतम

को अर्पित कर दे। फिर तू जी भर उसके प्रेम का प्याला पी सकेगी, उसके प्रेम का सुख पा सकेगी।

रँगि ले रंग करारी है, फिर छुटै न धोये॥ टेक॥
ज्ञान को माट ताहि बिच बोरो, मन बुधि चित रँग डारी है॥*
तन मन धन सब देइ रँगाई, रंग मजीठी† भारी है॥
रंग बहुत यह सोखि लेइगी, बहुत दिनन की सारी‡ है॥
सतसंगति में बैठि रँगावै, सोइ पतिबरता नारी है॥
पलटूदास पहिरि के निकरै, अपने पिय की प्यारी है॥[7]

पलटू साहिब कहते हैं कि प्रभु के प्रेम का रंग बड़ा गहरा और पक्का होता है; चढ़ जाए तो चाहे कितनी कोशिश कर लो, उतरता नहीं। तुम्हारे अंतर में तो ज्ञान का मटका है। सतगुरु से विधि जानकर अपनी आत्मा को उस मटके में डुबो दो यानी लगन के साथ शब्द का अभ्यास करो और सच्चा आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करो। इससे तुम्हारे मन, बुद्धि और चित्त पर प्रभु-प्रेम का रंग अच्छी तरह चढ़ जाएगा। यह बड़ा पक्का, गहरा लाल रंग तुम्हारा तन, मन, धन, सब कुछ रँग देगा। जब तुम्हारी आत्मा बहुत बड़ी मात्रा में इस रंग को सोख लेगी यह प्रभु-प्रेम में दीवानी हो जाएगी। बहुत समय पहले इसके पति प्रभु ने इसे अपने से अलग कर दिया था। वही आत्मा पतिव्रता होती है जो किसी संत की संगति करती है, उसके सत्संग सुनती है। उससे नामदान लेकर ख़ूब नाम का अभ्यास करके अपने आप को पति के प्रेम के रंग में रँग लेती है। आत्मा जब प्रेम का बाना पहन लेती है तब पति भी उससे प्यार करने लगता है और वह फिर पति के घर में जा बसती है।

---

* **माट**=मटका † **मजीठी**=गहरा लाल ‡ **सारी**=दूर की हुई

संगति ऐसी कीजिये, जहवाँ उपजै ज्ञान।
पलटू तहाँ न बैठिये, घर की होय जियान ॥*[8]

हमें संतों की संगति करने और मनमुखों से दूर रहने की सलाह देते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि ऐसी संगति कीजिए जिससे आध्यात्मिक ज्ञान की प्राप्ति हो। संतों की संगति में रहिए और नामदान लेकर लगन के साथ नाम का अभ्यास कीजिए, जिससे आपको आंतरिक अनुभव प्राप्त हों। जिन लोगों की संगति करने से आपकी आध्यात्मिक हानि होने की संभावना हो, उनके साथ न बैठिए, उनसे दूर रहिए।

* जियान=हानि

12
जीते-जी मरना

पलटू साहिब की वाणी में जीते-जी मरने और मरकर पुन: जी उठने या जाग उठने का उल्लेख पाया जाता है। परमार्थी जब शरीर के नौ द्वारों के रास्ते बाहर संसार में फैले हुए अपने मन को सुमिरन के द्वारा समेटकर भौंहों के मध्य में एकाग्र करता है तो मन के साथ बँधे होने के कारण उसकी आत्मा भी धीरे-धीरे सारे शरीर में से सिमटकर वहाँ इकट्ठी हो जाती है। उसका शरीर सुन्न हो जाता है लेकिन चेतना बनी रहती है। इसी को संतों ने जीते-जी मरना और शरीर को ख़ाली करना कहा है। ऐसी अवस्था में अभ्यासी जीवित होता है और उसकी आत्मा का संबंध शरीर से जुड़ा होता है। यह अलग बात है कि उस समय उसका शरीर सुन्न होता है। जब आत्मा इस अवस्था की समाप्ति पर तीसरे तिल अर्थात् दसवें दरवाज़े को छोड़ शरीर में लौट आती है तो शरीर पुन: चेतन हो जाता है, वह फिर से सब कुछ महसूस करने लगता है। संतों की भाषा में इसे फिर जी उठना कहते हैं।

पलटू साहिब ने भी जीते-जी मरने के अभ्यास को ही मुक्ति और प्रभु-प्राप्ति का एकमात्र साधन माना है। आपका कहना है कि मरकर फिर जी उठनेवाला अभ्यासी ही आवागमन के चक्कर से मुक्ति पाता है; वही परमधाम में पहुँचता है और उसी का प्रभु से मिलाप होता है।

जियतै मरना भला है नाहिं भला बैराग॥
नाहिं भला बैराग अस्त्र बिन करै लड़ाई।
आठ पहर की मार चूके से ठौर न पाई॥

रहै खेत पर ठाढ़ सीस को लेय उतारी।*
दिन दिन आगे चलै गया जो फिरै पछारी॥
पानी माँगै नाहिं नाहिं काहू से बोलै।
छकै पियाला प्रेम गगन की खिड़की खोलै॥
पलटू खरी कसौटी चढ़ै दाग पर दाग।
जियतै मरना भला है नाहिं भला बैराग॥[1]

पलटू साहिब हमें समझाते हैं कि घरबार छोड़कर वैरागी बनने के बजाय जीते-जी मरने का अभ्यास करने में ही हमारी भलाई है। जिज्ञासु को चाहिए कि डटकर यही अभ्यास करे, यही लड़ाई लड़े जो बिना हथियारों के लड़ी जाती है। यह चौबीस घंटे की लड़ाई है; कहीं गलती हो जाए तो मनुष्य ठिकाने पर नहीं पहुँच सकता, मन और माया के साथ इस लड़ाई में विजय प्राप्त नहीं कर सकता। उसे चाहिए कि मैदान में डटा रहे, अपनी हस्ती के मिट जाने से न डरे; मैदान में हर रोज़ आगे क़दम बढ़ाए, अगर ज़रा-सा भी पीछे हटेगा तो हार जाएगा। मनुष्य जब सुमिरन द्वारा दसवाँ दरवाज़ा खोलकर अंदर के जगत में प्रवेश करता है, तभी वह प्रभु-प्रेम का प्याला पीता है और शब्द-धुन को सुनने से उसके हृदय में प्रभु का प्रेम उमड़ता है। प्रभु के प्रेम का अमृत पीकर तृप्त हुए उसे संसार की किसी चीज़ की इच्छा नहीं रहती, वह संसार की सुख-सुविधाओं का पानी नहीं माँगता। उस अमृत को पीने से उसे जिस आनंद की प्राप्ति होती है, उसका वह बखान नहीं कर सकता और चुप ही रहता है। आत्मा पर कई जन्मों के कर्मों की मैल जमी होती है और यह मैल जीते-जी मरने से ही साफ़ हो सकती है, बाहरी बैराग यानी घरबार छोड़ने से नहीं। पलटू साहिब कहते हैं कि परख के लिए यह शब्द मार्ग एक खरी कसौटी है। इस पर हर कोई खरा नहीं उतरता, पर भलाई जीते-जी मरने का अभ्यास करने में ही है, बैरागी बनकर जंगल में या पहाड़ की गुफा में जा बैठने से काम नहीं बनेगा यानी प्रभु से मिलाप नहीं होगा।

* ठाढ़=खड़ा

भाव यह है कि जीते-जी मरकर ही जीव अंदर के जगत में प्रवेश पाता है और वहाँ प्रभु-प्रेम की मस्ती का आनंद प्राप्त करता है। इसलिए जीते-जी मरने का ख़ूब अभ्यास करना चाहिए।

राम के घर की बात कसौटी खरी है।
झूठा टिकै न कोय आजु की घरी लै॥
जियतै जो मरि जाय सीस लै हाथ में।
अरे हाँ पलटू ऐसा मर्द जो होय परै यहि बात में॥[2]

कोई बहादुर दृढ़-संकल्प जिज्ञासु ही नाम भक्ति के मार्ग पर टिका रह सकता है, यह समझाते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि संत हमें प्रभु के घर पहुँचने के लिए जो राह बताते हैं, वह जीव को परखने के लिए एक खरी कसौटी है। आज तक कोई भी मनमुख इस राह पर टिक नहीं पाया। जो डटकर जीते-जी मरने का अभ्यास करने को तैयार हो, जो ऐसा बहादुर हो, वही इस रास्ते पर क़दम रखे। वही इस कसौटी पर खरा उतर सकता है।

मुक्ति मुक्ति सब खोजत है, मुक्ति कहो कहँ पाइये जी।
मुक्ति के हाथ औ पाँव नहीं, किस भाँति सेती दिखलाइये जी॥*
ज्ञान ध्यान की बात बूझिये, या मन को खूब समझाइये जी।
पलटू मुए पर किन्ह देखा, जीवत ही मुक्त हो जाइये जी॥[3]

हमें जीते-जी मरने का अभ्यास करके और मन को पूरी तरह वश में करके जीवनकाल में ही मुक्ति पा लेने की प्रेरणा देते हुए पलटू साहिब

* सेती=से

कहते हैं कि मुक्ति की तलाश सबको है पर बताइए, मुक्ति मिलेगी कहाँ? मुक्ति के हाथ-पैर तो हैं नहीं और उसकी कोई शक्ल भी नहीं, फिर वह दिखाई कैसे देगी? आप को चाहिए कि किसी संत-सतगुरु से सच्चे ज्ञान और ध्यान का रहस्य समझें और मन को अच्छी तरह समझाकर वश में करें। यह युक्ति अपनाकर जीते-जी ही मुक्ति पा लें यानी सतगुरु के दिए नाम की कमाई करके जीते-जी शरीर, मन, माया और कर्मों के बंधन से मुक्त हो जाएँ, जिससे फिर जन्म न लेना पड़े। मरने के बाद मुक्ति को किसने देखा है?

आसिक का घर दूर है पहुँचै बिरला कोय॥
पहुँचै बिरला कोय होय जो पूरा जोगी।
बिंद करै जो छार† नाद के घर में भोगी॥*
जीते जी मरि जाय मुए पर फिर उठि जागै।
ऐसा जो कोइ होइ सोई इन बातन लागै॥
पुरजे पुरजे उड़ै अन्न बिनु बस्तर पानी।
ऐसे पर ठहराय सोई महबूब बखानी॥
पलटू आपु लुटावही काला मुँह जब होय।
आसिक का घर दूर है पहुँचै बिरला कोय॥[4]

प्रेमी भक्त प्रभु के घर को ही अपना असली घर समझते हैं और वहीं जाना चाहते हैं। पलटू साहिब उन्हें चेतावनी देते हैं कि तुम्हारा वह घर बहुत दूर है, कोई विरला भक्त ही वहाँ पहुँचता है। वही भक्त वहाँ पहुँचता है जिसका सुरत-शब्द योग का अभ्यास पूर्ण हो गया हो, जिसने काम भावना को पूरी तरह मिटा दिया हो, जो अंतर में शब्द धुन का आनंद लेने में मग्न रहता हो और जो जब चाहे जीते-जी मरकर फिर जी उठता हो।

* बिंद=भाव काम † छार=राख

जिसने ऐसी अवस्था प्राप्त कर ली हो, उसी का प्रेम मार्ग में विश्वास बना रह सकता है, वही इस मार्ग पर टिका रह सकता है। वह प्रभु के प्रेम में मग्न हुआ भूखा-नंगा और प्यासा भी रह लेता है। वह शरीर के टुकड़े-टुकड़े हो जाने की नौबत आ जाने पर भी इस मार्ग पर डटा रहता है। ऐसे भक्त को ही लोग प्रभु का प्यारा कहते हैं। अपमानित होने पर वह अपने अहं को एक ओर रखकर अपमान को ख़ुशी-ख़ुशी सह लेता है। प्रभु के प्रेमियों का घर बहुत दूर है; प्रभु के प्रेम में मस्त होकर अपने आप को बिलकुल भूल चुका कोई विरला ही वहाँ पहुँचता है।

भाव यह है कि जीते-जी मरकर शब्द से जुड़ने का अभ्यास हो जाने पर ही भक्त का प्रभु-प्रेम दृढ़ होता है और तभी उसका प्रभु से मिलाप होता है।

13

रूहानी सफ़र

आत्मा की प्रभु के धाम की यात्रा का आरंभ भौंहों के मध्य बिंदु तीसरे तिल अर्थात् अंदर की ओर खुलनेवाले दसवें दरवाज़े से होता है और अंत सिर की चोटी पर। परमार्थी जब सतगुरु की बताई युक्ति से अभ्यास करते हुए जीते-जी मर जाता है यानी जब उसकी आत्मा पैरों के तलवों से शुरू होकर पूरे शरीर में से सिमटकर तीसरे तिल पर इकट्ठी हो जाती है, तभी वह शब्द से जुड़ती है जो उसे ऊपर की ओर खींचता है। इस तरह आत्मा की परमधाम की यात्रा आरंभ हो जाती है। आत्मा द्वारा शरीर को ख़ाली करना इस यात्रा की तैयारी करना है। या यूँ समझ लें कि मनुष्य की देह के अंदर आत्मा की यात्रा के दो भाग हैं, एक तीसरे तिल अर्थात् दसवें दरवाज़े तक और दूसरा उससे ऊपर सिर की चोटी तक।

हमारे शरीर के अंदर पाँच रूहानी मंडल हैं जो हमारे रूहानी सफ़र में आनेवाले पड़ाव या मंज़िलें हैं। पहला सहस्रदल कमल है और उसके बाद नीचे से ऊपर जाते हुए त्रिकुटी, सुन्न मंडल, भँवरगुफा और सतलोक आते हैं। कुछ संतों ने पाँचवें मंडल को चार हिस्सों में बाँट दिया है और इस तरह मंडलों की संख्या आठ हो जाती है। पलटू साहिब ने अंतिम मंडल को आठवाँ लोक कहा है। आपके अनुसार पाँचवें से आठवें मंडल तक का सारा आध्यात्मिक जगत प्रभु का धाम है।

आत्मा की तीसरे तिल से परमधाम तक की यात्रा को भी दो भागों में बाँटा जा सकता है—पहला भाग त्रिकुटी तक और दूसरा त्रिकुटी से आगे। संतों ने त्रिकुटी को मन का स्रोत बताया है और कहा है कि वहीं

तक मन आत्मा के साथ रहता है। आत्मा के त्रिकुटी को पार करते समय मन पीछे छूट जाता है। इसलिए आत्मा सुन्न मंडल में और उससे आगे मन की दासता से मुक्त हो जाती है। उसके संचित कर्म भी त्रिकुटी में नष्ट हो जाते हैं। इस तरह तीसरे मंडल सुन्न में, जिसे सूफ़ी फ़क़ीरों ने लाहूत कहा है, पहुँच जाना आत्मा के लिए विशेष महत्त्व रखता है। पलटू साहिब ने भी अपनी वाणी में इस बात का संकेत दिया है।

पलटू साहिब की वाणी में आंतरिक मंडलों का सिलसिलेवार वर्णन तो नहीं किया गया, पर जहाँ-तहाँ उनका उल्लेख अवश्य मिलता है। कई पदों में विस्तार से वर्णन किया गया है, परंतु उनमें बताए गए गुप्त भेद को केवल संत ही अच्छी तरह समझा सकते हैं क्योंकि केवल उन्हीं को आंतरिक अनुभव के आधार पर पूरी जानकारी प्राप्त होती है।

दीपक बारा नाम का महल भया उजियार॥
महल भया उजियार नाम का तेज बिराजा।
सब्द किया परकास मानसर ऊपर छाजा॥
दसो दिसा भई सुद्ध बुद्ध भई निर्मल साची।
छुटी कुमति की गाँठि सुमति परगट होय नाची॥
होत छतीसो राग दाग तिर्गुन का छूटा।
पूरन प्रगटे भाग करम का कलसा फूटा॥
पलटू अँधियारी मिटी बाती दीन्ही टार।
दीपक बारा नाम का महल भया उजियार॥[1]

पलटू साहिब बताते हैं कि अंतर में शब्द के प्रकट हो जाने पर मनुष्य की आत्मा जब उसकी सहायता से तीसरे मंडल में पहुँचती है तो मन-माया और कर्मों के बंधन से मुक्त होती है और वहाँ मनुष्य को अपने वास्तविक स्वरूप का ज्ञान हो जाता है।

आप कहते हैं कि जब जिज्ञासु रूहानी अभ्यास करके नाम का दीपक जला लेता है अर्थात् अपने अंदर शब्द को प्रकट कर लेता है, तो उसके

अंतर में उजाला हो जाता है। फिर वह नाम के सहारे ऊपर वहाँ पहुँच जाता है जहाँ अंतर में असली मानसरोवर शोभा दे रहा है। यह अंतर में तीसरा मंडल है, जिसे दशम द्वार भी कहते हैं। यहाँ किसी भी दिशा में कहीं भी माया नहीं है। वहाँ पहुँचने पर जिज्ञासु की कर्मों की मैल उतर जाती है, वह शुद्ध हो जाता है तथा उसको सच्चा और निर्मल ज्ञान प्राप्त होता है। उसे यह अनुभव हो जाता है कि वह वास्तव में आत्मा है, शरीर या मन नहीं, क्योंकि उसकी आत्मा दूसरे मंडल को पार करके मन के बंधन से छूट चुकी होती है। तीसरे मंडल में निर्मल ज्ञान प्राप्त करके आत्मा ख़ुशी से नाच उठती है। वहाँ उसे मधुर दिव्य संगीत की कई प्रकार की धुनें सुनाई देती हैं। आत्मा दूसरे मंडल तक ही सत्त्व, रज और तम इन तीन गुणों के जाल में फँसी होती है। उस मंडल को पार करने से पहले वह इस कलंक से मुक्त हो जाती है और उसके संचित कर्मों का भंडार भी वहाँ नष्ट हो जाता है जिससे उसका पूर्ण भाग्योदय हो जाता है। अंतर में नाम का दीपक जला लेने से अज्ञान का अँधेरा मिट जाता है।

नासूत मलकूत† जबरूत‡ माना, लाहूत§ की लज्जत जाय चक्खा।*
लामकान पर बैठि के जी, रोसन जमीर¶ फक्कीर पक्का॥
*असमान रखाना** खुलि गया, दिल रूह बोलै हक्का हक्का††।*
पलटूदास कहै मुझे नजर आवै, हर वक्त चिहार तरफ ‡‡ मक्का॥[2]

* **नासूत**=मृत्यु लोक † **मलकूत**=सहस्रदल कमल ‡ **जबरूत**=त्रिकुटी
§ **लाहूत**=सुन्न ¶ **रोसन जमीर**=जिसकी अंदर की आँख खुल गई हो
** **रखाना**=सतलोक का प्रवेश द्वार
†† **हक्का हक्का**=परमात्मा की दरगाह की आवाज़; स्वामी जी सारबचन, हिदायतनामा में लिखते हैं कि जब आत्मा चौथे मंडल भँवर-गुफा को पार करके सतलोक के प्रवेश-द्वार पर पहुँचती है तो वहाँ उसे सतलोक में सत्त सत्त और हक़ हक़ की आवाज़ सुनाई देती है। ‡‡ **चिहार तरफ**=चारों ओर

हमें अपने कुछ रूहानी अनुभवों के बारे में बताते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि मैंने भौतिक जगत तथा पहले और दूसरे आंतरिक मंडलों का अनुभव प्राप्त करके और उन्हें पार करके सुन्न मंडल का रस चख लिया, वहाँ का आनंद प्राप्त कर लिया और फिर प्रभु के धाम में पहुँचकर प्रभु में समाकर अंतर्यामी हो गया। इस तरह मैं पक्का फ़क़ीर, पूर्ण संत, बन गया। मेरे अंतर के आकाश में जब भँवरगुफा और सतलोक के बीच की खिड़की खुल गई तो मेरी आत्मा को सतलोक में से आ रही 'हक़ हक़' की आवाज़ सुनाई दी। सतलोक में पहुँचकर वहाँ प्रभु का दर्शन कर लेने पर मेरी यह अवस्था हो गई कि मुझे हर समय संपूर्ण सृष्टि यानी सृष्टि के कण-कण में प्रभु दिखाई देने लगा, सारी सृष्टि मेरे लिए प्रभु का घर बन गई।

एक अन्य पद में पलटू साहिब ने आठवें मंडल को प्रभु का धाम बताया है और इस पद में उन्होंने पाँचवें मंडल सतलोक का इस रूप में वर्णन किया है। स्पष्ट है कि पलटू साहिब पाँचवें मंडल से लेकर आठवें मंडल तक के चारों मंडलों को परमधाम में शामिल मानते हैं।

इक कूप गगन के बीच यारो,
जहँ सुरति की डोर लगावता है।
गुरमुख होवै सो भरि पीवै,
निगुरा नहीं जल पावता है॥
बिन हाथ से ताल मृदंग बाजै,
बिन जंत्री जंत्र† बजावता है।*
पलटू बिन कान से हम सुना,
बीना कोई सकस‡ बजावता है॥[3]

* **जंत्री**=बाजा बजानेवाला † **जंत्र**=बाजा ‡ **सकस**=व्यक्ति

मनुष्य के सिर की संरचना के बारे में पलटू साहिब कहते हैं कि आकाश में एक ऐसा कुआँ है जिसमें से जिज्ञासु ध्यान की डोर द्वारा ही शब्दरूपी जल पी सकता है। ऐसा वही जिज्ञासु कर सकता है जिसने किसी पूरे गुरु से नामदान पा लिया हो, क्योंकि ध्यान को अंदर ले जाने और मस्तक में एकाग्र करने की विधि नामदान के समय गुरु ही सिखाता है। जिसका कोई गुरु नहीं, उसे यह अमृत जल प्राप्त नहीं होता। अंतर में बिना हथेलियों की चोट के मृदंग बजता है यानी बिना किसी बजानेवाले के बाजा बजता रहता है। मुझे बाहरी कानों से नहीं, बल्कि अंदर के कानों से वीणा बजती सुनाई देती है, जिसको अंतर में कोई बजा रहा है।

भजनीक जो होय सो भजन करै,
भजनीक के बीच में हम नाहीं।
भजन में जाइ के बैठि रहै,
अब कौन करै आवा जाही॥
लोन की डेरी फिर कौन खावै,*
जब जाय परी वह सिंधु माहीं।
पलटू कहकहा† जिन्ह झाँका,
उन को अब आवना क्या चाही॥[4]

आप कहते हैं कि वास्तव में भजनीक वह होता है जो एकाग्र होकर भजन करता है, अंतर में शब्द को सुनने का अभ्यास करता है। यह भजन गाकर दूसरों को उपदेश देनेवाला और उनका मनोरंजन करनेवाला भजन नहीं है। भजनीक अभ्यास करते-करते ऐसी अवस्था में पहुँच जाता है जिसमें उसे परमात्मा से अपने अलग होने का बोध नहीं रहता।

* **डेरी**=डली

† **कहकहा**=आत्मा के अंदरूनी सफ़र में एक अजीब मुक़ाम है। इसके परे बड़ी अजीब कैफ़ीयत (अवस्था) है।

जो आत्मा सदा भजन में मग्न रहती है, उसका संसार में आना-जाना समाप्त हो जाता है। नमक की डली जब समुद्र में गिर जाती है तो उसके पानी में घुल जाती है। फिर कोई उसे समुद्र में से निकालकर खा नहीं सकता। इसी तरह आत्मा जब आंतरिक सफ़र के दौरान आश्चर्यजनक मुक़ामों से चढ़ाई करते हुए वह अवस्था प्राप्त कर लेती है जहाँ वह प्रभु का दर्शन करके उसमें समा जाती है, उससे एक हो जाती है, तब उसे अपने अलग अस्तित्व का ज्ञान नहीं रहता। फिर उसकी दोबारा संसार में आने की इच्छा होने का तो प्रश्न ही कहाँ उठता है? उसका आवागमन समाप्त हो जाता है।

हवा कँहै खामोस करै, नाक आँख कान मुह मूँदि भाई।*
तब नूर तजल्ली† दीद करै, असमान कि खिरकी खोलि नाई‡॥
खिरकी की राह निकरि जावै, सुनै हक§ हक आवाज पाई।
*पलटू दीगर¶ को नेस्त** करै, होय खुद अहद†† इस भाँति जाई॥*[5]

आप कहते हैं कि परमार्थी को चाहिए कि अपनी सांसारिक पदार्थों की लालसा को नियंत्रण में करे। ऐसा करके ही वह अपना ध्यान आँख, कान, नाक, मुँह आदि नौ द्वारों की ओर से हटाकर अपने अंदर के आकाश में खुलनेवाली खिड़की खोल सकेगा और वहाँ के दिव्य प्रकाश को देख पाएगा। उस खिड़की के रास्ते जब वह अंदर आध्यात्मिक जगत की यात्रा पर निकल पड़ेगा तब वह पाँचवें मंडल के प्रवेश-द्वार पर पहुँचकर हक़ हक़ की आवाज़ सुन सकेगा। फिर उसका द्वैत भाव नष्ट हो जाएगा और इस तरह परमधाम में पहुँचकर वह परमात्मा में समाकर ख़ुद ही परमात्मा हो जाएगा।

* **हवा**=भाव इच्छा † **तजल्ली**=दिव्य प्रकाश ‡ **खोलि नाई**=खोल दी
§ **हक**=सत्य, परमात्मा ¶ **दीगर**=भाव द्वैत ** **नेस्त**=नष्ट
†† **अहद**=एक अर्थात् परमात्मा

दीद बर दीद नजर आवै, तिस को साच करि जानिये जी।*
इस दिल सेती† फहम‡ करै, उस को तब जाइ पहिचानिये जी॥
इस दिल की रूह असमान मंहै, लाहूत§ के बीच में आनिये जी।
पलटू ना जाहिर बात करै, उसकी बात को मानिये जी॥[6]

आप कहते हैं कि आध्यात्मिक जगत की उन्हीं बातों को सच मानो जिन्हें तुम स्वयं अपनी अंदर की आँखों से देख लो। सत्य का प्रत्यक्ष दर्शन कैसे किया जाए, उसे कैसे पहचाना जाए, यह समझाते हुए आप कहते हैं कि इसके लिए किसी ऐसे महात्मा के पास जाओ जिसने अंदर जाकर अपने आंतरिक अनुभव से सत्य-असत्य का ज्ञान प्राप्त कर लिया हो। उसकी बताई युक्ति से एकाग्र हुई आत्मा को शब्द के अभ्यास से अंदर आकाश में सुन्न मंडल में पहुँचाओ। ध्यान रहे, तुम्हें ऐसे ही महात्मा पर विश्वास करना है जो आध्यात्मिक अनुभव का दिखावा न करता हो।

मेरे तन मन लग गई पिय की मीठी बोल॥
पिय की मीठी बोल सुनत मैं भई दिवानी।
भंवरगुफा के बीच उठत है सोहं बानी॥
देखा पिय का रूप रूप में जाय समानी।
जब से भया मिलाप मिले पर ना अलगानी॥
प्रीत पुरानी रही लिया हम ने पहिचानी।
मिली जोत में जोत सुहागिन सुरत समानी॥
पलटू सब्द के सुनत ही घूँघट डारा खोल।
मेरे तन मन लग गई पिय की मीठी बोल॥[7]

* **दीद बर दीद**=प्रत्यक्ष † **दिल सेती**=तीसरे तिल से ‡ **फहम**=विवेक
§ **लाहूत**=सुन्न मंडल

पाँचवें रूहानी मंडल सतलोक में पहुँचकर परमात्मा को पा चुकी अपनी आत्मा का वर्णन पलटू साहिब एक ऐसी प्रेमिका के रूप में कर रहे हैं जिसने अपने प्रियतम को पा लिया है।

आत्मारूपी प्रेमिका कहती है कि मैंने अपने प्रियतम की मधुर वाणी सुनी तो मुझ पर जादू-सा हो गया; मैं दीवानी हो गई, अपने आप को भूल गई। भँवरगुफा में सोहं सोहं की आवाज़ सुनाई देती है। मैंने भी वह आवाज़ सुनी और फिर अगले मंडल में पहुँचकर प्रियतम का दर्शन पाकर उसी में समा गई। प्रियतम से मिलन हो जाने के बाद मैं उससे अलग नहीं हुई हूँ, अब तो वह सदा मेरे साथ है। यह बात मैंने जान ली है कि हमारी यह प्रीत बहुत पुरानी है, आदि काल से है। मैं स्वयं ज्योति-स्वरूप हूँ और अब अपने प्रियतम परमात्मा में जा मिली हूँ, जो परम ज्योति है। प्रियतम से मिलकर अब मैं सुहागिन हो गई हूँ। भँवरगुफा के पार पहुँचने पर जब मुझे प्रियतम का स्वर सुनाई दिया तो मैंने अपना अहं का घूँघट उठा दिया। प्रियतम की मधुर वाणी ने मुझे मंत्रमुग्ध कर दिया।

14

भक्ति, प्रेम और विरह

भक्ति और प्रेम दोनों साथ-साथ चलते हैं, दोनों एक दूसरे के पोषक हैं। दोनों का बहुत गहरा संबंध है। दोनों के घनिष्ठ संबंध के कारण ही संतों ने अपनी वाणी में अकसर दोनों में कोई अंतर नहीं किया। पलटू साहिब की वाणी में भी दोनों शब्द कई जगह समान अर्थ में दिखाई देते हैं।

अन्य संतों की तरह आपका भी यही कहना है कि परमात्मा को केवल भक्ति से पाया जा सकता है। जाति-पाँति, पद और धन-दौलत उसके लिए कोई महत्त्व नहीं रखते। वह तो केवल भक्ति चाहता है, भक्ति का भूखा है। वह अपने भक्तों से बहुत प्यार करता है, उनका वह दास बन जाता है।

लेकिन प्रभु की भक्ति तभी की जा सकती है यदि मनुष्य संसार के प्रति अपने मोह पर अंकुश लगाए। प्रभु से प्रेम करना आसान नहीं है। प्रभु का प्रेमी मानो दिन-रात सूली पर टँगा रहता है। उसे तरह-तरह के अपमान सहने पड़ते हैं। प्रभु को पाने के लिए उसे अपने अहं को मिटाना पड़ता है।

पलटू साहिब ने प्रेमी भक्त की विरह-व्यथा का वर्णन बहुत प्रभावशाली ढंग से किया है। उन्होंने कहा है कि असहनीय पीड़ा ही सच्चे प्रेम की निशानी है और जब विरह-वेदना सही नहीं जाती तो प्रभु की कृपा से सतगुरु से मिलाप हो जाता है, जो जीव को नामदान देकर प्रभु से उसके मिलाप का प्रबंध कर देते हैं।

सच्चा गुरु प्रभु का प्रकट रूप होता है। उसके प्रति शिष्य के प्रेम का भी आपने अति सुंदर चित्रण किया है।

आपका यह भी कहना है कि प्रभु का सच्चा भक्त वही है जो सबसे मीठा बोलता है, किसी का दिल नहीं दुखाता। भक्त का काम प्रेमपूर्वक,

धैर्य तथा दृढ़ता के साथ भक्ति में लगे रहना है, उसे प्रभु से मिलाना सतगुरु की ज़िम्मेदारी है।

साहिब के दरबार में केवल भक्ति पियार॥
केवल भक्ति पियार साहिब भक्ती में राजी।
तजा सकल पकवान लिया दासीसुत भाजी॥*
जप तप नेम अचार करै बहुतेरा कोई।
खाये सेवरी† के बेर मुए सब ऋषि मुनि रोई॥
किया युधिष्ठिर यज्ञ बटोरा सकल समाजा।
मरदा सब का मान, सुपच बिनु घंट न बाजा॥
पलटू ऊँची जाति कौ जनि‡ कोइ करै हंकार।
साहिब के दरबार में केवल भक्ति पियार॥[1]

पलटू साहिब कहते हैं कि प्रभु के धाम में केवल प्रेमभाव, भक्तिभाव देखा जाता है। प्रभु केवल भक्ति से संतुष्ट होता है। दुर्योधन के महल के तरह-तरह के पकवानों को महत्त्व न देते हुए श्रीकृष्ण विदुर के घर गए और वहाँ साधारण भोजन बड़े चाव से खाया। श्रीराम उन ऋषि-मुनियों के आश्रम में नहीं गए जिन्हें अपने आचार-व्यवहार के नियमों का पालन तथा जप-तप का अहंकार था, बल्कि वह प्यार में मस्त, भोली-भाली शबरी की कुटिया में गए और उसके जूठे बेर खाए, जिससे ऋषि-मुनियों के मन को बहुत ठेस लगी। युधिष्ठिर ने सब राजाओं का अभिमान चूर-चूर कर दिया और अश्वमेध यज्ञ रचा जिसमें सब साधु-महात्माओं को निमंत्रित किया, पर सुपच के आए बिना घंटा नहीं बजा। इसलिए ऊँची जाति का अभिमान किसी को नहीं करना चाहिए। प्रभु के धाम में केवल भक्तिभाव और प्यार देखा जाता है।

---

* **दासीसुत**-विदुर † **सेवरी**=शबरी ‡ **जनि**=मत

हरि को भजै सो बड़ा है जाति न पूछै कोय॥
जाति न पूछै कोय हरी को भक्ति पियारी।
जो कोई करै सो बड़ा जाति हरि नाहिं निहारी॥
बधिक अजामिल रहे रहे फिर सदन कसाई।*
गनिका बिस्वा रही बिमान पै तुरत चढ़ाई॥
नीच जाति रैदास आपु में लिया मिलाई।
लिया गिद्ध† को गोदि दिया बैकुंठ पठाई॥
पलटू पारस के छुए लोहा कंचन होय।
हरि को भजै सो बड़ा है जाति न पूछै कोय॥[2]

आप हमें समझाते हैं कि प्रभु की दृष्टि में वही महान है जो उसकी भक्ति करता है। प्रभु के धाम में मनुष्य की जाति कोई नहीं पूछता। प्रभु को भक्ति ही प्यारी है। जो कोई भी उसकी भक्ति करता है प्रभु उसे बड़ा मानता है; उसकी जाति की ओर वह ध्यान नहीं देता। अजामिल पेशे से शिकारी था और सदना कसाई, पर दोनों ने मुक्ति पा ली। गणिका वेश्या थी, फिर भी भगवान विष्णु ने उसे तुरंत विमान पर चढ़ाकर अपने धाम में पहुँचा दिया। भक्त रविदास जूतियाँ गाँठकर अपनी रोज़ी कमाते थे, परंतु प्रभु ने उन्हें अपने आप में मिला लिया। बुरी तरह घायल हुए गिद्धराज जटायु को श्रीराम ने अपनी गोद में उठा लिया और फिर बैकुंठ भेज दिया। पारस के स्पर्श से लोहा भी सोना बन जाता है। इसी तरह भक्ति करने से हर व्यक्ति बड़ा हो जाता है, चाहे वह किसी भी जाति का क्यों न हो। प्रभु के धाम में कोई इस बात पर ध्यान नहीं देता कि उसकी जाति क्या थी।

अपने पिया की सुन्दरी लोग कहैं बौरान‡॥
लोग कहैं बौरान काहि की पकरौं बानी।

* **बधिक**=शिकारी † **गिद्ध**=जटायु ‡ **बौरान**=पागल

घर घर घोर मथान फिरौं मैं नाम दिवानी॥*
घूँघट डारेउ खोलि ज्ञान कै ढोल बजाई।
चढ़िउँ बाँस पर धाइ† सहर कै बिचै गड़ाई‡॥
देखि देखि सब चिढ़ै लोग मैं अधिक चिढ़ावौं।
लगी गुरु से डोरि मगन ह्वै ताहि रिझावौं॥
पलटू हमरे देस की जानैं संत सुजान।
अपने पिया की सुन्दरी लोग कहैं बौरान॥[3]

पलटू साहिब हमें बताते हैं कि अपने प्यारे गुरु के प्रेम में मग्न शिष्य उसी में खो जाता है, उसी का हो जाता है, ऐसी अवस्था में लोग उसे पागल कहते हैं। वह भला किस-किस का मुँह बंद कर सकता है? घर-घर में उसकी तीखी आलोचना होती है, मगर गुरु के दिए नाम के नशे में मस्त हुआ वह उसकी बिलकुल परवाह नहीं करता। वह लोकलाज का परदा हटाकर, बेधड़क होकर, डंके की चोट पर यह घोषणा करता है कि मुझे अपने गुरु से सच्चा ज्ञान प्राप्त हुआ है। यह काम मैं नट की तरह शहर के बीचों-बीच गाड़ रखे एक बाँस पर चढ़कर करने को भी तैयार हूँ। मुझे इतना निडर, इतना नि:संकोच, देखकर लोग मुझसे चिढ़ने लग गए हैं पर मुझ पर उनकी परेशानी का कोई असर नहीं होता, बल्कि मैं तो उन्हें और अधिक चिढ़ाता हूँ। मेरा अब गुरु से प्रेम का नाता जुड़ गया है और मेरा ध्यान हर समय उन्हीं को प्रसन्न करने में रहता है। परम ज्ञानी सतगुरु को मेरे निजधाम की पूरी जानकारी है और मैं अब उनके प्रेम में खोकर उनका हो चुका हूँ। लोग मुझे पागल कहते हैं तो कहते रहें।

भाव यह है कि सतगुरु के प्रेम में मस्त शिष्य लोकलाज से बहुत ऊपर उठ जाता है।

* **मथान**=बार-बार की चर्चा † **धाइ**=भागकर ‡ **गड़ाई**=गाड़ रखा है

लोक लाज कुल छाड़ि कै करि लो अपना काम॥
करि लो अपना काम सोच मोहिं वा दिन केरी।*
जेहि से कौल† करार‡ कौल से आपन हेरी॥
कीन्हों भक्ति करार जन्म तब मानुष पयो।
मोकहँ है सो चेत§ गर्भ के बिच करि आयो॥
औंधे बासन¶ मँहै नीर जिन्ह लिया उबारी।
तेकहँ तजि कै रहौं कुसल का होय तुम्हारी॥
जगत हँसै तो हँसन दे पलटू हँसै न राम।
लोक लाज कुल छाड़ि कै करि लो अपना काम॥[4]

संतों का कहना है कि माँ के गर्भ में पड़ी आत्मा को बहुत कष्ट सहना पड़ता है, तब वह परमात्मा को वचन देती है कि अगर इस नरक से उबार लिया जाए तो वह अपना जीवन उसकी भक्ति में ही लगाएगी। मगर जन्म लेते ही वह अपने उस वचन को भूल जाती है।

प्रभु को पा लेनेवाले पलटू साहिब मनुष्य के चोले में आई आत्मा को उसके वचन की याद दिलाते हुए कह रहे हैं कि लोकलाज और लोगों के तानों की चिंता छोड़कर अपना काम कर लो, भक्ति करके अपनी मुक्ति का प्रबंध कर लो। मुझे वह दिन याद है जब तुमने मेरे साथ वादा किया था, पर तुम अपने वादे से फिर गई हो। मुझे अच्छी तरह याद है कि तुमने भक्ति करने का वादा तब किया था जब तुम अभी माता के गर्भ में थी, यह मनुष्य जन्म तो तुझे बाद में मिला था। पानी से भरे उस उलटे बरतन में से जिसने तुम्हें बाहर निकाला, उसी को भुलाकर तुम सकुशल कैसे रह सकती हो? संसार तुम्हारी हँसी उड़ाए तो उसे उड़ा लेने दो, तुम्हें बस यही चिंता होनी चाहिए कि प्रभु के आगे तुम्हें लज्जित न होना पड़े।

---

* केरी=की † कौल=प्रतिज्ञा ‡ करार=वादा § चेत=याद
¶ बासन=बरतन

सीस उतारै हाथ से सहज आसिकी नाहिं॥*
सहज आसिकी नाहिं खाँड़ खाने को नाहीं।
झूठ आसिकी करै मुलुक में जूती खाही॥
जीते जी मरि जाय करै ना तन की आसा।
आसिक को दिन रात रहै सूली पर बासा॥
मान बड़ाई खोय नींद भर नाहीं सोना।
तिल भर रक्त न माँस नहीं आसिक को रोना॥
पलटू बड़े बेकूफ वे आसिक होने जाहिं।
सीस उतारै हाथ से सहज आसिकी नाहिं॥[5]

आप कहते हैं कि प्रभु से प्रेम करना चीनी फाँक लेने के समान कोई आसान काम नहीं है। इसमें मनुष्य को अपने हाथों से अपना सिर काटना पड़ता है यानी उसे अपने अहं को ख़त्म करना पड़ता है। जिसका प्रेम झूठा हो, वह परलोक में बुरी तरह अपमानित होता है। प्रभु के प्रेमी को जीते-जी मरना पड़ता है और शरीर का मोह छोड़ना पड़ता है। वह तो दिन-रात सूली पर टँगा रहता है, क्योंकि उसे हर पल विरह की तीखी पीड़ा सहनी पड़ती है। उसकी मान-प्रतिष्ठा जाती रहती है, वह पूरी नींद नहीं ले पाता और सूखकर काँटा हो जाता है। उसे लोग खुलकर रोने भी नहीं देते। उन्हें मैं मूर्ख ही कहूँगा जो इसे एक आसान काम समझकर प्रभु-प्रेम के मार्ग पर पाँव रखते हैं। इस मार्ग पर चल रहे मनुष्य को तो ख़ुद ही अपने आप की यानी अपने अहं की बलि देनी पड़ती है, तब वह प्रभु को पाता है।

आसिक इसक पर जो भये, वे नहिं चाहैं करामात है जी।
उन को सोरसार नहीं भावै, वे मस्त रहैं दिन रात है जी॥

---

* सीस=अहं

नहिं भूख लगै नहिं नींद आवै, नहिं पीवत हैं नहिं खात हैं जी।
पलटू हम बूझि बिचारि देखा,वही साहिब की जाति हैं जी॥[6]

प्रेम में खोए प्रभु-भक्तों की ऊँची अवस्था का वर्णन करते हुए पलटू साहिब हमें बताते हैं कि जो अपने आप को प्रेम में न्योछावर कर देते हैं, उनकी कोई करामात करने की चाह नहीं होती, क्योंकि वे अपने इर्दगिर्द भीड़ नहीं इकट्ठी करना चाहते। दिन-रात प्रभु-प्रेम के नशे में मस्त हुए वे एकांत में रहना पसंद करते हैं, संसार का शोर और झगड़े उन्हें अच्छे नहीं लगते। उन्हें न भूख-प्यास सताती है और न नींद। वे बहुत कम खाते-पीते हैं। अच्छी तरह सोच-विचार करके मैं इसी निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि कुलमालिक के ऐसे प्रेमी और प्रभु में कोई अंतर नहीं होता।

मगन भई मेरी माइजी जब से पाया कंथ॥
जब से पाया कंथ पंथ सतगुरु बतलाया।
सतगुरु बड़े दयाल करी उन मो पर दाया॥
स्वस्ता मन में आइ छुटी मेरी दुचिताई†।*
सोऊँ कंथ के साथ अंग से अंग लगाई॥
अभ्यन्तर जागी प्रीत निरन्तर कंथ से लागी।
दरस परस के करत जगत की भ्रमना भागी॥
पलटू सतगुरु सब्द सुनि हृदय खुला है ग्रंथ।
मगन भई मेरी माइजी जब से पाया कंथ॥[7]

प्रेमी भक्त कहता है कि जब से मेरा अपने प्रियतम प्रभु से मिलन हुआ, तब से मैं आनंद में मग्न हूँ। सतगुरु बड़े दयालु हैं। उन्होंने मुझ पर बहुत दया की। मैं जब उनके बताए मार्ग पर चला तो मेरे सब संशय दूर हो

* स्वस्ता=स्थिरता † दुचिताई=दुविधा

गए, मेरे मन में ठहराव आ गया। अब तो हालत यह हो गई है कि प्रियतम के और मेरे बीच तनिक भी दूरी नहीं रही। सतगुरु की बताई युक्ति को अपनाने से मेरे अंदर परमात्मा के प्रति प्रेम जाग उठा और मैं सदा उसी के ध्यान में लीन रहने लगा। जब उसके दर्शन हो गए और उससे मिलाप हो गया तो मेरे भ्रम समाप्त हो गए। सतगुरु ने मुझे जिस शब्द का भेद बताया उसको सुनने से मेरा अंतर अब मेरे लिए एक खुली किताब हो गया है यानी मुझे पूर्ण ज्ञान हो गया है।

पिय को खोजन मैं चली आपुइ गई हिराय॥*
आपुइ गई हिराय कवन अब कहै सँदेसा।
जेकर पिय में ध्यान भई वह पिय के भेसा॥
आगि माहिं जो परै सोऊ अग्नी ह्वै जावै।
भृंगी कीट को भेंट आपु सम लेइ बनावै॥
सरिता बहि के गई सिन्धु में रही समाई।
सिव सक्ती के मिले नहीं फिर सक्ती आई॥
पलटू दिवाल कहकहा मत कोउ झाँकन जाय।
पिय को खोजन मैं चली आपुइ गई हिराय॥[8]

पलटू साहिब हमें बताते हैं कि आत्मा जब अपने प्रियतम परमात्मा की खोज में निकली तो ख़ुद ही खो गई, जब वह ख़ुद ही खो गई तो उसके कोई संदेश भेजने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। जो प्रेमिका प्रियतम के ध्यान में मग्न हो जाती है, वह आख़िरकार उसी का रूप ले लेती है, उससे एक हो जाती है। आग में गिरी हर चीज़ आग ही हो जाती है, भृंगी अपनी संगति से दूसरी जाति के कीड़े को भी अपने जैसा बना लेता है, नदी बहती-बहती समुद्र में जा गिरती है और उसी में समा जाती है। इसी प्रकार

* हिराय=खो जाना

जब परमात्मा और आत्मा का मिलाप होता है तो दोनों एक हो जाते हैं और आत्मा अपने पति परमात्मा से अलग होकर फिर संसार में नहीं आती। जिसे ख़ुद खो जाना स्वीकार हो, वह प्रेम-मार्ग पर चलकर अहं की दीवार के परे झाँकने का यत्न करे क्योंकि ऐसा करने पर आत्मा परमात्मा में समा जाती है और उसे अपने अलग अस्तित्व का बोध नहीं रहता।

भूली जग की चाल सब भई जोगिनि अलमस्त॥
भई जोगिनि अलमस्त खबर कछु तन की नाहीं।
खाय पियै अब कौन रहै मन भजनै माहीं॥
ऐसी लागी नेह तुरिया से भई अतीता।
आठ पहर गलतान† जोति के घर को जीता॥
ह्वै गई दसा अरूढ़‡ ज्ञान तजि भई बिज्ञानी।
धरती नभ जरि गई जरा§ है पवन औ पानी॥
पलटू दिनकर उदय भा रजनी भै गई अस्त।
भूली जग की चाल सब भई जोगिनि अलमस्त॥[9]

पलटू साहिब हमें बता रहे हैं कि प्रभु-प्रेम के कारण आत्मा जब प्रभु से मिलाप के लिए आंतरिक अभ्यास में मग्न हो जाती है तो वह दुनिया के सब तौर-तरीक़े भूल जाती है, बेपरवाह हो जाती है, उसे अपने तन का भी होश नहीं रहता। जब मन हर पल भक्ति में रहता हो तो खाने-पीने का होश किसे रह सकता है? वह प्रभु-प्रेम में इतनी मग्न हो जाती है कि चेतना की चौथी अवस्था भी पार कर लेती है। आठों पहर प्रभु-प्रेम में मग्न हुई वह माया के दायरे से पार हो जाती है। उसे चेतना की ऊँची अवस्था यानी सहज अवस्था प्राप्त हो जाती है। सुने सुनाए ज्ञान से ऊपर

* अलमस्त=बेपरवाह † गलतान=भाव लीन होना ‡ अरूढ़=भाव ऊँची
§ जरा=जला

उठकर वह अपने तथा परमात्मा के स्वरूप की पहचान कर लेती है। उसके लिए पृथ्वी, जल आदि पाँच तत्त्वों से बना यह संसार सारहीन हो जाता है। शब्द-योग के अभ्यास में लगी आत्मा जब दुनिया की तरफ़ से बेपरवाह हो जाती है तो अज्ञान की रात बीत जाती है और परम ज्ञान का सूर्य उदय हो जाता है।

प्रेम बान जा के लगा सो जानैगा पीर॥
सो जानैगा पीर काह मूरख से कहिये।
तिल भरि लगै न ज्ञान ताहि से चुप ह्वै रहिये॥
लाख कहै समुझाय बचन मूरख नहिं मानै।
तासे कहा बसाय ठान जो अपनी ठानै॥
जोहि के जगत पियार ताहि से भक्ति न आवै।
सतसंगति से बिमुख और के सन्मुख धावै॥
जिन कर हिया कठोर है पलटू धसै न तीर।
प्रेम बान जा के लगा सो जानेगा पीर॥[10]

आप कहते हैं कि प्रेम-बाण लगने की पीड़ा वही जान सकता है जो ख़ुद इस बाण से घायल हो चुका हो। मूर्ख को इस पीड़ा के बारे में बताने का क्या लाभ? जिस पर अध्यात्म ज्ञान की बातों का रत्ती भर भी असर न होता हो उसके सामने चुप रहना ही अच्छा है। मूर्ख को चाहे कितना ही समझाया जाए, वह किसी की बात पर विश्वास नहीं करता। जो अपने हठ पर अड़ा हो, उस पर किसी का क्या बस चल सकता है? जो मूर्ख दुनिया के प्यार में फँसा हुआ है वह परमात्मा की भक्ति नहीं कर सकता, उससे प्यार नहीं कर सकता। प्रभु से प्रीति और उसकी भक्ति संतों की संगति करने से होती है, जबकि मूर्ख संतों की संगति नहीं करता। वह तो हमेशा दुनियादारों की संगति के लिए उत्सुक रहता है। संसार का मोह उसके हृदय को पत्थर जैसा बना देता है। इसलिए उसमें प्रभु-प्रेम का बाण नहीं

धँस सकता। असल में प्रेम-बाण की पीड़ा वही जानता है जिसके हृदय में यह बाण चुभ चुका हो।

जल औ मीन समान, गुरु से प्रीति जो कीजै॥ टेक॥
जल से बिछुरै तनिक एक जो, छोड़ि देत है प्रान॥
मीन कँह लै छीर में राखै, जल बिनु है हैरान॥*
जो कछु है सो मीन के जल है, जल के हाथ बिकान॥
पलटूदास प्रीति करै ऐसी, प्रीति सोई परमान॥[11]

पलटू साहिब कहते हैं कि शिष्य को गुरु से ऐसा प्यार होना चाहिए जैसा मछली को जल से होता है। मछली अगर जल से थोड़ी-सी देर के लिए भी अलग हो जाए तो जान दे देती है। उसे पानी से निकालकर अगर दूध में डाल दिया जाए तो भी उसकी तड़प ख़त्म नहीं होती; पानी के बिना वह बुरी तरह छटपटाती है। उसके लिए जल ही सब कुछ होता है। वह मानो जल के हाथ बिक गई होती है यानी वह पूरी तरह उस पर आश्रित होती है, जैसे बिका हुआ दास अपने स्वामी पर आश्रित होता है। शिष्य का भी अपने गुरु से ऐसा ही गहरा प्रेम होना चाहिए। ऐसा प्यार ही सच्चा प्यार होता है।

अरे दैया† हमरे पिया परदेसी॥ टेक॥
इक तो मैं पिय की बिरह बियोगिनि, मो कहँ कछु न सुहाई।
दुसरे सासु ननद मारै बोली, छतिया मोरि फटि जाई॥
चुइ चुइ आँसु भींजि मोर अँचरा, भींजि गई तन सारी।
भूख न भोजन नींद न आवै, झुकि झुकि उठौं सम्हारी॥

* छीर=दूध † दैया=भाग्य

अपने पियहिं पाती लिखि पठइउँ, मरम न जानै काऊ।
उमगे जोबन राखि न जाई, तुम थाती लै जाऊ॥*
बारी† रहिउँ भइउँ तरुनापा‡, सेत भये तन केसा।
पलटूदास पिया नहिं आये, तब हम गइनि बिदेसा॥[12]

पलटू साहिब ने विरहिणी नारी का दृष्टांत देकर विरहिणी आत्मा की दशा का चित्रण किया है।

विरहिणी कहती है कि हाय मेरा दुर्भाग्य! प्रियतम मेरे लिए परदेसी हो गया है। एक तो मैं उससे बिछुड़ी हुई हूँ जिससे मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगता, ऊपर से मुझे सास-ननद के ताने सुनने पड़ते हैं जिससे मेरी छाती फट जाती है। आँसुओं के बहते रहने से मेरा आँचल ही नहीं, सारा शरीर भीग जाता है। मुझे भूख नहीं लगती, नींद नहीं आती; झुक-झुककर, सँभल-सँभलकर उठती हूँ। प्रियतम को मैंने पत्र में लिख भी दिया कि मेरे दिल का हाल कोई नहीं जानता; विरहरूपी यौवन उमड़ पड़ा है और सँभाला नहीं जाता; मैं तुम्हारी अमानत हूँ, अब तो आकर ले जाओ, परंतु प्रियतम नहीं आए। किशोर अवस्था लाँघकर मैं यौवन में प्रवेश कर गई और अब तो तन के रोम और केश सफ़ेद हो गए हैं, बुढ़ापा आ गया है। अब भी प्रियतम अगर न आए तो मैं इस संसार में नहीं रहूँगी।

रटौं मैं राम को बैठी, पड़े हैं जीभ में छाला।
थके दृग पंथ को जोहत§, जपौं मैं प्रेम की माला॥
कुसल जब पीव को देखौं, देखे बिन नाहिं जीवौंगी।
खेलौंगी जान पर अपने, पियाला जहर पीवौंगी॥
बिरह की आग है लागी, मुझे कुछ और ना सूझै।
सजन वह बड़ा बेदरदी, हमारी दरद ना बूझै॥

* थाती=अमानत † बारी=किशोरी ‡ तरुनापा=यौवन § जोहत=देखते हुए

दीपक को भावता नाहीं, पतँग तन जारि भया राखी।
पलटूदास जिय मेरा, तुम्हारे बीच है साखी॥[13]*

विरहिणी नारी के रूप में चित्रित प्रेमी भक्त की आत्मा कहती है कि मैं बैठी-बैठी अपने प्रियतम प्रभु का नाम जपती रहती हूँ। नाम जपते-जपते मुँह में छाले पड़ गए हैं। प्रभु की राह देखते-देखते मेरी आँखें थक गई हैं, फिर भी मैं उसके प्रेम की माला फेरती रहती हूँ। मेरी कुशल तो उसका दर्शन करने में ही है, उसे देखे बिना अब मैं जी नहीं सकूँगी। उसका दर्शन पाने के लिए मैं प्राणों को भी संकट में डाल दूँगी, ज़हर का प्याला पी जाऊँगी। मैं तो विरह की आग में जल रही हूँ, मेरा ख़याल प्रियतम के सिवा और कहीं जाता ही नहीं। पर मेरा वह साजन बड़ा बेरहम है, मेरी पीड़ा को नहीं समझता। पतंगा दीपक के आस-पास कितना ही क्यों न मँडराता रहे, वह बेचारा उसकी लौ में जलकर राख भी हो जाता है, पर दीपक को उसकी परवाह नहीं होती। परमात्मा को ही संबोधित करके आत्मा कहती है कि अब मेरा मन तुम्हीं में है। अब तुम्हीं पंच हो, तुम्हीं को यह निर्णय करना है कि क्या तुम्हारी मेरे प्रति इतनी कठोरता उचित है?

भाव यह है कि प्रभु का सच्चा प्रेमी उससे प्रेम करना कभी नहीं छोड़ता चाहे उसे प्रभु की ओर से कितनी ही उपेक्षा क्यों न सहनी पड़े, चाहे उसका प्रभु से उम्र भर मिलाप न हो।

अब तो मैं बैराग भरी। सोवत से मैं जागि परी॥
नैन बने गिर के झरना ज्यों। मुख से निकरै हरी हरी॥
अभरन तोरि बसन धै† *फारौं। पापी जिउ नहिं जात मरी॥*
लेउँ उसास‡ *सीस दै मारौं। अगिनि बिना मैं जाउँ जरी॥*
नागिनि बिरह डसत है मो को। जात न मो से धीर धरी॥

* **साखी**=निर्णायक † **धै**=पकड़कर ‡ **उसास**=लंबी साँस

सतगुरु आइ किहिन बैदाई। सिर पर जादू तुरत करी॥*
पलटूदास दिहा उन मो को। नाम सजीवन मूल जड़ी॥[14]

विरह की तेज पीड़ा सहन कर चुकी आत्मा कहती है कि मैं मोह की नींद से जाग उठी थी और मेरे मन में संसार के प्रति बहुत वैराग हो गया था। प्रभु के विरह में मेरी आँखों से पर्वत के झरने की तरह आँसू बहते रहते थे और मुख से मैं हरि-हरि जपती रहती थी। विरह की ज़बरदस्त पीड़ा के कारण मैं गहने तोड़ देती थी और कपड़े पकड़कर फाड़ डालती थी। इतनी बुरी हालत थी मेरी, पर फिर भी मेरे पापी प्राण नहीं निकल रहे थे। मैं दुख भरी लंबी-लंबी साँसें लेती थी, सिर पटकती थी और आग के बिना ही जली जा रही थी। विरहरूपी नागिन मुझे बार-बार डसती थी और मैं धीरज नहीं धर पा रही थी। जब मेरी ऐसी दयनीय दशा हो गई तो सतगुरु वैद्य बनकर आ पहुँचे। उन्होंने मुझे नाम दे दिया जिसने तुरंत मुझ पर जादू-सा कर दिया। नाम तो सब जड़ी-बूटियों की मूल संजीवनी है।

ज्यों ज्यों भीजै कामरी† *त्यों त्यों गरुई*‡ *होय॥*
त्यों त्यों गरुई होय सुने संतन की बानी।
ठोपै ठोप§ *अघाय*¶ *ज्ञान के सागर पानी॥*
*रस रस*** *बाढ़ै प्रीति दिनों दिन लागन लागी।*
लगत लगत लगि जाय भरम आपुइ से भागी॥
रस रस चलै सो जाय गिरै जो आतुर धावै।
तिल तिल लागै रंग भंगि†† *तब सहजै आवै॥*
भक्ति पोढ़‡‡ *पलटू करै धीरज धरै जो कोय।*
ज्यों ज्यों भीजै कामरी त्यों त्यों गरुई होय॥[15]

* **बैदाई**=चिकित्सा † **कामरी**=छोटा कंबल ‡ **गरुई**=भारी
§ **ठोप**=पानी की बूँद ¶ **अघाय**=तृप्त हो ** **रस रस**=धीरे-धीरे
†† **भंगि**=मस्ती ‡‡ **पोढ़**=पुष्ट

पलटू साहिब कहते हैं कि कंबल जैसे-जैसे भीगता जाता है, वैसे-वैसे भारी होता जाता है। संतमार्ग की यात्रा में भी धैर्य से काम लेना पड़ता है, उतावलेपन से काम नहीं बनता। संतों की शिक्षा ज्ञान का सागर है। जिज्ञासु को चाहिए कि इसका पानी बूँद-बूँद करके पिये और तृप्त हो जाए यानी संतों के हर वचन का अच्छी तरह मनन-चिंतन करके उसे ग्रहण करे और उसका भरपूर आनंद ले। इस तरह उस उपदेश के प्रति, संतमार्ग की रहनी के प्रति धीरे-धीरे प्रेम बढ़ता जाता है, हर दिन ज़्यादा अभ्यास करने की लगन लग जाती है। धीरे-धीरे यह लगन पूरी तरह लग जाती है, फिर सारा भ्रम अपने आप ही दूर हो जाता है। संतमार्ग पर जो धैर्यपूर्वक चलता है, वही मंज़िल पर पहुँचता है; जो इस पर अंधाधुंध भागने की कोशिश करता है, वह ठोकर खाकर बुरी तरह गिरता है। प्रभु-प्रेम का रंग थोड़ा-थोड़ा करके ही चढ़ता है, पर जब जिज्ञासु पूरी तरह उस रंग में रँग जाता है तो उसे अपने आप ही मस्ती आ जाती है। प्रेम-मार्ग पर चलने में जो धैर्य से काम लेता है, उसी की भक्ति परिपूर्ण होती है और प्रभु से मिलाप हो जाता है।

पतिबरता को लच्छन सब से रहै अधीन॥
सब से रहै अधीन टहल वह सब की करती।
सास ससुर औ भसुर ननद देवर से डेरती॥*
सब का पोषण करै सभन की सेज बिछावै।
सब को लेय सुताय, पास तब पिय के जावै॥
सूतै पिय के पास सभन को राखै राजी।
ऐसा भक्त जो होय ताहि की जीती बाजी॥
पलटू बोलै मीठे बचन भजन में है लौलीन।
पतिबरता को लच्छन सब से रहै अधीन॥[16]

* भसुर=जेठ

पलटू साहिब कहते हैं कि पतिव्रता की यही पहचान है कि वह पति के परिवार के सदस्यों पर हुक्म नहीं चलाती, उन पर रोब नहीं डालती बल्कि उनसे डरती है और उनकी आज्ञा का पालन करती हुई प्रेमपूर्वक उनकी सेवा करती है। इस बात का वह सदा ध्यान रखती है कि उनको सही खाना मिले जिससे उनका ठीक पोषण हो। उन सबके बिस्तर लगाकर और उन्हें सुलाकर ही वह सोने के लिए पति के पास जाती है। इस तरह वह सभी को संतुष्ट रखती है क्योंकि वे सब उसके पति को प्यारे हैं। सच्चा भक्त भी सबके साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार करता है। ऐसे ही भक्त की भक्ति सफल होती है। सच्चे भक्त की पहचान ही यह है कि वह सदा भक्ति में लीन रहता है और सबसे प्रेम तथा नम्रता से भरे मीठे वचन बोलता है; किसी का दिल नहीं दुखाता क्योंकि वह जानता है कि प्रभु को सब जीव प्यारे हैं।

अपनी ओर निभाइये हारि परै की जीति॥
हारि परै की जीति ताहि की लाज न कीजै।
कोटिन बहै बयारि कदम आगे को दीजै॥
तिल तिल लागै घाव खेत से टरना नाहीं।
गिरि गिरि उठै सम्हारि सोई है मरद सिपाही॥
लरि लीजै भरि पेट कानि कुल अपनि न लावै।*
उन की उनके हाथ बड़न से सब बनि आवै॥
पलटू सतगुरु नाम से साची कीजै प्रीति।
अपनी ओर निभाइये हारि परै की जीति॥[17]

आप फ़रमाते हैं कि तुम अपना काम करते जाओ, चाहे तुम्हें हार होती दिखाई दे या जीत। हार होती दिखे तो शर्म महसूस करने की बात नहीं है।

* कानि=लाज

सामने से हवा के चाहे कितने ही तेज़ झोंके क्यों न आ रहे हों यानी चाहे तुम्हें कितनी ही कठिनाइयों का सामना क्यों न करना पड़ रहा हो, तुम हमेशा आगे क़दम बढ़ाओ। चाहे क्षण-क्षण तुम्हारे शरीर में घाव लगें यानी कष्ट पर कष्ट आता चला जाए फिर भी रूहानियत का मैदान मत छोड़ो। बहादुर सिपाही वही होता है जो बार-बार गिरने पर भी सँभलकर उठ खड़ा हो। ख़ूब डटकर लड़ाई लड़ो, भक्तों के कुल को लाज न लगाओ। सतगुरु ने तुम्हें जो नाम दिया है उससे सच्चा प्यार करो, प्रेमपूर्वक लगन के साथ उसकी कमाई करो। प्रभु-प्राप्ति के लिए मन के साथ लड़ी जा रही लड़ाई में हार होती दिखे या जीत बस तुम लड़ते ही रहो, अपना फ़र्ज़ अदा करो। सतगुरु बहुत बड़ी हस्ती हैं, वे सब कुछ कर सकते हैं। इसलिए उनका काम उन पर छोड़ दो, तुम डटकर अपना काम करो।

15

सच्चा ज्ञान

संतों की दृष्टि में नाम का अभ्यास करके अंतर में प्राप्त किया गया रूहानी अनुभव अर्थात् सत्य का साक्षात दर्शन ही सच्चा ज्ञान होता है और वह सतगुरु की कृपा से प्राप्त होता है। धर्मग्रंथ, वेदांग, दर्शन-शास्त्र तथा अध्यात्म-ज्ञान की पुस्तकें पढ़ने से प्राप्त ज्ञान को हम शायद उस सच्चे ज्ञान की झलक या आभास तो कह सकते हैं, इससे अधिक कुछ नहीं। सच्चे ज्ञान की प्राप्ति के लिए संतों के सत्संग सुन लेना या उनकी लिखी पुस्तकें अथवा वाणी पढ़ लेना काफ़ी नहीं। इससे तो बस सच्चे ज्ञान के बारे में कुछ परिचय ही मिलता है। सच्चा ज्ञान तो सतगुरु के मार्गदर्शन में शब्द का अभ्यास करने से ही प्राप्त होता है। वह हमें कहीं बाहर से नहीं मिलता, हमारे अंदर से ही प्रकट होता है। पुस्तकों से प्राप्त होनेवाले ज्ञान को पलटू साहिब ने वाचक ज्ञान कहा है और इसे निम्नकोटि का ज्ञान बताया है। वाचक ज्ञान के भंडार परंतु रूहानियत से कोरे पंडितों पर उन्होंने करारा व्यंग्य किया है।

समुझे को समुझावैं हीरा आगे पोत॥*
हीरा आगे पोत ज्ञानी को मूढ़ बुझावै।
जहवाँ आँधी चलै बेना† कै बतास‡ चलावै॥
अटकर सेती अंध डिठियारे§ राह बतावै।

---

* **पोत**=काँच का दाना † **बेना**=बाँस का बना पंखा ‡ **बतास**=हवा
§ **डिठियारे**=दृष्टि वाले को

जैसे पंडित चतुर संत से बाद न आवै॥*
सुधा का पीवनहार ताहि को छाछ दिखावै।
जेकरे बाजै तूर† तहाँ का डफ्फ बजावै॥
पलटू दीपक का करै जहँ सूरज की जोत।
समुझे को समुझावैं हीरा आगे पोत॥[1]

पुस्तकों से प्राप्त बाहरी ज्ञान को अत्यंत तुच्छ बताते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि आंतरिक ज्ञान से रहित पंडित द्वारा अंतर में सत्य का दर्शन कर चुके सच्चे ज्ञानी को ज्ञान की बातें बताना ऐसी ही मूर्खता है जैसी हीरे के आगे काँच का एक छोटा-सा टुकड़ा रख देना या जहाँ आँधी चल रही हो, वहाँ पंखे से हवा करना। या फिर यों समझ लो कि यह एक अंधे के द्वारा किसी आँखों वाले को अटकलें लगाकर रास्ता सुझाने जैसी नादानी है। जब कोई चालाक पंडित किसी परम संत को ज्ञान देने का हठ करता है, तो ऐसा लगता है मानो अमृतपान करनेवाले को कोई छाछ के गुण समझाकर उसे पीने का लालच दे रहा हो। अगर कहीं नगाड़ा बज रहा हो तो वहाँ कोई डफ क्या बजाएगा? जहाँ सूरज का प्रकाश हो, वहाँ दीपक क्या करेगा?

जिस चोट लगी है ज्ञान की जी,
तिस को नहीं कुछ भावता है।
अठ सिधि नौ निधि भई आइ खड़ी,
तिस को वह दूरि बहावता है॥
संसार कंहै दै पीठि बैठा,
अपने मन को खूब रिझावता है।

* **बाद**=बाज़ † **तूर**=नगाड़ा

पलटू जहँ मन की गम्मि नहीं,*
तहाँ वह जोति जगावता है॥[2]

पलटू साहिब कहते हैं कि जिसके मन में सच्चा ज्ञान प्राप्त करने की प्रबल इच्छा जाग उठी हो, उसे संसार में कुछ भी अच्छा नहीं लगता। अगर चमत्कार करने की सभी शक्तियाँ और अपार संपत्ति भी हाथ जोड़े सेवा में हाज़िर हों तो वह उन्हें भगा देता है। वह संसार की ओर से विमुख रहता है और सच्चे ज्ञान की खोज में जुटा रहता है। उसी से वह अपने को ख़ूब रिझाए रखता है। मन की पहुँच से परे जब ज्योति-स्वरूप परमात्मा उसके अंदर प्रकट हो जाता है, तो उसकी आत्मा उसमें समाकर स्वयं भी परम-ज्योति बन जाती है।

ज्ञान का चाँदना भया आकास में,
मगन मन भया हम लखि पाया।
दृष्टि के खुले से नजर सब आयगा,
लखा संसार यह झूठि माया॥
जीव और ब्रह्म के भेद को बूझि कै,
सबद की साच टकसार† लाया।
दास पलटू कहै खोलि परदा दिया,
पैठि के भेद हम देखि आया॥[3]

आप कहते हैं कि मैंने अपने अंदर के आकाश में ज्ञान का प्रकाश प्रकट होते देखा, लेकिन उसे मैं तभी देख पाया जब मेरा मन एकाग्र होकर अभ्यास में मग्न हो गया। जब तुम्हारी भी अंदर की आँख खुल जाएगी तो तुम भी सब कुछ देख लोगे। मैंने तो देख ही लिया है कि यह संसार

* **गम्मि**=पहुँच † **टकसार**=वह स्थान जहाँ सिक्कों की ढलाई होती है।

झूठा है, माया है। मैं आत्मा और परमात्मा दोनों के शब्द-स्वरूप होने का रहस्य जानकर जीवों के उद्धार के लिए धुरधाम से शब्द की टकसाल ले आया हूँ जो आत्माओं में मिली सारी खोट निकालकर उन्हें खरा बना देता है। शब्द के अभ्यास ने मेरी आत्मा की आँखों से अज्ञान का परदा हटा दिया। मैंने अंतर में पहुँचकर सब कुछ देख लिया और सारा रहस्य जान लिया है।

पढ़ि पढ़ि क्या तुम कीन्हा पंडित, अपना रूप न चीन्हा॥ टेक॥
औरन को तुम ज्ञान बताओ, तुम को परै न बूझी।
जस मसालची सबहिं दिखावै, वा को परै न सूझी॥
अपनी खबर नहीं है तुमको, औरन को परमोधो।*
पढ़ना गुनना छोड़ि के पाँडे, अपनी काया सोधो॥
इन्द्रिन से आजिज† तुम रहते, इन्द्री मारि गिराओ।
माया खातिर बकि बकि मरते, मन अपनो समुझाओ॥
बुद्धि मँहै परबीन चतुर हौ, खाँड धूरि में सानौ।
पलटूदास कहै सुनु पाँडे, बचन हमारा मानौ॥[4]

पलटू साहिब पंडितों से पूछते हैं कि इतनी पुस्तकें पढ़-पढ़कर तुमने असल में पाया क्या? तुमने अपने अंदर जाकर अपना वास्तविक दिव्य स्वरूप तो पहचाना नहीं। दूसरों को आध्यात्मिक ज्ञान की बातें बताते हो, लेकिन ख़ुद यह अभी तक नहीं समझ पाए कि सच्चा आध्यात्मिक ज्ञान होता क्या है? मशालची दूसरों को तो प्रकाश दिखाता है, पर ख़ुद मशाल के नीचे अँधेरे में रहता है और रास्ता साफ़-साफ़ नहीं देख पाता। तुम्हारी हालत भी वैसी है। तुम्हें अपनी ख़बर तो है नहीं, दूसरों को उपदेश देकर समझाते हो। अरे भाई! पुस्तकें पढ़ने और उन पर विचार करना छोड़ो

* परमोधो=समझाते हो † आजिज=बेबस

और सच्चे ज्ञान की खोज अपने शरीर के अंदर जाकर करो, वह तुम्हें वहीं मिलेगा। तुम इंद्रियों के आगे बेबस हो, लाचार हो, जबकि चाहिए यह कि तुम उन्हें अपने बस में कर लो। पैसे की ख़ातिर तुम दूसरों को समझाने में लगे रहते हो, बोल-बोलकर बुरी तरह थक जाते हो। समझाना तो तुम्हें अपने मन को चाहिए। तुम्हारे पास बुद्धि की कोई कमी नहीं, पर उसे तुम निरर्थक कामों में लगा रहे हो। सुनो पंडित! मैं तुमसे जो भी कहता हूँ वह मान लो। तभी तुम्हें सच्चा ज्ञान प्राप्त होगा।

बाचक ज्ञान न नीका ज्ञानी, ज्यों कारिख का टीका॥ टेक॥
बिनु पूँजी को साहु कहावै, कौड़ी घर में नाहीं।
ज्यों चोकर कै लड्डू खावै, का सवाद तेहि माहीं॥
ज्यों सुवान कुछ देखि कै भूँकै, तिस ने तौ कछु पाई।
वा की भूँक सुने जो भूँकै, सो अहमक कहवाई॥
बातन सेती नहीं होइ राजा, नहिं बातन गढ़ टूटै।
मुलुक मँहै तब अमल होइगा, तीर तुपक† जब छूटै॥*
बातन से पकवान बनावै, पेट भरै नहिं कोई।
पलटूदास करै सोइ कहना, कहे सेती क्या होई॥[5]

सच्चे ज्ञान तथा वाचक ज्ञान का अंतर समझाते हुए आप कहते हैं कि वाचक ज्ञान यानी पढ़-सुनकर प्राप्त किए ज्ञान से कोई सच्चा ज्ञानी नहीं बन जाता। ऐसा ज्ञान तो केवल कालिख का टीका होता है क्योंकि यह अहंकार को जन्म देता है। ऐसा ज्ञान प्राप्त करके ज्ञानी कहलाना उसी तरह है जैसे घर में एक फूटी कौड़ी भी न होते हुए साहूकार कहलाना। चोकर के बने लड्डू खाकर कोई बूँदी के लड्डुओं का स्वाद कभी नहीं जान सकता। अगर कुत्ता कुछ देखकर भौंकता है तो उसे कुछ पता चला होता है,

* अमल=अधिकार † तुपक=छोटी तोप

जिसकी वह सूचना देता है और यह अच्छी बात है। लेकिन उसे भौंकते सुनकर जो भौंकने लग जाए, उसे तो मूर्ख ही कहा जाएगा। बड़ी-बड़ी बातें करने से कोई राजा नहीं बन जाता, न ही बातों से क़िला तोड़ा जा सकता है। शत्रु के राज्य पर तीर और तोपें चलाकर ही अधिकार जमाया जा सकता है। तरह-तरह के पकवान बनाने की बातें करके कोई अपना पेट नहीं भर सकता; पेट भरने के लिए तो खाने की चीज़ें बनाकर उन्हें खाने का कष्ट करना ही पड़ता है। इस तरह मुक्ति प्राप्त करने तथा प्रभु तक पहुँचने का मार्ग भी करनी का मार्ग है, कथनी का मार्ग नहीं। करनी करके यानी उस मार्ग पर चलकर स्वयं रूहानी अनुभव प्राप्त करके ही उस मार्ग के बारे में कुछ कहना उचित होता है; बिना करनी किए केवल पढ़-सुनकर कुछ कहने का क्या लाभ?

बिनु कागद बिनु अच्छरे बिनु मसि से लिखि देय॥*
बिनु मसि से लिखि देय सोई पंडित कहवावै।
बिनु रसना कहै बेद अकथ की कथा सुनावै॥
छुटी बात अस्थूल सूछम में मिला ठिकाना।
फिर पोथी क्या पढ़ै अच्छर में आप समाना॥
नि:अच्छर अब मिला अच्छर को क्या ले करना।
हीरा लागा हाथ पोत† की कौन सरहना‡॥
पलटू पंडित सोई है कलम हाथ नहिं लेय।
बिनु कागद बिनु अच्छरे बिनु मसि से लिखि दे॥[6]

पलटू साहिब हमें समझाते हैं कि प्रभु का धुनात्मक नाम काग़ज़, स्याही और अक्षरों के प्रयोग के बिना लिखा जाता है और पंडित यानी सच्चा ज्ञानी वही होता है जो जिज्ञासु की आत्मा पर बिना स्याही के नाम की

* मसि=स्याही † पोत=काँच का छोटा-सा दाना ‡ सरहना=प्रशंसा

छाप लगा देता है और जो बिना बोले उसे वह अकथ-कथा सुना देता है। उसकी संगति से जिज्ञासु की आत्मा स्थूल जगत से निकलकर सूक्ष्म मंडलों में पहुँच जाती है। जब उसकी आत्मा अविनाशी शब्द में समा जाती है तो उसे ग्रंथ-पोथियाँ पढ़ने की ज़रूरत नहीं रहती। जब धुनात्मक नाम से मेल हो गया तो ग्रंथ पढ़ने से क्या प्रयोजन? जब हीरा मिल गया तो काँच के दाने का क्या महत्त्व रह गया? सच्चा ज्ञानी वही होता है जो हाथ में लेखनी नहीं लेता और स्याही, काग़ज़ तथा वर्णों का प्रयोग किए बिना ही जिज्ञासु की आत्मा पर परमात्मा का सच्चा नाम लिख देता है, उसकी आत्मा को शब्द से जोड़ देता है।

16

अंतर्मुखी भक्ति तथा बहिर्मुखी भक्ति

पलटू साहिब ने सतगुरु की शरण में जाना और उनसे मिले नाम का अंतर्मुखी अभ्यास करना ही प्रभु की प्राप्ति तथा आवागमन से मुक्ति का एकमात्र साधन माना है। उन्होंने तीर्थयात्रा, धर्मग्रंथ और स्तोत्रों के पाठ करना या सुनना, व्रत रखना, मंत्रों के जाप, हठयोग, तपस्या आदि के रूप में प्रचलित तरह-तरह की बहिर्मुखी भक्ति जिसमें हमारा ध्यान बाहर की ओर रहता है, का खंडन किया है। ऐसा इसलिए किया गया है कि उस भक्ति से हमें मुक्ति नहीं मिल सकती, हमारा प्रभु से मिलाप नहीं हो सकता, भले ही उससे लाभ अवश्य हो जाता है, मन की कुछ शुद्धि होती है, अच्छे संस्कार बनते हैं और पुण्य भी मिलता है। यज्ञ, हवन, पूजा और संस्कार आदि कर्म-कांड भी एक तरह की बहिर्मुखी भक्ति ही है। हज, रोज़े आदि के बारे में भी उनका यही कहना है कि उनसे ख़ुदा से विसाल नहीं होता।

तिरथ में बहुत हम खोजा, उहाँ तो नाहिं कुछ पाया।
मूरति को पुजि पछिताने, नजर में नाहिं कुछ आया॥
मुए हम बर्त के करते, बेद को सुना चित लाई।
जोग औ जुगति करि थाके, सजन की खबर नहिं पाई॥
किया जप तप फेरि माला, खोजा षट दरस में जाई।
कोई ना भेद बतलावै, सबै सतसंग गुहराई॥*

* गुहराई=पुकारते हैं

परे जब संत के द्वारे, संत ने आप सब कीन्हा।
दास पलटू जभी पाया, गुरू के चरन चित लाया॥[1]

परमार्थी कहता है कि मैंने तीर्थों में बहुत खोजा पर प्रभु वहाँ मुझे मिला नहीं। मूर्तिपूजा भी मैंने बहुत की लेकिन पछतावा ही हाथ लगा, प्रभु का दर्शन नहीं हुआ। व्रत धारण करते-करते मैं मौत के किनारे पहुँच गया, वेदपाठ मैंने बहुत ध्यान से सुना और हठयोग तथा अन्य कई उपाय करते-करते मैं थक गया, पर मुझे प्यारे प्रभु का कुछ पता नहीं चला। मंत्रों का जाप भी किया, माला भी बहुत फेरी, तपस्या भी की, छः दर्शनों में भी उसकी खोज कर ली, परंतु उनमें से किसी ने भी यह भेद नहीं खोला कि उसे कैसे पाया जा सकता है। तरह-तरह की बाहरी भक्ति से निराश हुए सभी सच्चे जिज्ञासु आख़िरकार प्रभु के आगे संतों की संगति के लिए ही प्रार्थना करते हैं। जब मैं सतगुरु के द्वार पर आया तो उन्होंने स्वयं ही सब कुछ कर दिया। मुझे प्रभु-प्राप्ति तब हुई जब मैंने अपना मन सतगुरु के चरणों की भक्ति में लगा दिया।

सात पुरी हम देखिया देखे चारो धाम॥
देखे चारो धाम सबन माँ पाथर पानी।
करमन के बसि पड़े मुक्ति की राह भुलानी॥
चलत चलत पग थके छीन भइ अपनी काया।
काम क्रोध नहिं मिटे बैठ कर बहुत नहाया॥
ऊपर डाला धोय मैल दिल बीच समाना।
पाथर में गयो भूल संत का मरम न जाना॥
पलटू नाहक पचि मुए सन्तन में है नाम।
सात पुरी हम देखिया देखे चारो धाम॥[2]

पलटू साहिब कहते हैं कि उन्होंने सातों पवित्र नगरियों तथा चारों प्रमुख तीर्थ स्थानों की यात्रा करके देख ली, परंतु सब जगह केवल पत्थर की

बनी देव-मूर्तियाँ और पवित्र माना जानेवाला जल ही हाथ लगा, सार कुछ नहीं मिला। वहाँ वे पुण्यकर्म करने में ही लगे रहे और मुक्ति के मार्ग से भटक गए। वहाँ के जल में स्नान और वहाँ मूर्तिपूजा करने से कोई आध्यात्मिक लाभ न हुआ। चलते-चलते पैर थक गए, शरीर दुबला हो गया। तीर्थों के जल में ख़ूब स्नान किया, परंतु काम और क्रोध नहीं मिटे। बाहर से तो उन्होंने अपने आप को अच्छी तरह धो लिया, पर मैल तो मन के अंदर समाया हुआ था। वे भ्रमवश पत्थर की मूर्तियों की पूजा में लगे रहे; लेकिन उस राज़ को जानने की कोशिश नहीं की जो संत बताते हैं। पलटू साहिब अपना अनुभव बताते हुए कहते हैं कि मैंने सात पुरियों और चार धामों की लंबी यात्रा करके देख ली, कहीं पर भी मुक्ति का सच्चा साधन नहीं मिला। मन को निर्मल करनेवाला और आवागमन से मुक्ति दिलानेवाला नाम केवल संतों के पास होता है।

जियतै देइ गिरास ना मुए परावै पिंड॥*
मुए परावै पिंड कौन है खावनहारो।
राँध† परोसिनि नेवति‡ खवावै ससुरा सारो॥
पितरन के मुँह छार धोख दै लेइ बड़ाई।
मुए बैल को घास देहु कहु कैसे खाई॥
अपने परुसा§ लेइ पित्र को छोड़ै पानी।
करै पित्र से भूत बड़ो मूरख अज्ञानी॥
पलटू पुरषा मुक्ति में करत भंड औ भिंड¶।
जियतै देइ गिरास ना मुए परावै पिंड॥[3]

* **परावै पिंड**=पिंडदान करता है † **राँध**=निकट ‡ **नेवति**=न्योता देता है
§ **परुसा**=परोसा हुआ ¶ **भंड औ भिंड**=दिखावा और धोखा

श्राद्धकर्म के बारे में पलटू साहिब कहते हैं कि लोग घर के बुज़ुर्ग को उसके जीते-जी तो भोजन का एक ग्रास भी नहीं देते और उसके मर जाने पर हर वर्ष उसका श्राद्ध करते हुए उसे पिंड देते हैं। भला तब उस पिंड को खानेवाला कौन होता है? श्राद्ध करनेवाला अपने पास-पड़ोसियों को बुलाता है और वह उन सबको तो खिलाता है परंतु पितरों के मुँह कुछ नहीं पहुँचता, जबकि परिवार को उनका बढ़िया श्राद्ध करने का यश अवश्य मिल जाता है। भला मरे हुए बैल को घास दोगे तो वह खाएगा कैसे? परिवार के सभी सदस्य अपने लिए परोसा गया स्वादिष्ठ भोजन बड़े चाव से जी भरकर खाते हैं, लेकिन जिस बुज़ुर्ग का श्राद्ध किया जाता है, उसे तो केवल पिंड-पानी देने की रस्म पूरी की जाती है। इतना ही नहीं, बुज़ुर्ग के मरने के बाद उसे मूर्खतावश कुछ दिनों के लिए भूतों की श्रेणी में गिना जाता है और उस दशा से उसे मुक्ति दिलाने के लिए भी इसी अनुष्ठान का ढोंग रचा जाता है। कैसी विडंबना है यह! बुज़ुर्ग को उसके जीवनकाल में तो खाने को भोजन दिया नहीं जाता और उसके मर जाने पर उसे बार-बार पिंड अर्पित किए जाते हैं।

पलटू साहिब का यह सब कहने से अभिप्राय यह है कि प्रेत योनि और नरक से बचने का अचूक उपाय जीव की अपनी की हुई नाम भक्ति है।

घर में मेवा छोड़ि कै टेंटी बीनन जाय॥*
टेंटी बीनन जाय जानै येही है मेवा।
तीरथ मँहै नहाय करै मूरति की सेवा॥
छोड़ि बोलता ब्रह्म करै पथरे की पूजा।
खसम न आवै पास नारि जब खोजै दूजा॥
सूखा हाड़ चबाय स्वान मुख आवै लोहू।

* **टेंटी**=काँटेदार करील का फल

रहै हाड़ के भोर भेद ना जानै वोहू॥*
पलटू आगे धरा है आप से नाहीं खाय।
घर में मेवा छोड़ि कै टेंटी बीनन जाय॥[4]

मनुष्य को शरीर के अंदर ही विद्यमान परमात्मा की भक्ति करने के बजाय मंदिर में जाकर मूर्तियों की पूजा करता देखकर शोक प्रकट करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि वह तो मानों घर में पड़ा बढ़िया फल छोड़कर जंगली घटिया-से पेड़ का फल लाने जाता है और उसे ही बढ़िया फल समझता है। वह तीर्थों के जल में स्नान करता है और मूर्ति की पूजा करता है। शब्द के रूप में शरीर के अंदर ही बोल रहे परमात्मा की भक्ति न करके वह बाहर पड़े बेज़ुबान पत्थर की पूजा करता है। स्त्री जब परपुरुष के पीछे भागने लग जाती है तो पति उसके पास नहीं आता। इसी तरह आत्मा जब देवी-देवताओं की भक्ति करने लग जाती है तो परमात्मा उससे दूर रहता है। कुत्ता जब सूखी हड्डी चबाता है तो अपने ही मुँह से निकलने वाले ख़ून को भ्रमवश हड्डी में से निकलता हुआ समझकर बड़े स्वाद से चाटता है। बाहरी भक्ति करनेवाला जिज्ञासु भी उस कुत्ते की तरह भ्रम का शिकार होता है; सत्य क्या है, इस भेद से वह अनजान रहता है। उत्तम फल उसके आगे रखा होता है और उसको खाने से भी उसे कोई रोकता नहीं, लेकिन वह मूर्ख ख़ुद ही उसे नहीं खाता। घर के बढ़िया फल को छोड़ वह बाहर घटिया फल चुनने जाता है।

तुरुक लै मुर्दा को कब्र में गाड़ते,हिन्दू लै आग के बीच जारैं।
पूरब वै गये हैं वे पच्छूँ को, दोऊ बेकूफ ह्वै खाक टारैं॥
वे पूजैं पत्थर को कबर वे पूजते, भटक कै मुए दै सीस मारैं।
दास पलटू कहै साहिब है आप में, आपनी समझ बिनु दोऊ हारै॥[5]

* भोर=भ्रम

पलटू साहिब कहते हैं कि मुसलमान शव को क़ब्र में गाड़ते हैं और हिंदू आग में जलाते हैं। हिंदू पूर्व की तरफ़ जगन्नाथ पुरी की यात्रा करते हैं और मुसलमान पश्चिम की तरफ़ मक्का का हज। यह तो ख़ाक छानने जैसी बात है, अक़्लमंदी का काम नहीं। हिंदू पत्थर की बनी मूर्तियों को पूजते हैं और मुसलमान अपने मज़ारों को। दोनों को यह समझ नहीं है कि वह कुलमालिक परमात्मा उनके अपने अंदर है, दोनों ही पूजा के लिए जगह-जगह भटकते फिरते हैं और दोनों का किया-कराया बेकार जाता है।

आपके कहने का भाव है कि हिंदुओं और मुसलमानों के अपने-अपने धार्मिक नियम तथा रीति-रिवाज हैं, पर उनका आत्मा की सद्गति, प्रभु की प्राप्ति से कोई संबंध नहीं है। प्रभु का निवास तो मनुष्य का अपना शरीर ही है, इसलिए उसकी प्राप्ति उसे वहीं खोजने से हो सकती है।

तीसो रोजा किया फिरे सब भटकि कै।
आठो पहर निमाज मुए सिर पटकि कै॥
मक्के में भी गये कबर में खाक है।
अरे हाँ पलटू एक नबी का नाम सदा वह पाक है॥*[6]

मुसलमानों को बाहरी भक्ति के बजाय मुर्शिद के बख़्शे नाम की कमाई करने का उपदेश देते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि असल अहमियत उस पाक कलमे अर्थात् नाम की है। ख़ुदा से तुम्हारा विसाल तो तभी होगा जब कोई मुर्शिद तुम्हें नाम की बख़्शिश कर देगा, उस नाम की बख़्शिश जो पवित्र था, पवित्र है और पवित्र रहेगा।

* **नबी**=भाव संत-सतगुरु

संसार सुख छोड़ि कै भया फक्कीर तू,
भया फक्कीर क्या स्वाद पाया।
पेट छूटा नहीं भीख क्या माँगता,
पाँच पच्चीस सँग लगी माया॥
दारा एक तुम तजी घर बीच में,
पाँच पच्चीस को संग लाया।
दास पलटू कहै क्या नफा तोहि मिला,
राम का नाम जो नाहिं आया॥[7]

घरबार छोड़कर साधु बन गए व्यक्ति से पलटू साहिब पूछते हैं कि घर का आराम छोड़कर सुनसान जगह जा बसने और फ़क़ीर का बाना पहन लेने से तुम्हें क्या आनंद मिला? आप उसे समझाते हैं कि तुम्हारा पेट अब भी तुम्हारे साथ है और उसके लिए तुम्हें भीख माँगनी पड़ती है जो शर्म की बात है। एक स्त्री यानी पत्नी को तो पीछे घर में छोड़ आए, पर पाँच इंद्रियाँ, पच्चीस प्रकृतियाँ और माया अब भी तुम्हारा साथ नहीं छोड़ रहीं, पर देह के रूप में तीस को साथ ले आए। कैसी फ़क़ीरी है यह? संसार चाहे त्याग दिया हो, पर देह की ज़रूरतें तो पूरी करनी ही पड़ती हैं। कहने को तो फ़क़ीर बन गए, पर अंतर में प्रभु का नाम प्रकट नहीं हुआ। फिर फ़क़ीर बनने का क्या लाभ हुआ?

वह दरबारा भारा साधो, हिन्दू मुसलमान से न्यारा। टेक।
मक्के रहे न ठाकुरद्वारा, है सब में सब खोजनहारा।
नहिं दरगाह न तीरथ संगा, गंगा नीर न तुलसी भंगा।
सालिगराम न महजिद कोई, उहाँ जनेव न सुन्नत होई।
पढ़ै निवाज न लावै पूजा, पंडित काजी बसै न दूजा।

फेरै न तसबी जपै न माला, ना मुरदा ना करै हलाला।*
मारै न सुवर जिबहे ना† गाई, कलमा भजन न राम खुदाई।
एकादसी न रोजा करई, डंडवत करै न सिरदा (सिजदा) परई।
पलटूदास दुई की किस्ती, दोजख नर्क बैकुंठ न भिस्ती।[8]

जिज्ञासु को आदरपूर्वक 'साधो' कहकर पलटू साहिब उसे समझा रहे हैं कि कुलमालिक के ऊँचे दरबार में हिंदुओं और मुसलमानों में फ़र्क़ नहीं किया जाता। वह कुलमालिक केवल हिंदुओं का नहीं है और न केवल मुसलमानों का। न वह मक्के में रहता है और न किसी मंदिर में; वह तो सबके अंदर रहता है, फिर भी सब उसकी खोज में इधर-उधर भटक रहे हैं। न वह तो फ़क़ीरों के मज़ारों पर मिलता है और न हिंदुओं के तीर्थों पर या गंगाजल में। तुलसी की पूजा करने या भाँग के नशे में मस्त होने से भी भक्त का उससे मेल नहीं होता। प्रभु के धाम में शालग्राम यानी किसी देवता की मूर्ति नहीं और न कोई मस्जिद, वहाँ जनेऊ या सुन्नत की रस्म भी नहीं है। वहाँ प्रवेश पाने के लिए न तो मुसलमानों को नमाज़ पढ़नी पड़ती है और न हिंदुओं को पूजा करनी पड़ती है। वहाँ न पंडितों का वास है, न क़ाज़ियों का और न इन जैसे धर्म के अन्य ठेकेदारों का। वहाँ पहुँचने के लिए हिंदुओं को माला और मुसलमानों को तस्बीह फेरने की ज़रूरत नहीं। हिंदुओं को झटका और मुसलमानों को हलाल करने की तथा हिंदुओं को सूअर और मुसलमानों को गाय की हत्या करने की ज़रूरत नहीं। यह समझना भारी अज्ञानता है कि कलमा पढ़ने या राम-राम कहने से प्रभु से मिलाप हो जायेगा। हिंदुओं को एकादशी का व्रत नहीं रखना पड़ता, किसी देवी-देवता को दंडवत प्रणाम नहीं करना पड़ता। मुसलमानों को रोज़ा नहीं रखना पड़ता, कभी कहीं सिजदा नहीं करना पड़ता। पापों का भंडार बहुत बड़ा हो तो यह सब कुछ करने से भी जीव दोज़ख़ यानी

---

* **तसबी**=माला † **जिबहे ना**=मारता नहीं

नरक में जाने से नहीं बच सकता; उसे स्वर्ग नहीं मिल सकता, बहिश्त नसीब नहीं हो सकता।

पलटू साहिब के कहने का भाव यह है कि धर्मों के भेदभाव द्वैत के अंतर्गत हैं। ये भेदभाव उस पूर्ण अद्वैत के धाम तक पहुँचने में सहायता नहीं करते। आप उपदेश देते हैं कि परमात्मा मनुष्य के अंदर है और केवल ध्यान को अंतर्मुख करके ही उसके साथ मिलाप किया जा सकता है।

लहँगा परिगा दाग फूहरि साबुन से धोवै॥*
फूहरि धोवै दाग छुटै ना और बढ़ावै।
ज्यों ज्यों मलै बनाय सारे लहँगा फैलावै॥
गाफिल में गइ सोय खसम को दोष लगावै।
ऐसी फूहरि नारि आप को नाहिं बचावै॥
धोबी को नहिं देइ घरहिं में आपु छुड़ावै।
इक बेर† दिहिसि‡ निखारि लाज से नाहिं दिखावै॥
पलटू परदा खोलि आपनो घर घर रोवै।
लहँगा परिगा दाग फूहरि साबुन से धोवै॥[9]

पलटू साहिब कहते हैं कि अगर लहँगे पर दाग़ पड़ जाए तो गँवार स्त्री उसे ख़ुद ही साबुन से धोने का प्रयत्न करती है और वह मिटता नहीं। दाग़ छुड़ाने के लिए वह लहँगे को जितना ज़्यादा मलती है, दाग़ उतना ही ज़्यादा फैलता जाता है। लापरवाही में वह कपड़ा धोबी को तो देती नहीं, मगर यह कहकर दोष पति के सिर मढ़ देती है कि अच्छा साबुन लाकर नहीं दिया। इसी तरह मूर्ख जीवात्मा अपने पापों को बहिर्मुखी भक्ति से, व्रत, तीर्थयात्रा, दान-पुण्य, पूजापाठ आदि से मिटाने की कोशिश करती है, जिसका परिणाम यह होता है कि पाप तो मिटते नहीं, मगर पाप की

* फूहरि=गँवार स्त्री † बेर=बार ‡ दिहिसि=देगी

जड़ अहंकार बढ़ जाता है। वह ख़ुद तो लापरवाह रहती है यानी अपने पापों को धोने के लिए किसी संत-सतगुरु की शरण नहीं लेती, मगर दोष अपने पति परमात्मा को देती है कि मेरे इतनी भक्ति करने पर भी मेरे दुःख कम नहीं करता। ऐसी मूर्ख स्त्री अपनी लाज नहीं बचा सकती। गँवार स्त्री अगर शर्म छोड़कर कपड़ा धोबी को दे दे तो धोबी एक ही बार में सब दाग़ निकाल दे। इसी तरह मूर्ख जीवात्मा भी यदि लोकलाज छोड़कर किसी संत-सतगुरु की शरण ले ले तो वह एक ही जन्म में उसके सब पाप-कर्मों को धोकर उसे परम निर्मल बना सकते हैं। गँवार स्त्री की तरह मूर्ख जीवात्मा भी समझ न होने के कारण अपनी मूर्खता को परदे में नहीं रखती बल्कि हर किसी के आगे अपना दुखड़ा रोती फिरती है।

सूधी मेरी चाल है सब को लागै टेढ़॥
सब को लागै टेढ़ बूझ बिनु कौन बतावै।
आपु चलै सब टेढ़ टेढ़ हमको गोहरावै॥
हम रहते निहकरम नाहिं करमन की आसा।
तुम्हरे तीरथ बरत बहुरि मूरति बिस्वासा॥
हमरे केवल राम आन को नाहीं जानों।
तुम्हरे देवता पित्र भूत की पूजा मानो॥
पलटू उलटा लोग सब नाहक करते खेढ़।
सूधी मेरी चाल है सब को लागै टेढ़॥[10]

पलटू साहिब कहते हैं कि मैं तो सीधी चाल चल रहा हूँ, लेकिन दूसरे सब लोगों को यह चाल टेढ़ी लगती है। यही सीधी चाल है, यह बात उन्हें कोई समझदार आदमी ही बता सकता है। टेढ़ा तो वे सब ख़ुद चल रहे हैं, लेकिन चिल्ला-चिल्लाकर कहते यह हैं कि पलटू टेढ़ा चल रहा है। मुझे उनसे इतना ही कहना है कि मैं कर्मों के फल की आशा नहीं रखता। निष्काम रहकर ही सब कर्म करता हूँ, इसलिए मैं कर्मों से लिप्त

नहीं होता। तुम तीर्थयात्रा करते हो, व्रत रखते हो और बड़े विश्वास के साथ मूर्तियों की पूजा करते हो। देवताओं की ही नहीं बल्कि पितरों और भूत-प्रेतों की पूजा में भी विश्वास रखते हो। मैं तो केवल परमात्मा की भक्ति करता हूँ, उसके अलावा किसी दूसरे की नहीं। बहिर्मुखी भक्ति में लगे तुम सब लोग ख़ुद ही उलटी चाल चल रहे हो, मेरे साथ तुम बेवजह झगड़ा करते हो। मेरी चाल तो एकदम सीधी है; तुम सबको टेढ़ी लगती है तो इसमें मेरा क्या दोष है?

आपके कहने का भाव है कि संतों के मार्ग पर चलना यानी अंतर में शब्द का अभ्यास करना ही परमात्मा की सच्ची भक्ति है, लेकिन बहिर्मुखी भक्ति के चक्कर में पड़े लोग यह स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं।

17

पाखंडी साधु

भक्ति का दिखावा करनेवाले साधुओं और फ़क़ीरों पर पलटू साहिब ने तीखे व्यंग्य किए हैं और इस बात पर खेद प्रकट किया है कि लोग उन पर बहुत जल्दी विश्वास कर लेते हैं। आपने यह भी समझाया है कि सच्चा साधु या फ़क़ीर बनने के लिए पहले किसी संत-सतगुरु का शिष्य बनना ज़रूरी है।

हवा हिरिस पलटू लगी नाहक भये फकीर॥*
नाहक भये फकीर पीर की सेवा नाहीं।
अपने मुँह से बड़े कहावैं सब से जाहीं॥
धमधूसर† होइ रहे बात में सब से लड़ते।
लाम काफ‡ वो कहैं इमान को नाहीं डरते॥
हमहीं हैं दुरवेस और ना दूसर कोई।
सब को देहिं मुराद यकीन से ओकरे§ होई॥
मन मुरीद होवै नहीं आप कहावैं पीर।
हवा हिरिस पलटू लगी नाहक भये फकीर॥[1]

पलटू साहिब कहते हैं कि जब इच्छाएँ और तृष्णाएँ पहले की तरह ही बनी हुई हैं तो फ़क़ीर का भेस बनाना व्यर्थ ही हुआ। जिन्होंने किसी

---

* **हवा**=इच्छा † **धमधूसर**=मोटा और बेडौल ‡ **लाम काफ**=गाली-गलौज
§ **ओकरे**=उसके

सतगुरु की सेवा-भक्ति नहीं की यानी उससे नाम का भेद लेकर उसकी कमाई नहीं की वे सही माने में फ़क़ीर बन ही नहीं सकते। वे लोगों के पास अपनी बड़ाई कर-कर के अपने को बड़ा कहलवाते हैं। लोगों का दिया भोजन खा-खाकर वे मोटे और बेडौल हो गए हैं। वे बात-बात पर सबसे लड़ते हैं और गाली-गलौज करते हैं। धर्म के विरुद्ध आचरण करने में उन्हें कोई डर नहीं लगता। वे समझते हैं कि सिर्फ़ वे ही सच्चे फ़क़ीर हैं, कोई और नहीं। हर किसी को वे उनकी इच्छा पूरी करने का भरोसा दिलाते हैं और लोग उन पर विश्वास करके उन्हें अपना मानने लगते हैं, उनके श्रद्धालु बन जाते हैं। जबकि उन फ़क़ीरों ने ख़ुद कभी किसी सतगुरु का शिष्य बनना स्वीकार नहीं किया, उनकी इच्छाएँ और तृष्णाएँ मिटी नहीं फिर भी वे अपने को पीर कहलवाने लग गए हैं। फ़ुज़ूल है ऐसी फ़क़ीरी।

भरि भरि पेट खिलाइये तब रीझैगा भेष॥
तब रीझैगा भेष जगत में करै बड़ाई।
लाख भगत जो होय खाये बिनु निंदत जाई॥
रहनि लखै नहिं कोय नाहिं टकसार बिचारै।*
भाव भक्ति ना लखै खोजत सब फिरै अहारै॥
भेष में नाहिं बिबेक भये दस बीस बिबेकी।
कोटिन में दस बीस सन्त तिन रहनी देखी॥
पलटू रहै अपान में आन में मारै मेख†।
भरि भरि पेट खिलाइये तब रीझैगा भेष॥[2]

पलटू साहिब हमें समझाते हैं कि पाखंडी साधुओं को अगर भरपेट खिलाओगे, तभी वे प्रसन्न होंगे और फिर सब जगह तुम्हारी प्रशंसा करेंगे। चाहे कोई

* **टकसार**=खरी वस्तु † **मारै मेख**=बाधा डालता है

उनका कितना ही बड़ा भगत क्यों न हो, चाहे वह उनसे कितना ही प्रेम क्यों न करता हो, अगर उस भगत ने अच्छी तरह खिलाया-पिलाया नहीं तो वे उसकी निंदा ही करते रहेंगे। उनमें से कोई भी अपने किसी श्रद्धालु का आचरण और व्यवहार नहीं देखता, उसकी भक्ति और प्रेम को नहीं देखता, यह विचार नहीं करता कि यह व्यक्ति कितना निर्मल, कितना खरा जीवन बिता रहा है। वे सब तो केवल अच्छा भोजन ढूँढ़ते फिरते हैं। उनके वेश को देखकर यह मत समझना कि वे सत्य-असत्य की पहचान रखते हैं। ऐसे पारखी तो तुम्हें बीसियों मिल जाएँगे। करोड़ों में कोई इने-गिने ही ऐसे उच्च कोटि के महात्मा होते हैं जो लोगों की रहनी को महत्त्व देते हैं। बनावटी साधु अपने तक ही सीमित रहते हैं और केवल अपना उल्लू सीधा करते हैं। लोगों को गुमराह करके वे दूसरों के काम में या प्रभु की खोज में तो बाधा ही डालते हैं। वे प्रसन्न तभी होते हैं जब उन्हें पेट भरकर खाने को मिल जाए।

लाखों मौनी फिरैं लाखों बाघम्बरी।*
उर्धमुखी† औ नखी लाखों लोहलंगरी‡॥
लाखों जल में पड़े (लाखों) धूरि को छानते।
अरे हाँ पलटू जा में राजी राम सो कोउ नहिं जानते॥[3]

पाखंडी साधुओं की कोई गिनती ही नहीं है, यह बताते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि ऐसे लाखों साधु घूमते दिखाई देते हैं जिन्होंने मौन धारण कर रखा है या बाघ की खाल ओढ़ रखी है। ऐसे भी लाखों हैं जो अपना मुँह सदा ऊपर की ओर किए रखते हैं या जिन्होंने नाख़ून बहुत बढ़ा रखे हैं। कमर में लोहे की भारी ज़ंजीर बाँधे रखनेवाले साधु भी बहुत बड़ी संख्या में हैं। पानी में पड़े रहनेवाले साधुओं की संख्या भी लाखों में है और

* **बाघम्बरी**=बाघ की खाल धारण करनेवाला
† **उर्धमुखी**=वह जो ऊपर की ओर मुख किए रखे
‡ **लोहलंगरी**=वह जो कमर में लोहे की मोटी और भारी ज़ंजीर बाँधे रखे

अन्य क्रियाओं में लगे साधु भी बहुत हैं जो मारे-मारे फिरते हैं। परमात्मा किस भक्ति से प्रसन्न होता है, इस बात का ज्ञान इन लोगों में से किसी को भी नहीं है।

पलटू कीन्हो दंडवत, वै बोले कछु नाहिं।
भगत जो बनै महंथ से, नरक परै को जाहिं॥[4]

अहंकार से फूले और भक्ति का दिखावा करनेवाले महंतों की हालत बयान करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि वे लोगों के साष्टांग प्रणाम की भी उपेक्षा कर देते हैं, उसका उत्तर नहीं देते और कहते अपने को भक्त हैं। ऐसे अहंकारी भक्त तो जाकर नरक में गिरेंगे।

गोड़ धरावैं संत से, माया के महमंत†।*
पलटू बिना बिबेक के, नरकै गये महंत॥[5]

महंतों पर एक और व्यंग्य करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि उनकी महिमा का आधार उनकी विशाल धन-संपत्ति होती है, रूहानी पहुँच नहीं। वे चाहते हैं कि संत भी उनके चरण छुएँ। उन्हें सत्य-असत्य की पहचान नहीं होती, इसलिए उन्हें नरक ही मिलता है, परमधाम नहीं।

झूठा सब संसार झूठै पतियात हैं‡।
दुइ झूठे इक ठौर नरक में जात हैं॥

---

* **गोड़ धरावैं**=पाँव छुआते हैं † **महमंत**=महान
‡ **पतियात हैं**=विश्वास कर लेते हैं

जहँवा सुनैं पखंड तहाँ सब धावते।
अरे हाँ पलटू संतन के रे पास कोऊ नहिं आवते॥[6]

लोगों को जहाँ भी किसी पाखंडी साधु के होने की ख़बर मिलती है, भागे-भागे वहाँ पहुँच जाते हैं। बड़े दु:ख की बात है कि वे उन संतों के पास नहीं जाते जो सच्चे महात्मा होते हैं और कल्याण का सच्चा मार्ग दिखाते हैं।

आपके कहने का भाव है कि इस मिथ्या मायामय संसार में उलझे हुए लोग अपनी सांसारिक आशाओं-तृष्णाओं की पूर्ति के लिए पाखंडी साधुओं पर भरोसा कर लेते हैं। इसके फलस्वरूप पाखंडी साधुओं के साथ उन्हें भी नरक में जाना पड़ता है।

18

मन को इधर से हटाना, उधर लगाना

पलटू साहिब बार-बार हमें ध्यान दिलाते हैं कि यह संसार सारहीन है। आप हमें समझाते हैं कि संसार के सब संबंधी, इसके सब पदार्थ और उनसे मिलनेवाले सभी सुख नाशवान हैं। इन सबका संबंध हमारे शरीर से है जो स्वयं क्षणभंगुर है, किसी भी समय अचानक नष्ट हो सकता है। मृत्यु का आना निश्चित है, उसके पंजे से कोई भी बच नहीं सकता। मृत्यु तो देवी-देवताओं को भी नहीं छोड़ती, मनुष्य बेचारा किस गिनती में है? वृद्धों, गरीबों का शोषण करनेवालों तथा भोग-विलास और ऐशो-आराम का जीवन बिता रहे लोगों को वे मृत्यु के अटल होने की याद बार-बार दिलाते हैं।

मनुष्य को संसार की नश्वरता का ध्यान दिलाने में पलटू साहिब का उद्देश्य उसे संसार की ओर से हटाना तथा नाम भक्ति में लगाना है ताकि वह जन्म-मरण के चक्कर से छूटकर प्रभु को पा सके और अपना जन्म सफल कर सके। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए उन्होंने अपनी वाणी में कहीं अलग-अलग तो कहीं एक साथ चेतावनी तथा प्रेरणा दोनों का प्रयोग किया है। यह बात उन्होंने हमें बड़े प्रभावशाली ढंग से समझाई है कि नाम मार्ग करनी का मार्ग है, प्रभु तक पहुँचने के लिए जीव को साधना तो करनी ही पड़ती है। सतगुरु से नाम की अनमोल दात पाकर हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से काम नहीं बनता।

हाथी घोड़ा खाक है कहै सुनै सो खाक॥
कहै सुनै सो खाक खाक है मुलुक खजाना।

जोरू बेटा खाक खाक जो साचै माना॥
महल अटारी खाक खाक है बाग बगैचा।
सेत सपेदी खाक खाक है हुक्का नैचा† ॥*
साल दुसाला खाक खाक मोतिन कै माला।
नौबतखाना‡ खाक खाक है ससुरा साला॥
पलटू नाम खुदाय का यही सदा है पाक।
हाथी घोड़ा खाक है कहै सुनै सो खाक॥[1]

पलटू साहिब कहते हैं कि हाथी, घोड़े आदि राजसी ठाट-बाट का सामान, राज्य और ख़ज़ाना ये सब मिट्टी के तुल्य हैं। इनका कोई महत्त्व नहीं है। इनके महत्त्व के बारे में लोग जो कुछ कहते-सुनते हैं, वह सब भी बेमतलब होता है। बड़े-बड़े महल और अटारियाँ, बाग़-बग़ीचे, चाँदी के चमकदार गहने, बढ़िया नैचे वाले क़ीमती हुक्के, बहुमूल्य शाल-दुशाले, मोतियों की मालाएँ, नौबतख़ाने वग़ैरह किसी काम के नहीं। पत्नी, संतान तथा अन्य संबंधी भी जीव के लिए कोई महत्त्व नहीं रखते। जो इन्हें महत्त्व देता है, वह महामूर्ख है। मनुष्य के लिए कमाने की चीज़ केवल प्रभु का धुनात्मक नाम है जो पवित्र था, पवित्र है और पवित्र रहेगा। संसार के अन्य सब पदार्थ तो मात्र गंदगी हैं।

आया मूठी बाँधि पसारे जायगा।
छूछा§ आवत जात मार तू खायगा॥
किते बिकरमाजीत साका-बाँधि¶ मरि गये।
अरे हाँ पलटू राम नाम है सार सँदेसा कहि गये॥[2]

---

* **सेत**=चाँदी † **नैचा**=एक में बँधी हुक्के की दोनों नलियाँ
‡ **नौबतखाना**=नगाड़ा रखने का स्थान § **छूछा**=ख़ाली
¶ **साका-बाँधि**=शकों को बंदी बना लेनेवाला

पलटू साहिब ने हमारा ध्यान इस कड़वी सच्चाई की ओर दिलाया है कि हमारी मृत्यु निश्चित है। आप कहते हैं कि तुम जब संसार में आए थे तो तुम्हारी मुट्ठी बंद थी और जब यहाँ से जाओगे तब भी तुम्हारे हाथ ख़ाली होंगे। तुम बार-बार इसी तरह यहाँ आते रहोगे और यहाँ से जाते रहोगे और जब तक यहाँ रहोगे, दुःख भोगते रहोगे। तुम भला किस गिनती में हो? शकों को पराजित करनेवाले विक्रमादित्य जैसे कितने ही महाप्रतापी राजा भी मौत के मुँह में जाने से नहीं बचे। यहाँ से ख़ाली हाथ जाते हुए वे हमारे लिए यही संदेश छोड़ गए कि मनुष्य के लिए केवल प्रभु का नाम ही सार पदार्थ है, और सब कुछ सारहीन है।

भाव यह है कि मनुष्य जन्म में प्राप्त करने योग्य पदार्थ केवल नाम है जो शरीर छोड़ देने के बाद आत्मा के साथ जाता है, बाक़ी सब कुछ तो यहीं रह जाता है।

देंह और गेह परिवार को देखि कै, माया के जोर में फिरै फूला।
जानता सदा दिन ऐसे ही जायँगे, सुन्दरी संग सुखपाल झूला॥
चारि जून खात है बैठि कै खुसी से, बहुत मुटाई कै भया थूला†।*
सेज-बँद‡ बाँधि कै पान को चाभते, रैन दिन करत है दूध कूला॥
जानता अमर हूँ मरूँगा अब नहीं, बाघ की रौस जा काल हूला§।
दास पलटू कहै नाम को याद करु, ख्वाब की लहरि में काह भूला॥[3]

भोग-विलास में जीवन गँवा रहे लोगों को समझाते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि तुम्हें अपने स्वस्थ सुंदर शरीर, शानदार मकान, सुखी परिवार तथा विशाल धन-संपत्ति पर बहुत अभिमान है। तुम सुंदर स्त्री के संग पालकी में बैठकर झूला झूलने का आनंद लेते हो और दिन में चार बार बड़ी ख़ुशी से

* **जून**=समय † **थूला**=बेडौल
‡ **सेज-बँद**=डोरी जिससे बिछौने को पलंग के पायों से बाँध देते हैं
§ **हूला**=एक नुकीला हथियार भोंक दिया

मनपसंद खाना खाते हो जिससे तुम्हारा शरीर ख़ूब मोटा होकर बेडौल हो गया है। तुमने इस बात का भी प्रबंध कर रखा है कि तुम्हारा बिछौना सदा समतल बिछा रहे और सुंदर दिखे। तुम मज़े से पान चबाते हो और हमेशा दूध के कुल्ले करते हो। तुम इस भ्रम में हो कि तुम्हारे दिन सदा ऐसे ही रहेंगे और अपने को अमर समझते हो, लेकिन असलियत तो यह है कि मृत्यु किसी भी पल बाघ की तरह झपटकर अपना पंजा तुम्हारे शरीर में भोंक देगी। अपना कल्याण चाहते हो तो प्रभु के नाम का सुमिरन करो। तुम्हारे ये ऐशो-आराम के दिन लहर की तरह आए एक सपने से ज़्यादा कुछ नहीं हैं और इस सपने में खोकर तुम नाम को याद करना भूल गए हो!

चोला भया पुराना आज फटै की काल॥
आज फटै की काल तेहू पै है ललचाना।
तीनों पन गे बीत भजन का मरम न जाना॥*
नख सिख† भये सपेद तेहू पै नाहीं चेतै।
जोरि जोरि धन धरै गला औरन का रेतै‡॥
अब का करिहौ यार काल ने किहा तगादा§।
चलै न एकौ जोर आय जब पहुँचा वादा॥
पलटू तेहू पै लेत है माया मोह जँजाल।
चोला भया पुराना आज फटै की काल॥[4]

वृद्ध लोगों को एक मित्र के रूप में समझाते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि तुम्हारा यह शरीररूपी वस्त्र पुराना हो गया है जो अब किसी भी समय फट सकता है, पर तुम अपने शरीर के नष्ट हो जाने की तरफ़ ध्यान न देकर अब भी सांसारिक पदार्थों के लोभ में फँसे हो। बचपन, जवानी और

* **पन**=जीवन की अवस्था † **सिख**=चोटी ‡ **रेतै**=धीरे-धीरे काटता है
§ **तगादा**=बार-बार कोई माँग करना

बुढ़ापा तुम्हारे जीवन की ये तीनों अवस्थाएँ बीत चुकी हैं, पर तुमने अभी तक इस मार्ग को नहीं समझा कि मनुष्य का चोला तुम्हें प्रभु की भक्ति करने के लिए, उसके नाम से जुड़ने के लिए ही मिला है। तुम्हारे शरीर के सारे बाल सफ़ेद हो गए हैं, फिर भी तुम सावधान नहीं हो रहे हो। तुम बड़ी निर्दयता से दूसरों का गला काटकर धन जमा कर रहे हो और सँभाल-सँभालकर रख रहे हो। अब तो जल्दी ही यमराज आकर बार-बार तुम्हारी जान माँगेगा। तब तुम क्या करोगे? जब मौत की घड़ी आ जाती है तो मनुष्य कुछ नहीं कर सकता। फिर भी तुम माया-मोह के जाल में ज़्यादा से ज़्यादा फँसते जा रहे हो। इस बात की ओर बिलकुल ध्यान नहीं देते कि तुम्हारा यह पुराना शरीररूपी वस्त्र अब किसी भी समय फट सकता है।

भाव यह है कि बुढ़ापा आने पर शरीर जर्जर हो जाता है और किसी भी समय नष्ट हो सकता है। परंतु हम बूढ़े हो जाने पर भी लोभ नहीं छोड़ते और दूसरों से धन बटोरते रहते हैं। हम यह नहीं समझते कि नर तन भक्ति करके आवागमन से छूटने के लिए ही मिलता है।

तू क्यों गफलत में फिरै सिर पर बैठा काल॥
सिर पर बैठा काल दिनो दिन वादा पूजै।
आज काल में कूच मुरख नहिं तोकँह सूझै॥
कौड़ी कौड़ी जोरि ब्याज दे करते बट्टा।*
सुखी रहै परिवार मुक्ति में होवत ठट्ठा॥
तू जानै मैं ठग्यो आप को तुही ठगावै।
नाम सजीवन मूर छोरि के माहुर† खावै॥
पलटू सेखी ना रही चेत करो अब लाल।
तू क्यों गफलत में फिरै सिर पर बैठा काल॥[5]

* बट्टा=कर्ज़ देते समय मूल राशि में की गई कटौती † **माहुर**=विष

पलटू साहिब कहते हैं कि तुम लापरवाही क्यों कर रहे हो? मौत तो किसी भी पल आकर तुम्हें दबोच सकती है। हर दिन बीतने के साथ तुम्हारे जीवन की निश्चित अवधि पूरी हो रही है। आज नहीं तो कल तुम्हें संसार से जाना ही होगा। परंतु अरे मूर्ख! इस बात की ओर तुम्हारा ध्यान ही नहीं जाता। तुम थोड़ा-थोड़ा करके पैसा जोड़ते रहते हो। जब भोले-भाले ग़रीबों को ब्याज पर पैसा देते हो और वे बेचारे कर्ज़ उतारने के लिए तुम्हें बदले में कोई चीज़ देने आते हैं तो तुम उसका कम दाम लगाते हो। इस तरह उनका ख़ून चूसकर पैसे बटोरने से तुम्हारा परिवार चाहे सुख का जीवन बिता रहा हो, पर जब तुम अपनी मुक्ति की बात करते हो तो समझदार लोग तुम्हारी हँसी उड़ाते हैं। तुम समझते हो कि तुम दूसरों को ठगते हो, पर असल में तुम लोभरूपी ठग के हाथों ख़ुद ही ठगे जा रहे हो क्योंकि तुम्हारा परलोक बिगड़ता जा रहा है। तुम नामरूपी संजीवनी बूटी का सेवन न करके विष खा रहे हो। तुम्हारा शेख़ी बघारना जँचता नहीं। अब तो सँभल जाओ प्यारे! जब मौत तुम्हारे सिर पर बैठी है तो तुम लापरवाही क्यों कर रहे हो?

तुझे पराई क्या परी अपनी ओर निबेर॥*
अपनी ओर निबेर छोड़ि गुड़ विष को खावै।
कूवाँ में तू परै और को राह बतावै॥
औरन को उँजियार मसालची जाय अँधेरे।
त्यों ज्ञानी की बात मया† से रहते घेरे॥
बेचत फिरै कपूर आप तो खारी‡ खावै।
घर में लागी आग दौरि के घूर§ बुतावै¶॥
पलटू यह साची कहै अपने मन का फेर।
तुझे पराई क्या परी अपनी ओर निबेर॥[6]

* **निबेर**=निपटाओ † **मया**=माया ‡ **खारी**=खारा नमक
§ **घूर**=कूड़े-करकट का ढेर ¶ **बुतावै**=बुझाता है

दूसरों को ज्ञान की बातें बतानेवाले पंडितों और विद्वानों को संबोधित करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि तुम्हें दूसरों से क्या मतलब? तुम वह काम पूरा करो जो तुम्हारे ज़िम्मे लगा है, जिसके लिए तुम्हें मनुष्य का जामा मिला है। तुम प्रभु की भक्ति के बजाय सांसारिक पदार्थों का मज़ा लूटने में लगे हो, तुम तो गुड़ न खाकर विष खा रहे हो। तुम ख़ुद कुएँ में गिरे हो और दूसरों को मार्ग दिखा रहे हो। मशालची दूसरों के लिए तो मशाल से रोशनी करता है और ख़ुद मशाल के नीचे अँधेरे में चलता है। यही हालत तुम जैसे अपने को ज्ञानी समझने वाले लोगों की है, जो माया के फंदे में फँसे हुए हैं। ऐसे ज्ञानी ख़ुद तो विषय-भोग में मग्न रहते हैं पर दूसरों को ज्ञान प्रदान करते हैं। यह बात तो बिलकुल वैसी ही है जैसे कोई ख़ुद खारा नमक खाये पर दूसरों को ख़ुशबूदार, क़ीमती कपूर बेचता फिरे। या फिर अपने घर में लगी आग बुझाने की चिंता के बजाय कोई पास पड़े कूड़े-करकट के ढेर में लगी आग को बुझाने में लगे। मैं तुमसे यह बिलकुल सच्ची बात कह रहा हूँ कि अपनी चिंता न करके दूसरों के बारे में चिंता करने का कारण तुम्हारे मन का भ्रम है। असल में तुम्हें करना तो यही चाहिए कि तुम दूसरों की चिंता करना छोड़कर वह काम निपटाओ जो तुम्हें सौंपा गया है यानी तुम अपने मनुष्य जन्म का उद्देश्य पूरा करो।

अपनी अपनी करनी अपने अपने साथ॥
अपने अपने साथ करै सो आगे आवै।
बाप कै करनी बाप पूत कै पूतै पावै॥
जोरू कै जोरुहिं फलै खसम कै खसम कौ फलता।
अपनी करनी सेती जीव सब पार उतरता॥
नेकी बदी है संग और ना संगी कोई।
देखौ बूझि बिचारि संग ये जैहैं दोई॥
पलटू करनी और की नहीं और के माथ।
अपनी अपनी करनी अपने अपने साथ॥[7]

आप कहते हैं कि हर मनुष्य के साथ उसके अपने ही कर्म जाते हैं; जो वह करता है उसी का फल उसे इसी जन्म में या फिर अगले जन्मों में भोगना पड़ता है। पिता के कर्मों का फल पिता भोगता है और पुत्र के कर्मों का फल पुत्र, इसी तरह पत्नी के कर्मों का फल पत्नी को और पति के कर्मों का फल पति को मिलता है। भवसागर के पार जानेवाली हर जीवात्मा अपनी ही करनी यानी ख़ुद की गई भक्ति से पार उतरती है। मनुष्य के मरने पर उसके अपने अच्छे-बुरे कर्म ही उसके साथी होते हैं। अच्छी तरह सोच-विचार करोगे तो तुम समझ जाओगे कि ये दोनों ही मनुष्य के साथ जाते हैं। किसी दूसरे के कर्मों की ज़िम्मेदारी उसके सिर नहीं पड़ती। हर किसी की अपनी ही करनी उसके साथ जाती है।

बृद्ध भये तन खासा, अब कब भजन करहु गे॥ टेक॥
बालापन बालक सँग बीता, तरुन भये अभिमाना।
नख सिख सेती भई सपेदी, हरि का मरम न जाना॥
तिरिमिरि बहिर नासिका चूवै, सास गरे चढ़ि आई।*
सुत दारा गरियावन लागे†, यह बुढ़वा मरि जाई॥
तीरथ बर्त एकौ नहिं कीन्हा, नहीं साधु की सेवा।
तीनिउ पन‡ धोखे में बीते, ऐसे मूरुख देवा॥
पकरा आइ काल ने चोटी, सिर धुनि धुनि पछिताता।
पलटूदास कोऊ नहिं संगी, जम के हाथ बिकाता॥[8]

पलटू साहिब वृद्ध लोगों को चेतावनी देते हुए कहते हैं कि अब तो तुम्हारा शरीर बहुत बूढ़ा हो गया है। अब भक्ति करने को तुम्हारे पास समय ही कहाँ बचा है? तुम्हारा बचपन मित्रों के साथ खेलने में बीत गया और जब

---

* **तिरिमिरि**=आँखों का एक रोग † **गरियावन लागे**=गाली देने लग गए हैं
‡ **पन**=जीवन की अवस्था

तुम जवान हो गए तो घमंड में डूबे रहे, प्रभु की तरफ़ तुम्हारा ध्यान ही नहीं गया। अब बूढ़े हो गए हो और तुम्हारे शरीर के सब बाल सफ़ेद हो गए हैं, परंतु तुमने अभी तक यह जानने का प्रयत्न नहीं किया कि प्रभु को कैसे पाया जा सकता है। अब तुम्हारी ऐसी हालत है कि आँखें देख नहीं सकतीं और कान सुन नहीं सकते; नाक बहता रहता है और दम फूलने लग गया है। पत्नी और बेटे गाली देने लग गए हैं, अपमान करने लग गए हैं और कहते हैं कि बूढ़ा मरे तो हमारी जान छूटे। बचपन, जवानी और बुढ़ापा तुम्हारे जीवन की तीनों अवस्थाएँ इसी भ्रम में बीत गईं कि संसार की ख़ुशियाँ, संसार के पदार्थ और संसार का सुख-आराम ही मनुष्य के लिए सब कुछ हैं। तुमने न तो किसी साधु की सेवा की और न ही भवसागर से तरने की प्रेरणा देनेवाले किसी तीर्थ पर गए। न ही तुमने धर्मकर्म करने का कोई व्रत यानी संकल्प किया। ऐसे महामूर्ख हो तुम! अब मृत्यु तुम्हारे सिर पर आ खड़ी हुई है तो तुम सिर पीट-पीटकर पछता रहे हो कि तुमने अपना परलोक सुधारने की रत्ती भर कोशिश नहीं की। अब तुम यमराज के हाथ बिकने जा रहे हो और तुम्हारा साथ देनेवाला कोई नहीं है।

जीव जाय तो जाय दे जन्म जाय बरु नष्ट॥*
जन्म जाय बरु नष्ट लोक की तजो बड़ाई।
दुख नाना सहि रहो पड़ौ दरबार में जाई॥
मात पिता निज बन्धु तजौ भगनी सुत नारी।
तजि दो भोग बिलास सहत रहौ सब की गारी॥
नाचौ घूँघट खोलि ज्ञान का ढोल बजाओ।
देखै सब संसार कलाएँ उलटी खाओ॥
पलटू नाम न छोड़िहो सहि लो इतना कष्ट।
जीव जाय तो जाय दे जन्म जाय बरु नष्ट॥[9]

* बरु=भले ही

पलटू साहिब कहते हैं कि भले ही तुम्हारी जान पर आ बने, तुम दुनिया की लोकलाज की परवाह न करो। लोगों से प्रशंसा पाने की आशा छोड़ दो। लोगों के हाथों चाहे तुम्हें कितने ही दुःख क्यों न सहने पड़ें, तुम सतगुरु की शरण में ही रहो। माता, पिता, बहिन, पुत्र, नारी और दूसरे संबंधी, इन सबका मोह और डर छोड़ दो तथा भोग-विलास से दूर रहो। सबकी गालियाँ सह लो और सब संकोच छोड़कर सतगुरु की बताई युक्ति के अनुसार प्रेमपूर्ण भक्ति करो। खुलेआम कहो कि गुरु से तुम्हें रूहानियत का सही ज्ञान प्राप्त हुआ है। संसार को देखने दो कि तुम दृढ़ता से नाम के अभ्यास में लगे हुए हो। अभ्यास के लिए बैठो और मन की वृत्ति को उलटाओ, अपने ध्यान को बाहर से अंदर की ओर मोड़ो। पलटू साहिब कहते हैं कि लोगों के हाथों चाहे तुम्हें कितने ही दुःख और कष्ट क्यों न सहने पड़ें, चाहे तुम्हारी जान पर ही क्यों न बन आये, तुम नाम का अभ्यास बिल्कुल न छोड़ो। अपने जीवन को व्यर्थ न जाने दो।

स्यार की चाल को छोड़ बे बालके,
आपु को खूब दरिआफ कीजै।*
सिंह है तुही तहकीक† कर आप में,
स्यार के संग को छोड़ दीजै॥
अहार तो कीजिये आपु से मारिकै,
और कै मारा ना कधी लीजै।
पलटू तू सिंह ह्वै गरज बे हाँक दै,
पकरि गजराज धै‡ पाँव मींजै§॥[10]

यह कथा प्रचलित है कि एक शेर का बच्चा गीदड़ों के साथ रहते हुए अपने आप को गीदड़ समझने लग गया। यह बात कभी एक शेर ने आकर

* दरिआफ=जानना † तहकीक=खोज ‡ धै=धरकर § मींजै=कुचल दो

उसे समझाई कि तू अपने आप को पहचान। तू वास्तव में गीदड़ नहीं, शेर है। इस कहानी के माध्यम से पलटू साहिब हमें समझाते हैं, 'ऐ शेर के बच्चे! डरपोक गीदड़ों जैसा आचरण छोड़ और अपने आप को पहचान ले। अपने बारे में खोज करेगा तो जान लेगा कि तू वास्तव में शेर है। गीदड़ों का संग छोड़, ख़ुद शिकार करके भोजन कर, दूसरे का मारा हुआ शिकार मत खा। शेर बनकर ललकारता हुआ ज़ोर से गरज और हाथी को दबोचकर अपने पंजों के प्रहार से उसे कुचल डाल।'

भाव यह कि अपने अंदर जाकर अच्छी तरह खोज कर और अपना असली स्वरूप पहचान। तेरा असली स्वरूप तन या मन नहीं बल्कि आत्मा है जो परमात्मा की अंश है। तू मनमुखों की संगति से दूर रह, मन का दिया विषयों का भोजन छोड़ और अपने उद्यम से शब्द का आहार कर। इस तरह तू मनरूपी हाथी को मारकर अपने असली स्वरूप को पहचान लेगा।

फूली है यह केतकी भौंरा लीजै बास॥*
भौंरा लीजै बास जन्म मानुष को पाया।
करी न गुरु की भक्ति जक्त में आइ भुलाया॥
भौंरा कीजै चेत कहा तू फिरै भुलाना।
हरि को नाम सुगंध छोड़ि पाड़र† लिपटाना॥
ऋतु बसंत की जात कली को रस लै लीजै।
बहुरि न ऐसो दाँव चेत चित भौंरा कीजै॥
पलटू कबहूँ ना मरै होय न जिव का नास।
फूली है यह केतकी भौंरा लीजै बास॥[11]

जिज्ञासु को भौंरा कहकर पलटू साहिब उसे समझाते हैं कि केवड़े के इस पौधे पर फूल लग गए हैं, उनकी सुगंध ले लो। भाव यह है कि सतगुरु

* **केतकी**=केवड़ा † **पाड़र**=सुगंध रहित पुष्प, भाव माया

नाम का भेद दे रहे हैं, अवसर का लाभ उठाओ और नाम की दात लेकर उसका अभ्यास करो। तुझे मनुष्य जन्म मिला है, पर अभी तक तूने सतगुरु के उपदेश के अनुसार भक्ति नहीं की। संसार में आकर तूने प्रभु को भुला दिया। अब तो सावधान हो जा। भौंरे की तरह तू बहका हुआ अभी तक इधर-उधर क्यों भटक रहा है? प्रभु के नाम की सुगंध की ओर ध्यान न देकर तू माया से लिपटा हुआ है जो एक सुगंधहीन पुष्प है। तेरा यह मनुष्य जन्म बीतता जा रहा है और तू इसी में नामरूपी कली का रस ले सकता है। केवड़े की कली का रस भौंरा बसंत में ही तो लेता है। ऐसा मौक़ा तुझे फिर नहीं मिलेगा। अपने मन को सावधान कर ले। अवसर का लाभ उठाते हुए सतगुरु के मार्गदर्शन में प्रभु की भक्ति कर ले। ऐसा करनेवाली आत्मा अमर जीवन पा लेती है, उसे बार-बार जन्म लेकर मरना नहीं पड़ता।

पानी का को देइ प्यास से मुवा मुसाफिर॥
मुवा मुसाफिर प्यास डोर औ लुटिया पासै।
बैठ कुवाँ की जगत जतन बिनु कौन निकासै॥*
आगे भोजन धरा थारि में खाता नाहीं।
भूख भूख करै सोर कौन डारै मुख माहीं॥
दीया बाती तेल आगि है नाहिं जरावै।
खसम सोया है पास खसम को खोजन जावै॥
पलटू डगरा सूध अटकि कै परता गिर गिर।
पानी का को देइ प्यास से मुवा मुसाफिर॥[12]

पलटू साहिब ने अनेक दृष्टांत देकर नाम भक्ति की प्रेरणा दी है कि किसी संत-सतगुरु से नाम की दात मिल जाने पर उसके अभ्यास के लिए

* **जगत**=कुएँ का चबूतरा जिस पर खड़े होकर कुएँ में से पानी खींचा जाता है।

कोशिश तो करनी ही पड़ती है। जो जीव स्वयं अपनी दशा सुधारने का यत्न नहीं करता, कोई उसकी सहायता नहीं कर सकता।

पलटू साहिब अपनी बात एक प्रश्न से शुरू करते हैं। आप पूछते हैं कि पानी किसे दिया जाए? कोई मुसाफ़िर कुएँ के चबूतरे पर पहुँच गया है और वहाँ रस्सी तथा लोटा उसे मिल गए हैं। हालाँकि वह प्यास से मरा जा रहा है, फिर भी हाथ पर हाथ धरकर चबूतरे पर बैठा हुआ है। भला बिना प्रयत्न किए पानी कौन निकाल सकता है? ऐसे आलसी को तो कोई पानी नहीं पिलाएगा। एक भूखे व्यक्ति के आगे थाली में खाना रखा है और उसने ऊँची आवाज़ में भूखा होने की रट भी लगा रखी है, पर वह खाना खाने की कोशिश नहीं करता। फिर उसके मुँह में खाना और कौन डालेगा? दीया भी है, बत्ती भी, तेल भी और आग भी, लेकिन लोग दीया जलाने का उद्यम करने को तैयार नहीं हैं। अब उनके लिए दीया और कौन जलाएगा?

इसी तरह प्रभु की कृपा से मनुष्य का चोला और गुरु के मिल जाने पर भी यदि कोई उसकी बताई विधि से भक्ति नहीं करता तो कोई दूसरा तो उसके लिए यह काम करने से रहा। जो आत्मा मनुष्य का शरीर पाकर शरीर के अंदर ही विद्यमान परमात्मा से मिलने का प्रयत्न नहीं करती, उसे बाहर मंदिरों या तीर्थों आदि में ढूँढ़ने जाती है, वह तो उस स्त्री के समान है जो अपने पास ही सोए पड़े पति को कहीं और खोजने जाती है। अंतर्मुखी भक्ति का रास्ता ही प्रभु तक पहुँचने का सीधा रास्ता है। फिर भी मुसाफ़िर का दुबिधा में पड़कर इस पर न चलना बड़े दुःख की बात है।

19

संतोष का महत्त्व

लोभी मन संसार के पदार्थों के पीछे भागता रहता है, नित नई सुख-सुविधाएँ माँगता है और उसका ध्यान सदैव बहिर्मुखी रहता है। यही कारण है कि संतों की वाणी में संतोष धारण करने पर बहुत बल दिया जाता है। पलटू साहिब ख़ुद दुकानदार थे, एक जगह आदर्श बनिये के लक्षण बताते हुए उन्होंने कहा है कि वह अपने मन को संतोष की गद्दी पर बिठाता है: *गादी है संतोष*[1] परमार्थ में संतोष रखना आवश्यक है। संतोष की महिमा का बखान पलटू साहिब ने अपनी वाणी में अनेक बार किया है।

संतोष के धरे से खाये गज पेट भरि,
स्वान इक टूक को केतिक धावै।
संत की वृत्ति अजदहा की चाहिये,*
चले बिनु फिरे आहार पावै॥
सिंह आहार को करत है सहज में,
स्यार दस बीस घर मूड़ नावै।
दास पलटू कहै और कछु ना करै,
भक्ति कै मूल संतोष लावै॥[2]

पलटू साहिब कहते हैं कि हाथी संतोष रखता है और एक ही स्थान पर टिककर भरपेट भोजन करता है। जबकि कुत्ता रोटी के एक-एक टुकड़े के

* अजदहा=अजगर

लिए जहाँ-तहाँ भागता फिरता है। परमार्थी को सांसारिक पदार्थों के लिए व्यर्थ दौड़धूप नहीं करनी चाहिए, बल्कि अजगर की तरह जो अपने आप मिले उसी से संतोष करना चाहिए। शेर भी आसानी से भोजन प्राप्त कर लेता है जबकि गीदड़ भोजन के लिए घर-घर मुँह मारता है। भक्त चाहे और कुछ न करे, पर उसे मन में संतोष अवश्य रखना चाहिए, क्योंकि मन में संतोष न हो तो भक्ति नहीं हो सकती। संतोष भक्ति का मूल है।

यार फक्कीर तू बाँधु फाका कँहै, करो संतोष यह अर्ज मेरी।
रहो बेफिकर ह्वै बाँधि कफनी कँहै, पहिरि के बैठु जा प्रेम बेरी॥
करो फराख दिल फहम† टुक कीजिये, फरक संसार से पीठ फेरी।*
दास पलटू कहै फकर फारिग हुआ, फटी हजूर में फरद‡ तेरी॥[3]

संतोषपूर्ण जीवन बिताने की शिक्षा देते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि ऐ मेरे फ़क़ीर दोस्त! मेरी विनती है कि ज़िंदगी गुज़ारने के लिए अपने पास उतना ही सामान रखना जितना ज़रूरी हो। फ़क़ीरों जैसी सादी रहनी अपना ले और सदा बेफ़िक्र रह। अपने आप को प्रभु-प्रेम की ज़ंजीर से बाँधे रखना। मन को उदार बनाना और विवेक से काम लेना, अच्छे-बुरे का ध्यान रखना। संसार से दूरी रखना, उससे पीठ फेरे रखना यानी लोभवश सांसारिक पदार्थों के संग्रह में न लगे रहना। सदा फ़क़ीरी ने यानी संतोषपूर्ण सादी रहनी ने ही मुक्ति पाई है। अगर तू संतोष का जीवन बिताएगा तो प्रभु के सामने रखी तेरे हिसाब की बही फट जाएगी यानी तेरे कर्मों का लेखा निबट जाएगा और तेरी भक्ति सफल हो जाएगी।

---

* फराख=बड़ा उदार † फहम=विवेक ‡ फरद=हिसाब का रजिस्टर

20

निन्दक है परस्वारथी

निंदक को पलटू साहिब ने परस्वार्थी अर्थात् परोपकार करनेवाला बताया है। इससे हमें यह नहीं समझ लेना चाहिए कि उनकी दृष्टि में निंदा करना एक अच्छी बात है। उन्होंने स्पष्ट कहा है कि निंदा करनेवाले को अपनी करनी का फल भोगना ही पड़ेगा। उन्होंने संतों की निंदा से तो हमें विशेष रूप से दूर रहने को कहा है। निंदक को परोपकारी बताने में उनका उद्देश्य हमें यह समझाना है कि हमें निंदा से डरना नहीं चाहिए, अपनी निंदा सुनकर दुःखी या परेशान नहीं होना चाहिए, क्योंकि निंदा से असल में हमारा हित ही होता है, अहित नहीं। निंदकों के बारे में विनोदपूर्ण शैली में लिखी गई पलटू साहिब की वाणी पढ़कर पाठक के होंठों पर एक मुसकान तो आती ही है, उसे यह अति सुंदर शिक्षा भी मिलती है कि निंदा का हमें सदा स्वागत करना चाहिए, निंदा सुनकर हमें कभी कुढ़ना नहीं चाहिए। इस वाणी में हमें निंदक के बारे में एक नया तथा बेहतर नज़रिया देखने को मिलता है।

देंखि निन्दक कँहै करौं परनाम मैं,
धन्य महराज तुम भक्ति धोया।
किहा निस्तार तुम आइ संसार में,
भक्त कै मैल बिन दाम खोया॥
भयौ परसिद्ध परताप से आप के,
सकल संसार तुम सुजस बोया।
दास पलटू कहै निन्दक के मुए से,
भया अकाज मैं बहुत रोया॥[1]

पलटू साहिब कहते हैं कि मुझे अगर अपने किसी निंदक के दर्शन हो जाएँ तो मैं मन ही मन उसे प्रणाम करता हूँ और कहता हूँ कि महाराज, आप धन्य हैं जो भक्ति करके स्वयं निर्मल हो चुके हैं और संसार में आकर दूसरों का उद्धार भी कर रहे हैं। आपकी कृपा से इस भक्त की मैल भी मुफ़्त में धुल गई। यह आपके प्रताप का ही तो फल है कि मैं इतना प्रसिद्ध हो गया हूँ; आपने तो संसार भर में मेरा यश फैला दिया है।

अंत में पलटू साहिब कहते हैं कि मेरे एक निंदक की जब मृत्यु हुई तो मुझे बहुत दुःख हुआ क्योंकि मुझे महसूस हुआ कि मेरा बहुत नुकसान हो गया है।

भाव यह है कि हमें अपने निंदक का एहसानमंद होना चाहिए क्योंकि वह हमारी निंदा करके हमारी कई बुराइयाँ दूर कर देता है।

निन्दक है परस्वारथी करै भक्त का काम॥
करै भक्त का काम जगत में निन्दा करते।
जो वे होते नाहिं भक्त कहवाँ से तरते॥
आप नरक में जाहिं भक्त का करैं निबेरा।
फिर भक्तन के हेतु करैं चौरासी फेरा॥
करैं भक्त की सोच उन्हैं कुछ और न भावै।
देखो उनकी प्रीति लगन जब ऐसी लावै॥
पलटू धोबी अस मिल्यौ धोवत है बिनु दाम।
निन्दक है परस्वारथी करै भक्त का काम॥[2]

पलटू साहिब कहते हैं कि निंदक बड़ा परोपकारी होता है। संसार भर में प्रभु के भक्त की निंदा करके वह उसका कार्य सिद्ध कर देता है यानी उसकी बुराइयाँ दूर कर देता है। निंदक न होते तो भक्त भवसागर से पार कैसे होते? भक्तों की निंदा करके निंदक स्वयं तो नरक में जाते हैं, पर भक्तों को कई पापों से बचा लेते हैं। भक्तों की ख़ातिर वे दोबारा चौरासी

का चक्कर काटते हैं। वे हरदम भक्तों के बारे में ही सोचते हैं, कुछ और सोचना उन्हें अच्छा ही नहीं लगता। तनिक उनका प्रेम भाव देखिए जो वे इतनी लगन के साथ भक्तों की सोच में खोए रहते हैं। अपने हर निंदक के प्रति मेरे मन में यही भावना है कि मुझे एक ऐसा धोबी मिल गया है जो बिना धुलाई लिए मेरे कपड़े धो डालता है। निंदक सचमुच परोपकारी होता है, वह भक्त का काम बना देता है।

संत रतन की कोठरी कुंजी दुष्टन हाथ॥
कुंजी दुष्टन हाथ अटकि के खोलहिं जाई।*
संत भये परसिद्ध परभुता नाम दिखाई॥
चकमक† भये हैं दुष्ट संत जन जैसे पथरी।
हरि की प्रभुता आगि प्रगट ह्वै वा से निकरी॥
आगि देखि सब डेरे जगत में भय तब ब्यापी।
दुष्टन के परताप बस्तु परगट भई ढाँपी॥
पलटू परदा खुलि गया सबै नवावै माथ।
संत रतन की कोठरी कुंजी दुष्टन हाथ॥[3]

पलटू साहिब कहते हैं कि संत रूहानी रत्नों का भंडार होते हैं जिसकी कुंजी दुष्ट आलोचकों यानी निंदकों के पास होती है। निंदक जगह-जगह बहस करके कई लोगों के लिए वह भंडार खोल देते हैं। उनके द्वारा की गई निंदा से संतों की अधिक प्रसिद्धि हो जाती है तथा संतों के पास आने से और अधिक लोगों को नाम की महिमा का ज्ञान हो जाता है। चकमक पत्थर पर चोट पड़ने से चकमक में से आग निकलती है। इसी तरह संतों के उपदेश की चर्चा सुनकर दुष्ट अपने मुख से निंदा की आग उगलते

* **अटकि के**=बहस करके
† **चकमक**=एक प्रकार का पत्थर जिस पर चोट मारने से उसमें से आग निकलती है।

हैं जिससे परमेश्वर की प्रभुता ही प्रकट होती है। क्योंकि उस निंदा को सुनकर लोगों की जिज्ञासा बढ़ जाती है और वे अधिक संख्या में संतों के सत्संग में आने लगते हैं। कहीं आग लग जाए तो उसे देखकर सबको डर लगता है, आस-पास के सब लोगों में भय छा जाता है। लेकिन संतों के निंदकों के मुँह से निकलने वाली निंदारूपी आग से डर नहीं लगता; वह तो एक छिपी हुई वस्तु को प्रकट करने का काम करती है। लोगों के लिए इस राज़ पर से परदा उठ जाता है कि जीव को नाम का अनमोल रत्न संतों की संगति करने से ही प्राप्त हो सकता है, जिससे वे जाकर संतों के चरणों में माथा नवा देते हैं। तभी तो मैं कहता हूँ कि संत रूहानियत का ऐसा भंडार होते हैं जो दुष्टों द्वारा की गई निंदा से ही खुलता है।

अपकारी जिव जाहिंगे पलटू अपने आप॥
पलटू अपने आप संत का सरल सुभाऊ।
सब को मानहिं भला नाहिं कछु करहिं दुराऊ॥*
लाख दुष्ट जो होइ भला तेहू का मानैं।
आपन ऐसा जीव संत जन सब का जानैं॥
अपनी करनी जाय होय जो निंदक कोई।
आन को गड़हा खनै परैगा आपुहि सोई॥
जब देखै वह संत को तब चढ़ि आवै ताप।
अपकारी जिव जाहिंगे पलटू अपने आप॥[4]

पलटू साहिब कहते हैं कि दूसरों का बुरा करनेवाले को अपनी करनी का फल भोगना पड़ता है। संत तो बड़े निश्छल स्वभाव वाले होते हैं। वे किसी प्रकार का भेदभाव नहीं रखते, सबका भला चाहते हैं। उनके साथ चाहे कोई कितना ही बुरा करे, वे तो मन से उसका भी भला ही चाहते हैं,

* दुराऊ=भेदभाव

क्योंकि वे सबको अपने जैसा समझते हैं। लेकिन उनकी निंदा करनेवाले को अपनी करनी का फल ज़रूर भोगना पड़ता है; जो दूसरे के लिए गढ़ा खोदता है, वह ख़ुद उसमें गिरता है। संतों को देखकर जिन लोगों को क्रोध आ जाता है, ऐसे दूसरों का बुरा करनेवालों को अपनी करनी का फल अवश्य भोगना पड़ता है।

21

जीव हत्या और मांसाहार

अन्य संतों की तरह पलटू साहिब का भी स्पष्ट कहना है कि परमात्मा सब जीवों के अंदर है, इसलिए किसी भी जीव की हत्या करना मुसीबत को बुलावा देना है। जीव-हत्या तथा मांसाहार के बुरे नतीजे से आपने हिंदुओं और मुसलमानों दोनों को सावधान किया है। आपने चेतावनी दी है कि जीव को मारकर उसका मांस खाना बहुत बड़ा पाप है जिसका कोई प्रायश्चित्त नहीं।

लहम कुल्लहुम† जिसिम का नबी किया फर्मूद‡॥*
नबी किया फर्मूद हदीस की आयत§ माहीं।
सब में एकै जान और कोउ दूजा नाहीं॥
खून गोस्त है एक मौलवी जिबह¶ न छाजै।
सब में रोसन हुआ नबी का नूर बिराजै॥
क्यों खैंचै तू रूह गुनहगारी में पड़ता।
*बुजरुग** के फर्मूद बमोजिब†† नाहीं डेरता॥*
पलटू जो बेदरदी सो काफिर मरदूद‡‡।
लहम कुल्लहुम जिसिम का नबी किया फर्मूद॥[1]

---

* **लहम**=मांस † **कुल्लहुम**=सब ‡ **फर्मूद**=फ़रमाया
§ **आयत**=क़ुरान का वाक्य ¶ **जिबह**=गला काटकर मारना
** **बुजरुग**=भाव हज़रत मुहम्मद †† **बमोजिब**=अनुसार ‡‡ **मरदूद**=निम्न

आप कहते हैं कि प्रभु के संदेशवाहक हज़रत मुहम्मद ने हदीस की आयत में एक जगह फ़रमाया है कि वह मांस जो तुम खाते हो जीवों के शरीर का ही मांस होता है। सब शरीरों में एक वही जान होती है जो तुम में है, कोई और जान नहीं। सब शरीरों में एक-सा ही ख़ून और मांस होता है, इसलिए किसी जीव का गला काटना समझदार मुसलमान को बिलकुल शोभा नहीं देता। हर प्राणी के अंदर प्रकाश-स्वरूप परमात्मा स्वयं ही विराजमान होता है। फिर किसी की जान लेकर तुम अपने सिर पर पाप क्यों लेते हो? हज़रत मुहम्मद के कथन के अनुसार तुम्हें इस पाप से डरना चाहिए, लेकिन तुम डरते नहीं हो। जिसके दिल में रहम नहीं है वह नास्तिक है, बड़ा निम्न है।

गरदन मारै खसम की लगवारन के हेत॥*
लगवारन के हेत पसू औ मेंढ़ा मारै।
पूजै दुरगा देव देवखरी† सिर दै मारै॥
माटी देवखरि बाँधि मुए की पूजा लावै।
जीवत जिउ को मारि आनि कै ताहि चढ़ावै॥
सब में है भगवान और न दूजा कोई।
तेकर यह गति करै भला कहवाँ से होई॥
पलटू जिउ को मारि कै बल‡ देवतन को देत।
गरदन मारै खसम की लगवारन के हेत॥[2]

हिंदुओं में प्रचलित बलि प्रथा को पापकर्म बताते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि पराए पुरुष से प्रेम करनेवाली स्त्री अपने प्रेमी की ख़ातिर अपने पति को मार डालती है। इसी तरह कई मूर्ख अपने इष्ट देवी-देवता की ख़ातिर भेड़-बकरियों को मार डालते हैं। मंदिर में जाकर दुर्गा या किसी

---

* **लगवारन**=प्रेमी † **देवखरी**=मंदिर ‡ **बल**=बलि

देवता की पूजा करने के लिए वे पशु का सिर काट डालते हैं। मंदिर तो वे मिट्टी का बनाते हैं और उसमें पूजा करते हैं निर्जीव मूर्ति की, लेकिन जीवित प्राणी को मंदिर में लाकर उसकी बलि चढ़ाकर वे भूल जाते हैं कि परमात्मा सब जीवों के अंदर है और हर जीव उसी का रूप है, उससे भिन्न कोई और नहीं है। भला ऐसा करने पर किसी का कल्याण कैसे हो सकता है? किसी देवी या देवता को प्रसन्न करने के लिए एक जीव को मारकर उसकी बलि देना ऐसा ही पाप है जैसा किसी स्त्री का अपने प्रेमी को प्रसन्न करने के लिए अपने पति की हत्या कर देना।

रहते रोजा नित्त साँझ कै मुरगी मारै।
आठो वक्त निमाज गाय की कुही निहारै॥*
सब में रहै खुदाय गले में छूरी देता।
अरे हाँ पलटू जाया चाहै भिस्त† खून गरदन पर लेता॥[3]

पलटू साहिब मुसलमानों को समझाते हैं कि रमज़ान के महीने में रोज़ दिनभर रोज़ा रखते हो और शाम को मुरगी हलाल कर देते हो। तब तुम आम दिनों के लिए निर्धारित पाँच बार से ज़्यादा आठ बार नमाज़ पढ़ते हो, लेकिन तुम्हारा ध्यान मांस के लिए गाय को मारने में रहता है। परमात्मा तो सब जीवों के अंदर है, लेकिन तुम बड़ी बेरहमी से जानवर का गला काट देते हो। रमज़ान के महीने में रोज़ा रखने और नमाज़ अदा करने आदि के जो उसूल हैं, उनका पालन तो तुम इसलिए करते हो कि तुम स्वर्ग को जाना चाहते हो। पर अपने सिर पर जीव-हत्या का पाप लेकर तुम सब किये-कराये पर पानी फेर देते हो। यह कहाँ की अक़्लमंदी है?

* कुही=हत्या † भिस्त=स्वर्ग

मुसलमान के जिबह हिन्दू के मारै झटका।
खाइ दूनों मुरदार फिरत हैं दूनिउँ भटका॥
वै पूरब को जाहिं पछिम वै ताकते।
अरे हां पलटू महजिद देवल जाय दोऊ सिर मारते॥[4]

पलटू साहिब कहते हैं कि मुसलमान के घर में हलाल किए गए जीव का मांस पकता है और हिंदू के घर में एक ही झटके में गला काटकर मार दिए गए जीव का। पर खाते दोनों मुर्दा जानवर ही हैं। कितना पाप कर्म करते हैं दोनों! अपने-अपने पापों से छुटकारा पाने तथा पुण्य कमाने के लिए वे दोनों यहाँ-वहाँ भटकते फिरते हैं। हिंदू तीर्थयात्रा करने पूर्व की ओर जाते हैं और मुसलमान हज करने के लिए पश्चिम की तरफ़ मुँह घुमा लेते हैं। हिंदू मंदिरों में और मुसलमान मस्जिदों में जाकर ज़मीन पर माथा रगड़ते हैं। यह कोई अक़्लमंदी का काम नहीं है।

22

विविध

पीछे दिए गए विषयों के अलावा कई अन्य विषयों पर भी पलटू साहिब ने अपने विचार व्यक्त किए हैं। उनमें से कुछ पद यहाँ प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

विश्वास

परमार्थी के लिए विश्वास का बहुत महत्त्व है। उसके लिए ज़रूरी है कि वह पूरी जाँच-पड़ताल के बाद ही किसी संत की शरण ले और नाम मार्ग पर क़दम रखे। परंतु जब वह इस मार्ग को अपना ले तो उसे चाहिए कि अपने सतगुरु और प्रभु पर अटूट विश्वास रखते हुए अपनी आध्यात्मिक यात्रा को पूरा करने का प्रयास करे। नीचे दिए जा रहे पदों से पता चलता है कि साधना में सफलता प्राप्त करनेवाले भक्तों का अपने सतगुरु और प्रभु पर कितना विश्वास था।

मैं जग की बात न मानौंगी। ठान आपनी ठानौंगी॥
कहे सुने से खाँड आपनी। नाहिं धूरि में सानौंगी॥*
कहे सुने से हीरा आपनो। नाहिं काँच में आनौंगी॥
जग की ओर तनिक नहिं ताकौं। सतसंगति पहिचानौंगी॥
पलटूदास कहे से का भा। जो जानौं सो जानौंगी॥[1]

* सानौंगी=मिलाऊँगी

सतगुरु से नाम की दात पा चुकी जीवात्मा सतगुरु पर अपना विश्वास प्रकट करती हुई कह रही है कि अब मैं दुनिया के लोगों की कोई बात नहीं मानूँगी, अपने निश्चय पर दृढ़ रहूँगी। किसी के कुछ कहने पर या किसी से कुछ सुनकर मैं अपनी खाँड में मिट्टी नहीं मिलाऊँगी—सतगुरु द्वारा बताई प्रभु की भक्ति में कोई और कर्मकांड नहीं मिलाऊँगी। लोगों की बातें सुनकर मैं प्रभु-भक्ति के अपने हीरे को काँच के टुकड़ों के साथ नहीं रखूँगी। संसार की ओर मैं तनिक भी ध्यान नहीं दूँगी। मुझे अपने सतगुरु की संगति से जो मिला है, मैं उसी को मानूँगी। किसी के कहने से क्या होता है? मुझे जो जानना होगा, सतगुरु की बताई भक्ति करके वह जानकर ही रहूँगी।

मनसा बाचा कर्मना, जिन को है बिस्वास।
पलटू हरि पर रहत हैं, तिन्ह के पलटू दास॥[2]

प्रभु पर पूरा भरोसा रखनेवालों की महानता जताते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि जिनके विचारों, वचनों और कर्मों से प्रभु पर पूर्ण विश्वास झलकता है, जो प्रभु को अपना एकमात्र सहारा मानते हैं, उनका मैं दास हूँ।

पलटू संसय छूटि गे, मिलिया पूरा यार।
मगन आपने ख्याल में, भाड़ पड़ै संसार॥[3]

आप कहते हैं कि सतगुरु के रूप में मुझे एक पक्का दोस्त मिल गया है जिससे परमार्थ संबंधी मेरे सब संदेह दूर हो गए हैं। अब मैं उनके कहे अनुसार अपने ध्यान में मग्न रहता हूँ। संसार जाए चूल्हे में, उसकी मुझे क़तई परवाह नहीं है।

ज्यों ज्यों रूठै जगत सब, मोर होय कल्यान।
पलटू बार न बाँकि है, जो सिर पर भगवान॥[4]

पलटू साहिब कहते हैं कि मुझसे जितने अधिक लोग रूठते हैं, मेरा उतना ही अधिक कल्याण होता है यानी मुझे भक्ति के लिए पहले से अधिक एकांत मिलता है। जब प्रभु मेरा रक्षक है तो मेरा रत्ती भर भी अहित नहीं हो सकता।

प्रभु-भक्त की निराली चाल

जिसे प्रभु-भक्ति में आनंद आने लग गया हो या जिसे प्रभु-भक्ति की लगन लग गई हो, उसका व्यवहार आम लोगों से भिन्न होता है।

जा को निरगुन मिला है भूला सरगुन चाल॥
भूला सरगुन चाल बचन ना मुख से आवै।
तसबी और किताब नहीं काजी को भावै॥*
पंडित पढ़ै न बेद तीरथ बैरागी त्यागा।
कायथ कलम न लेय राज तजि राजा भागा॥
बेस्वा तजा सिंगार सिद्ध की गइ सिद्धाई।
रागी भूला राग जननि सुत देइ बहाई॥
पलटू भूली गीथिनी† कहूँ भात कहुँ दाल।
जा को निरगुन मिला है भूला सरगुन चाल॥[5]

पलटू साहिब कहते हैं कि जिसका मिलाप निराकार प्रभु से हो जाता है, वह उस आनंद को शब्दों में बयान कर सकने में ख़ुद को असमर्थ पाता है। वह संसार से पूरी तरह से अनासक्त हो जाता है। उसका रंग-ढंग दुनियादार लोगों से निराला हो जाता है।

---

* **तसबी**=माला † **गीथिनी**=गृहिणी

ऐसी अवस्था में क़ाज़ी और पंडित की माला और धार्मिक किताबों में, त्यागी की तीर्थयात्रा में, कायस्थ को लिखने के काम में, राजा की राजपाट में, वेश्या की श्रृंगार में, सिद्ध की सिद्धियों में, रागी की राग में, माता की संतान में, गृहिणी की घर के कामकाज में कोई रुचि नहीं रहती।

परमार्थी की रहनी

संतों ने परमार्थियों के लिए लगन से नाम भक्ति करने के साथ-साथ अपनी रहनी का, अपनी ज़िंदगी गुज़ारने के ढंग का पूरा-पूरा ध्यान रखना भी ज़रूरी बताया है। उन्होंने इस बात पर बहुत ज़ोर दिया है कि परमार्थ का भवन नैतिकता की नींव पर ही खड़ा किया जा सकता है।

संतन के सिर ताज है सोई संत होइ जाय॥
सोई संत होइ जाय रहै जो ऐसी रहनी।
मुख से बोलै साच करै कछु उज्जल करनी॥
एक भरोसा करै नहीं काहू से माँगै।
मन में करै सँतोष तनिक ना कबहूँ लागै॥
भली बुरी कोउ कहै ताहि सुन नहिं मन माखै।*
आठ पहर दिन रात नाम की चरचा राखै॥
पलटू रहै गरीब होय भूखे को दे खाय।
संतन के सिर ताज है सोई संत होइ जाय॥[6]

सच्चे परमार्थी की रहनी का उल्लेख करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि संत सबसे बड़े होते हैं, सबके सिरमौर होते हैं। मगर संत बनता वही है जो सदा सच बोलता है और अच्छे कर्म करता है। प्रभु पर ही भरोसा रखता है और कभी किसी के आगे हाथ नहीं फैलाता। वह सदा संतुष्ट रहता है और कभी किसी चीज़ से लगाव नहीं रखता। कोई कड़वे वचन

---

* **माखै**=क्रोध करे

बोले तो क्रोध नहीं करता, हर समय नाम का जाप करता रहता है, विनम्र होता है। भूखे को देने के बाद ही खाता है। संतों की अवस्था वही पाता है जो इस ढंग से अपना जीवन बिताता है।

दिल को करहु फराख फकीरा, रहु मुहासबे† पाक॥ टेक॥*
जो आवै सो देहु लुटाई, क्या कौड़ी क्या लाख।
खाहु खियावहु मगन रहौ तुम, सबसे रहु बेबाक‡॥
औरत जो दरसन को आवै, नजर से ताकहु पाक।
सोना रूपा लाल जवाहिर, तुम्हरे लेखे खाक॥
माया को चिरकीन§ लखौ तुम, देखि कै मूँदौ नाक।
जब आवै तब देहु चलाई, तनिक न रहियो ताक॥
संत चकोर की संग्रह नाहीं, संग्रह करै हलाक।
पलटूदास कहौं मैं सबसे, बार बार दै हाँक॥[7]

पलटू साहिब परमार्थी को समझाते हैं कि उसकी रहनी कैसी होनी चाहिए। आप कहते हैं कि हिसाब-किताब में खरे रहो और उदार यानी विशाल हृदय वाले बनो। तुम्हारे पास थोड़ा या बहुत जितना भी पैसा आए, लुटा दो यानी ख़र्च कर दो या लोगों की सेवा में लगा दो। उससे ख़ुद भी खाओ और दूसरों को भी खिलाओ। सदा प्रसन्न रहो। किसी के क़र्ज़दार मत बनो। अगर कोई स्त्री तुम्हारे दर्शन के लिए आए तो उसे नेक नज़र से देखो। सोना, चाँदी, लाल, जवाहर, ये सब तुम्हारे लिए मिट्टी के समान हों। धन-दौलत को कूड़ा-करकट जानो; उसे देखते ही नाक बंद कर लो ताकि उसकी बदबू तुम्हें परेशान न करे। वह जब भी तुम्हारे पास आए, पलभर भी आँखें गाड़कर उसकी ओर मत देखो; उसे तो बस चलता करो।

* **फराख**=उदार † **मुहासबे**=हिसाब करनेवाला ‡ **बेबाक**=ऋण-मुक्त
§ **चिरकीन**=मैला

परमार्थी प्रभु का प्रेमी होता है; वह कभी धन इकट्ठा नहीं करता। धन का संग्रह तो मनुष्य के लिए विनाशकारी होता है क्योंकि धन-संग्रह में लग जाने पर प्रभु से प्यार नहीं किया जा सकता। यह सब कुछ मैं बार-बार डंके की चोट पर सबसे कहता हूँ।

संत और हक़-हलाल की कमाई

संत सदा निष्काम भाव से लोगों को सच्ची रूहानियत की शिक्षा देते हैं। वे जिज्ञासुओं को प्रभु-प्राप्ति तथा आवागमन से मुक्ति का सच्चा मार्ग दिखाते हैं। इस परम उपकार के बदले में वे कभी कोई दक्षिणा या भेंट स्वीकार नहीं करते। वे अपने पैसे से गुज़ारा करते हैं; हक़-हलाल की कमाई खाते हैं, दूसरों की कमाई पर निर्भर नहीं रहते। उन्होंने इस मर्यादा का सदा पालन किया होता है। वे अपने लिए कभी किसी से कुछ नहीं माँगते; जब भी किसी से कुछ लेते हैं, केवल दूसरों के लिए। प्रत्येक संत का जीवन परमार्थियों के लिए संतोष तथा आत्मनिर्भरता का एक जीता-जागता उदाहरण प्रस्तुत करता है।

पलटू साहिब ने अपने रोज़गार के लिए जीवनभर दुकानदारी का काम किया, उन्होंने अपनी वाणी में बड़े प्रभावशाली शब्दों में संतों की आत्मनिर्भरता का उल्लेख किया है।

हंस चुगैं ना घोंघी सिंह चरैं ना घास॥
सिंह चरैं ना घास मारि कुंजर को खाते।
जो मुरदा ह्वै जाय ताहि के निकट न जाते॥
वे ना खाहिं असुद्ध रीत कुल की चलि आइ।
खाये बिनु मरि जाहिं दाग ना सकहि लगाई॥
संत सभन सिरताज धरन धारी सो धारी।*
नई बात जो करैं मिलत है उनको गारी॥

* **धरन**=संकल्प

भीख न माँगैं संत जन कहि गये पलटूदास।
हंस चुगैं ना घोंघी सिंह चरैं ना घास॥[8]

संतों की आत्मनिर्भरता बखानते हुए पलटू साहिब उनकी तुलना श्रेष्ठ पक्षी हंस तथा जंगल के राजा शेर के साथ करते हैं। आप कहते हैं कि हंस घोंघे और शेर घास नहीं खाते। शेर मुर्दा जानवर भी नहीं खाते, उसके पास तक नहीं फटकते। वे तो अपने उद्यम से हाथी का शिकार करके उसे खाते हैं। मरे हुए पशु का मांस उनके कुल में जूठन माना जाता है और वे अपनी परंपरा कभी नहीं त्यागते। वे भूखे मर जाएँगे पर अपनी जाति को कलंक नहीं लगाएँगे। संतों का स्थान मनुष्यों में सबसे ऊँचा होता है, अपने निश्चय पर सदा अटल रहते हैं। जो लोग संत होने का दावा करते हुए भी इस मर्यादा का उल्लंघन करके भीख माँगने का वर्जित काम करते हैं, उन्हें लोगों की गालियाँ सहनी पड़ती हैं। सच्चे संत दूसरों के आगे कभी हाथ नहीं फैलाते, जैसे हंस घोंघे नहीं चुगते और शेर घास नहीं खाते।

कौड़ी गाँठि न राखई हमा-नियामत खाय॥*
हमा-नियामत खाय नहीं कुछ जग की आसा।
छत्तिस ब्यंजन रहै सबर से हाजिर खासा†॥
जेकरे है सत नाम नाम की चेरी माया।
जोरू कहवाँ जाय खसम जब कैद में आया॥
माया आवै चली रैनि दिन मैं दुरियावों‡।
सतगुरु दास कहाय नहीं मैं माँगन जावों॥
राजा औ उमराव हाथ सब बाँधे आवैं।

* **हमा-नियामत**=सब प्रकार की सुख-सामग्री † **खासा**=राजाओं का खाना
‡ **दुरियावों**=दूर हटा देता हूँ

द्वारे से फिरि जायँ नहीं फिर मुजरा पावैं॥*
जंगल में मंगल करै पलटू बेपरवाय।
कौड़ी गाँठि न राखई हमा-नियामत खाय॥[9]

पलटू साहिब ख़ुद अपना उदाहरण हमारे सामने रखते हुए संतों के पूर्ण संतोष तथा आत्मनिर्भरता का उल्लेख कर रहे हैं। आप हमें बताते हैं कि संत के पल्ले अगर एक कौड़ी भी न हो तो वह नाम भक्ति के आनंद में ऐसे संतुष्ट रहता है जैसे उसे जीवन की सब सुख-सुविधाएँ उपलब्ध हों। वह मन में संसार की किसी भी वस्तु की इच्छा नहीं रखता। संतोष के कारण रूखी-सूखी रोटी भी उसके लिए राजमहल के छत्तीस प्रकार के व्यंजनों से कम नहीं होती। यदि नामरूपी पति वश में आ जाये तो प्रभु की दासी माया कहाँ जा सकती है? माया ख़ुद ही चलकर रात-दिन मेरे पास आती है, पर मैं उसे परे हटा देता हूँ। मैं सतगुरु का दास कहलाता हूँ, इसलिए कभी किसी से कुछ माँगने नहीं जाता। राजा और बड़े-बड़े धनवान हाथ जोड़े कुछ भेंट करने आते हैं। मगर वे मुझसे मिल भी नहीं पाते, निराश ही मेरे द्वार से लौट जाते हैं क्योंकि मैं किसी से भी भेंट स्वीकार नहीं करता। अंत में पलटू साहिब कहते हैं कि पलटू को अब कोई चिंता नहीं है। यह जंगल में भी आनंद से रह लेगा। संत के पास अगर एक फूटी कौड़ी भी न हो तो उसे कोई परेशानी नहीं होती। वह प्रसन्न रहता है।

दुनियादारों का संतों के प्रति रवैया

संतों के उपदेश को सुनने और उसकी क़द्र करनेवाले सौभाग्यशाली जीव विरले ही होते हैं जो उनकी शरण ले लेते हैं। दुनियादारी में उलझे ज़्यादातर लोग उनकी ओर कोई ध्यान नहीं देते। कई लोग तो संतों की आलोचना भी करते हैं, उनका मज़ाक भी उड़ाते हैं।

* **मुजरा**=किसी बड़े आदमी को झुककर किया गया प्रणाम

अँधरन केरि बजार में गया एक डिठियार॥*
गया एक डिठियार सबै अंधा उठि धाये।
अहमक आये आजु सबै मिलि तारी† लाये॥
डारौ आँखी फोरि रहौ तुम हमरी नाई।
सब अँधरन मिलि अंध अंध वा को ठहराई॥
जँहवाँ लाखन अंध एक क्या करै बिचारा।
सुनै न वा की कोऊ तहाँ डिठियारै हारा॥
पलटूदास यहि बात को कोऊ न करै बिचार।
अँधरन केरि बजार में गया एक डिठियार॥[10]

पलटू साहिब कहते हैं कि अंधों के मोहल्ले में एक ऐसा व्यक्ति चला गया जिसे अच्छी तरह दिखाई देता था। यह सुनकर कि उसे दिखाई देता है, तो हैरान हुए सब अंधे उठकर उसकी ओर दौड़े और सबने इकट्ठे ताली बजाकर उसका मज़ाक उड़ाते हुए कहा कि आज हमारे बीच एक मूर्ख आ गया है। उन्होंने उससे कहा कि अगर तुम्हें यहाँ बसना है तो अपनी आँखें फोड़ लो और हमारी तरह रहो। उसके न मानने पर उन्होंने मिलकर आपस में सलाह की और उसे अक़्ल का अंधा घोषित कर दिया। जहाँ अंधे बहुत बड़ी संख्या में थे, वहाँ वह बेचारा आँखों वाला अकेला क्या करता? इसी प्रकार संतों की बात कोई नहीं सुनता, उस पर कोई विचार नहीं करता। उनकी तो वही दशा होती है जो अंधों की बस्ती में जाने पर किसी आँखों वाले की होती है।

---

* **डिठियार**=जिसे अच्छी तरह दिखाई देता हो † **तारी**=ताली

23

उलटबाँसियाँ और ककहरा

उलटबाँसियाँ

हिंदी साहित्य में उलटबाँसी नामक काव्य का रूप भी मिलता है। पलटू साहिब से पहले कबीर साहिब की वाणी में भी ऐसी उलटबाँसियाँ मिलती हैं। इन पदों में सामान्य से उलटी बात कही होने के कारण ये बेतुकी जान पड़ती हैं, परंतु वास्तव में इनमें गहरा आध्यात्मिक अर्थ छिपा होता है। नीचे पलटू साहिब की दो उलटबाँसियाँ दी जा रही हैं।

अधिकांश संतों ने आत्मा और परमात्मा के संबंध का प्रेमिका और प्रियतम अथवा पति और पत्नी के रूप में वर्णन किया है और हमें समझाया है कि परमात्मा से मिलकर ही आत्मा सच्चा सुख, स्थायी शांति प्राप्त कर सकती है। इस संसार में मन बलपूर्वक उसका स्वामी बना बैठा है। उसकी ग़ुलामी से आज़ाद होकर ही वह पति के घर लौट सकती है जहाँ से वह इस संसार में आई थी। यह सफ़र उसे मनुष्य शरीर के अंदर ही तय करना होता है, वह मनुष्य शरीर में ही सतलोक में पहुँचकर अपने पति परमात्मा को पा सकती है। क्योंकि इस यात्रा का एकमात्र साधन उसके प्रियतम प्रभु ने ही बनाया है और वह साधन जीवात्मा को एक जीवित सतगुरु के मार्गदर्शन में अपने मनुष्य शरीर के अंदर ही मिल सकता है। दूसरे मंडल त्रिकुटी तक की यात्रा कठिन होती है क्योंकि वहाँ तक मन उसका स्वामी होता है। जब आत्मा उस मंडल को पार करती है तब वह मन की दासी नहीं होती क्योंकि मन उसके साथ नहीं होता, वह पीछे त्रिकुटी में ही रह गया होता है। आत्मा फिर तीसरे और चौथे मंडल में शब्द के मधुर संगीत को सुनती और दिव्य प्रकाश को देखती

हुई शब्द की सहायता से उन मंडलों को पार करके पाँचवें मंडल सतलोक में पहुँचकर अपने पति से मिलकर सुहागिन हो जाती है।

प्रस्तुत दोनों पदों में पाँच आंतरिक मंडलों का संकेत तो नहीं किया गया और न ही आत्मा तथा मन का साथ त्रिकुटी तक होने की बात कही गई है, लेकिन बताया यही गया है कि मन की दासता से छुटकारा पा लेने के बाद ही आत्मा का परमात्मा से मिलाप हो सकता है।

खसम बिचारा मरि गया जोरू गावै तान॥
जोरू गावै तान फिरा अहिबात हमारा।*
झूठ सकल संसार माँग भरि सेंदुर धारा॥
हम पतिबरता नारि खसम को जियतै मारी।
वा को मूड़ौं मूड़ सरबर† जो करै हमारी॥
दुतिया गइ है भागि सुनौ अब राँध परोसिन‡।
पिया मरे आराम मिला सुख मोकहँ दिन दिन॥
पलटू ऐसे पद§ कँहै बूझै सोइ निरबान।
खसम बिचारा मरि गया जोरू गावै तान॥[1]

परमात्मा को पा चुकी एक आत्मा प्रभु के प्रेम में रँगी आस-पास की अन्य आत्माओं से कहती है, सुनो, 'वह बेचारा मन जो ज़बरदस्ती मेरा पति बना बैठा था, अब उसका शासन नहीं रहा, वह मर गया। मैं अब चैन की बंसी बजा रही हूँ क्योंकि उसके मर जाने से मैं फिर सुहागिन हो गई हूँ। संसार झूठा है जो मुझे अभागिन कहता है; मेरी माँग तो अब सिंदूर की रेखा से सज गई है। मैं ही सच्ची पतिव्रता हूँ, क्योंकि जिसने ज़बरदस्ती मुझे अपनी पत्नी बना रखा था, उसे मैंने मार दिया और ख़ुद जीवित रही। यदि कोई और पतिव्रता होने का दावा करती हुई मेरी बराबरी करने की

* **अहिबात**=सुहाग † **सरबर**=बराबरी ‡ **राँध परोसिन**=निकट के पड़ोसी
§ **पद**=शब्द

कोशिश करेगी तो वह महामूर्ख होगी। मेरा असली पति परमात्मा और मैं अब दो नहीं रहे, एक-दूसरे से अलग नहीं रहे। ज़बरदस्ती मेरा प्रियतम बना बैठा वह दुष्ट मन जब मर गया तो मुझे बड़ी शांति मिली। अब तो मैं सदा अपने असली प्रियतम परमात्मा से मिलाप का सुख भोगती हूँ।'

अंत में पलटू साहिब कहते हैं कि मेरे कहे इन शब्दों का अर्थ जो अच्छी तरह समझ लेगा, वही मुक्ति पाएगा। याद रखो, ज़बरदस्ती पति बने बैठे मन के मर जाने पर ही आत्मा को उसकी क़ैद से छुटकारा मिलता है जिससे उसे बहुत ख़ुशी होती है।

खसम मुवा तौ भल भया सिर की गई बलाय॥
सिर की गई बलाय बहुत सुख हमने माना।
लागे मंगल होन बजन लागे सदियाना॥*
दीपक बरै अकास महल पर सेज बिछाया।
सूतौं महीं अकेल खबर जब मुए की पाया॥
सूतौं पाँव पसारि भरम की डोरी टूटी।
मने कौन अब करै खसम बिनु दुबिधा छूटी॥
पलटू सोई सुहागिनी जियतै पिय को खाय।
खसम मुवा तौ भल भया सिर की गई बलाय॥[2]

मन की दासता से मुक्त हुई एक आत्मा कहती है कि ज़बरदस्ती मेरा पति बना बैठा दुष्ट मन मर गया तो मेरा भला हुआ। मेरे सिर से बला टल गई और मुझे बहुत राहत मिली। मेरे घर यानी इस शरीर में ख़ुशी के बाजे बजने लग गए, मंगलगान होने लग गया और अंदर के आकाश में प्रकाश ही प्रकाश हो गया। जब मैंने जान लिया कि वह दुष्ट मन निश्चित रूप से मर गया है तो मैंने महल में ऊपर जाकर वहाँ बिस्तर बिछा लिया और निश्चिंत

* **सदियाना**=ख़ुशी के मौक़े पर बजाया जानेवाला बाजा

होकर अकेली वहाँ सो गई। मन ने मुझे जिन भ्रमों में जकड़ रखा था, वे सब अब नष्ट हो गए हैं। मुझे अपने पति के पास जाने से रोकनेवाला अब कौन है? दुष्ट मन के न रहने से मेरे सब संशय दूर हो गए हैं।

अंत में पलटू साहिब कहते हैं कि वास्तव में वही प्रेमिका सुहागिन बनने का सौभाग्य प्राप्त करती है जो उसका प्रियतम होने का झूठा दावा करनेवाले दुष्ट मन को मारकर ज़िंदा रहे यानी वही आत्मा परमात्मा को पाती है जो मन को मार डाले।

ककहरा

ककहरा का शाब्दिक अर्थ वर्णमाला होता है। इसी के आधार पर हिंदी साहित्य में ककहरा नामक काव्यरूप प्रचलित है, जिसमें वर्णमाला के वर्णों के क्रम से हर वर्ण से एक पद्य आरंभ किया जाता है। पलटू साहिब ने भी ककहरा लिखा है जो नीचे दिया जा रहा है। यों तो इसमें पिछले अध्यायों में दिए गए परमार्थ-संबंधी कई विषयों पर पद लिखे गए हैं, परंतु ढोंगी साधु-महात्माओं के बारे में पलटू साहिब ने ख़ास नज़रिये से लिखा है। कुछ नए विषयों पर भी पद मिलते हैं, जैसे—प्रभु को जीव से प्यार पहले होता है और बाद में जीव को प्रभु से, परमार्थी को मालिक की रज़ा में रहना चाहिए, नाम उसी को मिलता है जिसके भाग्य में लिखा हो, संतों की वाणी उपदेशकों के रोज़गार का साधन बन जाती है, मन और इंद्रियों को ज़बरदस्ती वश में करने की कोशिश बेकार है। संत का पद किसी पूरे गुरु का शिष्य बनकर ही प्राप्त किया जा सकता है।

कक्का केती कही समुझाय कहा कोई नहिं मानै।
खारी और कपूर दोऊ एकै में सानै॥
कंचन घुँघची आनि तुला एकै में तौलै।*
अरे हाँ पलटू झूठा मारै गाल, साच कैंसै कै बोलै॥[3]

* घुँघची=जंगली बेल के लाल रंग के बीज

पलटू साहिब कहते हैं कि जो लोग सच्चे और झूठे साधुओं में फ़र्क़ नहीं कर सकते, उन्हें सच्ची रूहानियत की बातें बताना व्यर्थ है। उनकी समझ तो वैसी ही होती है जैसी खारा नमक और कपूर दोनों के सफ़ेद होने के कारण उनमें भेद न कर पाने से उन्हें मिला देनेवाले की या फिर क़ीमती सोने का पता न होने के कारण उसे और घुँघची को एक ही तराज़ू में तोलनेवाले की। ऐसे लोगों को चाहे कोई कितना ही समझा ले, वे उसका कहा नहीं मानते। वे पाखंडी साधुओं के भुलावे में आ जाते हैं जो ख़ूब बढ़-चढ़कर बातें करते हैं। फिर उन्हें कौन सच्ची रूहानियत समझाए? और समझाए भी तो कैसे?

खख्खा खरा बनावै खोट खोट को खरा बनावै।
चोर चौतरे बैठि साह को पकरि मँगावै॥
काम क्रोध नहिं मरै गुरू औ सिष्य अनारी।
अरे हाँ पलटू हमरा तत्त बिचार, कहौ को सुनै हमारी॥[4]

पलटू साहिब कहते हैं कि ऊँचे आसन यानी अधिकारी के आसन पर बैठा चोर भी झूठे आदमी को सच्चा और सच्चे को झूठा ठहरा सकता है। नेक आदमी को नीचा दिखाने के लिए उसे भी अपने सामने हाज़िर करवा सकता है। अपने को धर्म के रखवाले बतानेवालों ने काम, क्रोध आदि विकारों पर विजय नहीं पाई होती। रूहानियत के मामले में वे अनाड़ी होते हैं, इसलिए उनके अनुयायी भी वैसे ही होते हैं। पलटू साहिब कहते हैं कि मेरे विचार तो परमार्थ का सार हैं, तुम्हीं बताओ कि ऐसे लोग मेरे विचारों को भला क्या समझेंगे?

गग्गा गाली पावैं संत सिद्ध की करैं बड़ाई।
सूद्र कलंदर द्रव्य सिद्ध से मांगन जाई॥

अंधे ऐना हाथ कहौ कैसे कै सूझै।*
अरे हाँ पलटू हमरा तत्त बिचार, बचन कोई नहिं बूझै॥[5]

पलटू साहिब हमें समझाते हैं कि अकसर ऐसा भी देखने में आता है कि लोग संतों की निंदा करते हैं और सिद्धों यानी चमत्कार दिखानेवाले महात्माओं का गुणगान करते हैं। समाज के निम्न वर्गों के निर्धन लोग तो पैसे के लिए करामातें दिखानेवाले साधु के पास ही जाते हैं। अगर ऐसे लोग किसी संत के पास जाएँ और वह उन्हें कुछ समझाए तो वे कैसे समझेंगे? अंधे के हाथ में दर्पण दिया जाए तो उसे क्या दिखाई देगा और कैसे दिखाई देगा? बताओ तो। मेरे विचार परमार्थ का सार हैं, पर करामाती साधुओं में श्रद्धा रखनेवाले मेरी बातों को नहीं समझ पाएँगे।

भाव यह है कि करामातों के पीछे दौड़नेवालों को परमार्थ की बातें बताना व्यर्थ है।

घघ्घा घर में बस्तु हिरान† ढूँढ़न को बन बन धावै।
गुरु सिष दोऊ अंध कहौ को राह बतावै॥
राजा पाँच पचीस काल की चोट है।
अरे हाँ पलटू बचि है कोई साध, नाम की ओट है॥[6]

पलटू साहिब कहते हैं कि वस्तु तो घर में ही कहीं खो गई है, लेकिन मनुष्य उसे ढूँढ़ने के लिए जंगलों में भटकता फिरता है। परमात्मा शरीर के अंदर ही विराजमान है और मनुष्य उसे बाहर यहाँ-वहाँ ढूँढ़ता है। अंधे शिष्य को अगर गुरु भी अंधा, कच्चा या पाखंडी मिल जाए तो दोनों में से कौन किसे राह दिखाएगा? इस भौतिक जगत में पाँच तत्त्वों तथा उनकी पच्चीस प्रकृतियों का शासन है। यहाँ जीवन बिताने के लिए आत्मा को

* ऐना=दर्पण † हिरान=खो जाना

भौतिक शरीर का सहारा है जिस कारण उसे रह-रहकर काल की चोटें सहनी पड़ती हैं, तरह-तरह के दुःख झेलने पड़ते हैं। कोई विरला साधु जिसने नाम की शरण ली हो उनसे बच पाता है।

चच्चा चरक मरक संसार मकर† से दुनिया खावै।*
बातैं कहै बनाय सोई अब सिद्ध कहावै॥
मिली नहीं कछु बस्तु भेद का मरम न जाना।
अरे हाँ पलटू चमर-दृष्ट‡ संसार, इष्ट कैसे पहिचाना॥[7]

पलटू साहिब कहते हैं कि संसार में दिखावा बहुत है। लोग छल-कपट करके खाते-पीते हैं, मज़ा लूटते हैं। यहाँ प्रभु तक पहुँचा हुआ महात्मा भी उसी को समझा जाता है जो अपनी करामाती शक्ति के बारे में मनगढ़ंत कहानियाँ सुनाता है परंतु वास्तव में उसे रत्ती भर भी आंतरिक अनुभव नहीं होता। वह इस रहस्य से अनजान होता है कि प्रभु की सच्ची भक्ति सतगुरु के मार्गदर्शन में की गई नाम भक्ति है, अंतर्मुखी भक्ति है। पाखंडी महात्मा संसार के आम लोगों जैसे ही होते हैं जो केवल बाहरी आँखों से ही देख सकते हैं, क्योंकि उनकी अंदर की आँख बंद होती है। ये लोग भला परमात्मा को कैसे देख सकते हैं, कैसे पहचान सकते हैं?

छछ्छा छके नहीं हरिनाम पीवते भांग धतूरा।
बैठि गुफा के बीच खान को लड्डू पेड़ा।
मँगनी कीन्ही जाय ब्याह बिन रही कुवारी।
अरे हाँ पलटू खसम पड़ा नहिं चीन्ह, झूठ कस लावै तारी§॥[8]

* चरक मरक=ठाट-बाट † मकर=छल-कपट
‡ चमर-दृष्ट=बाहर की आँखों की दृष्टि § तारी=समाधि

पाखंडी साधुओं पर व्यंग्य करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि वे लोग मस्त होने के लिए प्रभु के नाम का अमृत नहीं, भाँग और धतूरा पीते हैं। गुफा में बैठे ही उन्हें लड्डू-पेड़े यानी स्वादिष्ट पदार्थ खाने को मिल जाते हैं। उनके चेलों का प्रभु से मिलाप नहीं होता। उनकी तो उस लड़की जैसी दशा होती है जिसकी सगाई तो हो जाए पर ब्याह न हो पाए, जो कुँआरी ही रह जाए और पति से मिलाप का सुख न पा सके। भला प्रभु तक पहुँचाने वाली समाधि झूठे गुरु की शरण लेकर कैसे लगाई जा सकती है?

जज्जा जटा रखाये सीस बगल में निर्गुन फांसी।
गो पर करते घात देखन को बड़े उदासी॥
बुझी नहीं है आग राख में रहती दबकी।
अरे हाँ पलटू तन से देखा त्याग, चाह यह सबके मन की॥[9]

पाखंडी साधुओं के बारे में पलटू साहिब कहते हैं कि ये लोग अपने को साधु दिखाने के लिए सिर पर जटा रख लेते हैं, लेकिन तीन गुणों से ऊपर परमात्मा के बारे में चर्चा केवल लोगों को फँसाने के लिए यानी एक गुप्त फंदे के रूप में करते हैं। देखने में ये बड़े वैरागी लगते हैं, पर बलि देने के लिए गाय तक की हत्या कर देते हैं। इनकी तृष्णा की आग बुझी नहीं होती, केवल दिखावटी वैराग्य की राख के नीचे दबी रहती है, मौक़ा पाकर कभी भी प्रकट हो सकती है। बाहरी तौर से ये लोग बड़े त्यागी दिखते हैं, पर मन में वही दुनियावी चाहतें भरी होती हैं जो सबके मन में होती है।

झझ्झा झँखत फिरत कम्मखत†, रोइ कै जनम गँवावै।*
बस्तु न सकै सम्हारि दोऊ गति सोग लगावै॥

* **झँखत**=झींखता, कुढ़ता † **कम्मखत**=अभागा

हीरा लैलै हाथ आप से देत बहाई।
अरे हाँ पलटू करम लिखा है पोत, कहो कस हीरा पाई॥[10]

पलटू साहिब कहते हैं कि संसार के झंझटों में उलझा अभागा मनुष्य दु:ख भोगता हुआ ही अपना जन्म बिता देता है। प्रभु की भक्ति न करने के कारण वह इस बहुमूल्य वस्तु की सँभाल नहीं कर पाता, इसे यों ही गँवा देता है, इस प्रकार लोक-परलोक दोनों में उसकी दुर्गति होती है। जब-जब इसे मनुष्य रूप प्राप्त होता है, वह इसका लाभ नहीं उठाता, इसे भक्ति में लगाकर प्रभु को पाने का यत्न नहीं करता और इसे बरबाद कर देता है। वह यह कभी नहीं सोचता कि यह बड़े सौभाग्य से मिलता है। आप लाचार जीवों की इस दशा पर अफ़सोस प्रकट करते हुए कहते हैं कि यदि उनके भाग्य में काँचरूपी दुनियादारी लिखी है तो उन्हें हीरारूपी नाम यानी प्रभु-भक्ति कैसे प्राप्त हो सकती है?

टट्टा टरै खेत से भागि सूर और बीर करारी।
हाथ जोरि मिलि गये माया जब दीन्ही तारी॥
लाखन में कोई संत माया का मुहड़ा फेरी।
अरे हाँ पलटू संतन किया बिबेक, माया भइ उनकी चेरी॥[11]

पलटू साहिब कहते हैं कि अपने आप को वीर बतानेवाले भक्त भी रूहानी अभ्यास की युद्धभूमि से भाग निकलते हैं। माया का प्रलोभन मिलने पर वे हाथ जोड़कर उसके गुलाम हो जाते हैं। लाखों लोगों में कोई विरला संत ही माया पर विजयी होता है, उसके साथ लड़ाई में माया को पीठ दिखानी पड़ती है। संत सदा विवेक से काम लेते हैं, इसलिए माया उनकी दासी बनकर रहती है, उन्हें अपना दास नहीं बना सकती।

ठठ्ठा ठौर लेहु ठहराय गुरू से पूछि ठिकाना।
करड़ी खैंच कमान सुरत से फोड़ निसाना॥
फूट जाय ब्रह्मंड गगन में करै रकाना।*
अरे हाँ पलटू बड़े मरद का काम, रुन्ड† पर बाँधै बाना॥[12]

पलटू साहिब कहते हैं कि सतगुरु से आत्मा के मूल निवास-स्थान की जानकारी प्राप्त करके उसे अपना लक्ष्य बना लो। फिर आत्मा को शब्द के साथ जोड़कर पूरी शक्ति लगाकर वहाँ पहुँचा दो, जैसे योद्धा बाण को धनुष पर चढ़ाकर डोरी को पूरा खींचकर बाण से लक्ष्य को बींध देता है। परमार्थी को चाहिए कि अंतर के आकाश में ब्रह्मांड को पार करके, उससे भी ऊपर सतलोक में पहुँचकर ही दम ले। पर याद रहे, जैसे कोई वीर ही एक योद्धा का वेश धारण करता है, वैसे ही एक वीर ही शब्दाभ्यासी के योग्य रहनी अपना सकता है।

डड्डा डगर से रहे भुलाय नगर को राह बताये।
चले पैर नहिं एक मनौ मुहँई से आये॥
मजलिस बैठि गँवार कहै पहुँचे हैं हमहीं।
अरे हाँ पलटू पड़ैं कसौटी जाय सार टकसार में तबहीं॥[13]

पलटू साहिब हमें सावधान करते हैं कि पाखंडी साधु ख़ुद तो रास्ता भूल जाता है, पर दुनिया के लोगों को दावे से रास्ता बताता है। परमार्थ के रास्ते पर वह एक पग भी नहीं चला होता, लेकिन बातें ऐसे करता है जैसे परमधाम में परमात्मा का दर्शन करके आया हो। वह मूर्ख जब सभा में बैठता है तो वहाँ लोगों से कहता है कि परमात्मा तक तो केवल मैं

* **रकाना**=लगाम देना † **रुन्ड**=भाव शरीर

ही पहुँचा हूँ, परंतु जब उसकी परख होती है तो पता चल जाता है कि उसकी फ़क़ीरी में कोई सार नहीं है, वह एक पाखंडी है। तब लोगों की नज़रों में उसकी कोई क़ीमत नहीं रह जाती। उसकी दशा खोटे सिक्के जैसी हो जाती है, जिसे वापस टकसाल में जमा करवा दिया जाता है।

ढढ्ढा ढालों की क्या ओट लड़ौ ले सब्द कटारी।
खड़े रहौ मैदान हाँक दै सुरति सम्हारी॥
तिल तिल लागैं घाव टरै नहि खेत से।
अरे हाँ पलटू खड़ा रहै कोई साध, धनी के हेत से॥[14]

जिज्ञासुओं को पलटू साहिब समझाते हैं कि मन के वारों से बचने के लिए व्रत, तप, संन्यास आदि ढालों का सहारा लेने की ज़रूरत नहीं। मन के साथ लड़ने के लिए तो तुम्हें शब्द की तलवार लेकर उस पर धावा बोल देना चाहिए। बाहर भाग रहे मन को अंदर वापस लाकर ध्यान को वहाँ टिकाकर मैदान में डटे रहो। वीर योद्धा पूरे शरीर के बुरी तरह घायल हो जाने पर भी लड़ाई का मैदान नहीं छोड़ता। इसी तरह प्रभु प्रेम में मगन कोई सच्चा साधु ही मन-माया के सामने टिका रहता है। सुरत-शब्द का अभ्यास नहीं त्यागता।

तत्ता तन में लाये छाल कुम्भ का बक्कल† पहिरे।*
बैठि गुफा में जाय खोद के धरती गहिरे॥
करते प्रानायाम उलटि कै खैंचैं स्वासा।
अरे हाँ पलटू बैठे आसन मारि, मिटी नहिं मन की आसा॥[15]

* **कुम्भ**=एक जंगली वृक्ष † **बक्कल**=वृक्ष की छाल का बना कपड़ा

पलटू साहिब कहते हैं कि कुछ साधु शरीर पर एक जंगली वृक्ष की छाल के बने वस्त्र पहन लेते हैं, धरती में गहरा गढ़ा खोदकर गुफा बनाते हैं और आसन लगाकर उसमें बैठ जाते हैं। वहीं वे प्राणायाम करते हैं जिसमें साँसों की गति को उलटाकर साँस खींचते हैं। देखने में तो वे साधु लगते हैं, मगर सांसारिक इच्छाएँ उनके मन से नहीं निकल पातीं।

थथ्था थकित भये हम देखि सबै गफलत में सोवैं।
भक्ति का पौधा काटि विषय का अंकुर बोवैं॥
तपसी भे धनवंत सावै सब भये भिखारी।*
अरे हाँ पलटू रोगी ह्वै गये नीक, बैद सब भये अजारी†॥[16]

पलटू साहिब कहते हैं कि मैं यह देखते-देखते थक गया हूँ कि सब पाखंडी महात्मा लापरवाही की नींद सो रहे हैं। भक्ति का आडंबर रचकर ये भक्ति के पौधे को तो काट रहे हैं और विषय-भोग का बीज बो रहे हैं जिसका फल उनके लिए दुःखदायी होगा। ये पाखंडी तपस्वी अपने को तो आध्यात्मिक दृष्टि से धनवान बताते हैं, लेकिन जो संत असल में रूहानियत के साहूकार हैं, उन्हें वे भिखारी कहते हैं। हालाँकि ये आध्यात्मिक दृष्टि से रोगी होते हैं फिर भी ख़ुद को स्वस्थ जताते हैं, परंतु जो संत स्वयं स्वस्थ होने के साथ-साथ ऐसे रोगियों के लिए वैद्य भी हैं, इनको वे रोगी बताते हैं। कैसी विडंबना है!

दद्दा दबकि रहा है स्यार सिंह का पहिरे बाना।
दाग दगाये सीस लड़न का मरम न जाना॥

* सावै=साहूकार † अजारी=रोगी

हाकिम रहे छिपाय भेद पाया नहिं कोई।
अरे हाँ पलटू तक तक रहिये ताक, कहै सो दुसमन होई॥[17]

पाखंडी साधु का एक चालाक गीदड़ के रूप में वर्णन करते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि यह शेर का भेष बनाकर लोगों को दबका रहा है, उन पर अपना दबदबा जमा रहा है। परमार्थी को अपने मन से लड़ाई कैसे लड़नी होती है, इस रहस्य का असल में इसे ज्ञान नहीं है। आख़िरकार पोल खुल जाने पर इसके माथे पर कलंक का टीका ही लगेगा। सृष्टि का स्वामी परमात्मा ऐसे ढोंगियों से छिपा ही रहता है। इनमें से कोई भी कभी उसका रहस्य नहीं जान पाया। पर इन्हें कुछ समझाने का कोई लाभ नहीं क्योंकि जो कोई भी इनसे कुछ कहेगा, उसे ये अपना शत्रु मानेंगे। इनके चरित्र को बस तुम तमाशा समझकर देखते रहो।

धध्धा धनी कहावैं बड़े पूँजी घर में नहिं इक किन।*
बैठे करत गुमान रैनि दिन जात भजन बिन॥
चौड़ी लाय दुकान करैं पकवानहिं फीका।
अरे हाँ पलटू जानै खावनहार, और नहिं स्वाद उसी का॥[18]

पलटू साहिब कहते हैं कि पाखंडी साधु रूहानियत के बहुत बड़े धनी कहलाते हैं, पर असल में इनके पास रत्ती भर भी रूहानी दौलत नहीं है। ये न दिन में कभी भक्ति करते हैं और न रात को। लेकिन लोग इनके धोखे में आकर इन्हें परम भक्त मानकर जो सम्मान देते हैं, उस पर ये बहुत गर्व करते हैं। इनके बारे में तो यही कहना होगा कि ऊँची दुकान, फीका पकवान। इनके पकवान के बेस्वाद होने का पता तो उसी को चल सकता है जिसने नाम का बढ़िया पकवान चखा हो, किसी और को नहीं।

* किन=कण

नन्ना नाना कीन्हे भेष, मिटी नहिं मन की आसा।
बहुरुपिया का स्वांग अंत को नर्क निवासा॥
माया दै दै ढोल सबन को नाच नचाया।
अरे हाँ पलटू लगी रहै वह डोरि, बहुरि चौरासी आया॥[19]

पलटू साहिब कहते हैं कि कुछ लोग बहरूपिये की तरह भिन्न-भिन्न प्रकार के भेष धारण करके साधु या महात्मा का स्वाँग करते हैं, पर इससे उनके मन की इच्छाएँ नहीं मिटतीं। उनको पूरा करने के लिए किए गए कर्म उन्हें नरक में पहुँचा देते हैं। मायारूपी मदारी की रस्सी से बँधे बंदर की तरह वे उसके इशारों पर नाचते हैं और उनका जन्म-मरण का सिलसिला बना रहता है, वे चौरासी का चक्कर काटते रहते हैं।

पप्पा पड़ै पतंगा जाय आप से दीपक माहीं।
तन को दिया जराय सोच दीपक को नाहिं॥
पहिले तो दीपक जरै पाछे जरै पतंग।
अरे हाँ पलटू हरि हरिजन से प्रीति करि, मिलि दोऊ इक अंग॥[20]

पलटू साहिब कहते हैं कि पतंगा स्वयं ही दीपक की लौ पर जा गिरता है और अपने शरीर को जला देता है, परंतु इससे दीपक को कोई दुःख नहीं होता, क्योंकि वह ख़ुद पतंगे के प्यार में पहले जलता है और पतंगा उसके प्यार में बाद में। प्रभु भी अपने भक्त से बेहद प्यार करता है। उस प्यार से बँधा हुआ ही तो भक्त उसकी ओर खिंचता है और दोनों मिलकर एक हो जाते हैं।

फफ्फा फाका फिकर जरूर फरक आलम से रहिये।
भली बुरी कहि जाय बात दो सबकी सहिये॥

कहर मेहर की नजर लगन साहिब से लावै।
अरे हाँ पलटू लगी रहै वह डोरि, छुटै तो गोता खावै॥[21]

परमार्थियों को संबोधित करते हुए पलटू साहिब कह रहे हैं कि यह ज़रूरी है कि आप अपने को संसार से दूर रखें, संसार के पदार्थों में लिप्त न हों। कम खाएँ और अपना ध्यान विषय-भोग से हटाकर प्रभु की भक्ति में लगाएँ। अगर कोई आपसे दो खरी-खोटी बातें कह भी दे तो आप सह लें। परमार्थी पर कहर की नज़र हो, चाहे मेहर की यानी उस पर चाहे कोई बहुत बड़ी मुसीबत आए या फिर उसे कोई बड़ा सुख मिले, वह तो बस लगन के साथ प्रभु की भक्ति करता रहे। प्रभु के साथ उसके प्रेम की डोर हर हालत में बँधी रहनी चाहिए। उसके टूट जाने पर तो उसे फिर भवसागर में ग़ोता खाना पड़ेगा, फिर जन्म लेना पड़ेगा।

बब्बा बगुला कीन्हे भेष हंस की बोली बोलै।
नीर छीर दोउ महै आप से परदा खोलै॥
राँगा रूपा† सेत नजर बिन को अलगावै।*
अरे हाँ पलटू जहवाँ नाहिं हंस तहाँ बगु हंस कहावै॥[22]

पलटू साहिब हमें समझाते हैं कि कोई साधु सच्चा है या बनावटी, यह निर्णय करना कठिन होता है। कई ढोंगी लोग साधु का भेष बनाकर वैसी बातें करते हैं, जैसे कोई बगुला अपने को हंस जताते हुए उसकी बोली बोलने लगे। लेकिन बगुले की पोल दूध और पानी को अलग-अलग करने का मौक़ा आने पर अपने आप खुल जाती है क्योंकि उसमें हंस की तरह यह क्षमता नहीं होती। इसी तरह ढोंगी साधुओं की रहनी और करनी की ओर ध्यान देने पर उनकी पोल भी खुल जाती है। कलई भी सफ़ेद

* राँगा=कलई † रूपा=चाँदी

होती है और चाँदी भी। यदि इन दोनों की परख करनेवाली नज़र न हो तो दोनों के मिले हुए टुकड़ों को अलग-अलग कौन कर सकता है? इसलिए अकसर ऐसा होता है कि जहाँ के लोगों ने कभी कोई असली साधु न देखा हो, वहाँ नक़ली को भी असली समझा जाता है।

भभ्भा भरमन ही को खै करै इन्द्रिन से निगरा†।*
नाम से रहै भुलाय चित्त दै करते सिगरा‡॥
निगरा सिगरा नाहिं जोई है जाग्रत जोगी।
अरे हाँ पलटू निगरा सिगरा आहिं कहो कोइ रोगी भोगी॥[23]

पलटू साहिब जिज्ञासुओं से कहते हैं कि आप लोगों के भ्रम दूर करने के लिए मैं आपको बता रहा हूँ कि सजग यानी सच्चा योगी न तो ज़बरदस्ती इंद्रियों का दमन करता है और न लोभवश सांसारिक पदार्थों का अंधाधुंध संग्रह। उसने नाम-साधना के द्वारा मन और इंद्रियों को पूरी तरह वश में कर लिया होता है, पर नकली योगी नाम-भक्ति को भुलाकर ज़बरदस्ती इंद्रियों को विषय-भोग से रोकने की कोशिश करता है और उसका मन संसार के पदार्थों के संग्रह में लगा रहता है। उसे तो भोगी और रोगी ही कहा जा सकता है, योगी बिलकुल नहीं।

मम्मा मन मुरीद होइ नाहिं आपु वे पीर कहावैं।
बिना बंदगी फैज§ कहो कोइ कैसे पावै॥
कितनौ नाचौ नाच नाक बिन नकटी बाई।
अरे हाँ पलटू सतगुरु होहिं दयाल देहिं तौ मिलै बड़ाई॥[24]

* खै=नाश † निगरा=दमन, रोकना ‡ सिगरा=संग्रह § फैज=लाभ

पलटू साहिब कहते हैं कि कुछ लोग ख़ुद तो सतगुर के शिष्य बनकर विधि के अनुसार मन को वश में करते नहीं, पर लोगों से अपने आप को सतगुरु कहलवाने लगते हैं। भला सतगुरु की बताई विधि के अनुसार भक्ति किए बिना किसी को इतनी बड़ी रूहानियत कैसे हासिल हो सकती है? यदि किसी नर्तकी की नाक कटी हो तो वह नाचने का चाहे कितना ही अभ्यास कर ले, पर वह एक आम नकटी नर्तकी ही रहेगी, राजनर्तकी नहीं बन जाएगी। इसी तरह जिस व्यक्ति की आत्मा मैली हो, वह और चाहे कितने ही उपाय कर ले, उसे आध्यात्मिक गौरव कभी प्राप्त नहीं होगा। मनुष्य को यह सम्मान तो तभी प्राप्त होता है जब वह सतगुरु की बताई विधि के अनुसार पूरी लगन से भक्ति करे और सतगुरु उस पर दया-मेहर कर दें।

ररा राँड भराये माँग नैन भरि काजर लाये।
बिना खसम की सेज कहा भा फूल बिछाये॥
तन पर लत्ता नाहिं ओढ़ाती खसमहिं सोई।
अरे हाँ पलटू बिना भजन की रांड,कहो कितना तन धोई॥[25]

पलटू साहिब कहते हैं कि स्त्री का सारा शृंगार पति के लिए होता है। यदि कोई विधवा माँग में सिंदूर भर ले, आँखों में काजल डाल ले और पति से सूनी सेज पर फूल बिछा ले, तो इससे वह सुहागिन नहीं हो जाएगी। इसी तरह साधुओं का रंग-ढंग अपना लेने से कोई प्रभु को नहीं पा लेगा, उसकी आत्मा सुहागिन नहीं हो जाएगी। विधवा सेज पर पति के सोए होने की कल्पना करके उस पर चादर आदि नहीं डालती। इसी प्रकार समझदार जिज्ञासु भी भ्रमवश मूर्ति को भगवान मानकर उसकी पूजा नहीं करता। आत्मा मनोविकारों तथा जन्म-जन्म के कर्मों की मैल से लिप्त है जबकि प्रभु परम निर्मल है। नाम की कमाई न करनेवाला जीव पवित्र नदी के जल से शरीर को चाहे कितना ही धो ले, उस पर चढ़ी मैल ज़रा

भी नहीं धुल सकती। नाम भक्ति से रहित जीवात्मा और चाहे कितने ही उपाय कर ले, वह विधवा की तरह पतिविहीन ही रहेगी, दुहागिन ही रहेगी, सुहागिन नहीं बन पाएगी।

लल्ला लालच बुरी बलाय यही सब बात बिगारी।
लालच जेहि का नाम माया की है महतारी॥
कनिक कामिनी रूप धरे सुर नर मुनि लूटै।
अरे हाँ पलटू ऐसा कोई ना मिला, जो इन से छूटै॥[26]

लोभ को अनर्थ की जड़ बताते हुए पलटू साहिब कहते हैं कि यह बहुत बड़ी मुसीबत है क्योंकि इसी से परमार्थी का काम बिगड़ता है, इसी के कारण वह अपना मनोरथ सिद्ध नहीं कर पाता। यह तो माया की जननी है क्योंकि इसके वश में हुआ मनुष्य धन-दौलत बटोरने में लग जाता है, परमार्थ की ओर ध्यान नहीं देता। माया धन-संपत्ति या काम वासना का रूप लेकर साधारण मनुष्यों को ही नहीं, ऋषि-मुनि और देवताओं को भी लूट लेती है। मुझे ऐसा कोई नहीं मिला जो इन दो रूपों में प्रकट होने वाली माया के चंगुल से बच निकला हो।

वव्वा वारूँ तन मन सीस उसी का कहूँ सँदेसा।
हित अपना पहचान, सुनत ही मिटै कलेसा॥
पूरन प्रगटे भाग मिले वहि देस के साईं।
अरे हाँ पलटू करिये उनसे प्रीत, नहीं उनसे अधिकाई॥[27]

अपने सतगुरु की महिमा का बखान करते हुए पलटू साहिब प्रभु की खोज करनेवालों से कहते हैं कि मेरा तन, मन और सिर सब कुछ सतगुरु पर न्योछावर है। मैं उन्हीं का नाम भक्ति का संदेश आप लोगों तक पहुँचा

रहा हूँ, अपनी ओर से मैं कुछ नहीं कह रहा। यह जान लें कि इसे सुनने-समझने और इसके अनुसार चलने में ही आपकी भलाई है। इसे सुनते ही परमार्थी का दुःख मिट जाता है यानी प्रभु-प्राप्ति के बारे में उसकी चिंता दूर हो जाती है। मेरे सतगुरु परमधाम के स्वामी हैं। पूर्ण भाग्योदय होने से ही मेरा उनसे मिलाप हुआ। आप लोग भी अपने सतगुरु से सच्ची प्रीत करें क्योंकि सतगुरु से बढ़कर कोई नहीं है।

सस्सा सरबर करते स्यार सिंह से रार† बढ़ावैं।*
काग कहैं हम बड़े हंस से गाल बजावै॥
भूँकन लागे स्वान संत सुनि कान को मूँदा।
अरे हाँ पलटू आखिर बड़े सो बड़े, दिन चार का धींगम धूँगा॥[28]

आप कहते हैं कि ये गीदड़ अपने को शेर जैसा समझते हुए उससे झगड़ रहे हैं। ये कौए अपने को हंस से बड़ा बताते हुए शेख़ी बघार रहे हैं। ये लोग कुत्तों की तरह भौंक रहे हैं, पर संत इनके शोर की ओर ध्यान नहीं देते। जो महान है, वह महान ही रहेगा। इन लोगों की दुष्टता, इनका ऊधम मचाना कुछ ही दिन लोगों को प्रभावित कर पाएगा। संत की महिमा आख़िर उजागर होकर ही रहेगी।

हहा हक है वही हलाल सबर से बैठे आवै।
खाना वही हराम पेट को माँगन जावै॥
हाथी धीरज धरै साँझ को मन भर पावै।
अरे हाँ पलटू टूक टूक को स्वान, बीस घर भटका खावै॥[29]

---

* सरबर=बराबरी † रार=झगड़ा

पलटू साहिब कहते हैं कि वही खाना खाने योग्य होता है जो सब्र और पूरी ईमानदारी से की गई अपनी कमाई का हो। पेट की ख़ातिर जिस खाने के लिए दूसरों के आगे हाथ फैलाने पड़ें, वह हराम होता है, खाने योग्य नहीं होता। हाथी धीरज रखता है और उसे शाम को एक ही स्थान पर जी भर खाने को भोजन मिल जाता है, लेकिन कुत्ता रोटी के एक-एक टुकड़े के लिए घर-घर भटकता है।

अआ अपनी ओर निहार तुझे क्या परी परारी।
घर में मूसै चोर और को झिखै अनारी॥*
अपनी करनी साच और सब झूठ कहानी।
अरे हाँ पलटू धोय सिताबी† हाथ, जात है बहता पानी॥[30]

वाचक ज्ञानी केवल धार्मिक पुस्तकें पढ़कर ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं और उसी आधार पर लोगों को उपदेश देने लगते हैं। उनका अपना मन तो वश में होता नहीं और दूसरों को मन को वश में करने का उपाय बताते हैं। ऐसे लोगों के बारे में पलटू साहिब कहते हैं कि अपनी ओर ध्यान दो, दूसरों की चिंता क्यों करते हो? तुम्हारे अपने घर में चोरी हो रही है। काम, क्रोध आदि पाँच विकार चोर बनकर तुम्हारे इस दुर्लभ मनुष्य जीवन के अनमोल पल चुराए जा रहे हैं और तुम इतने नासमझ हो कि अपने घर की चिंता छोड़ दूसरों के घरों की चिंता करके दु:खी हो रहे हो। मनुष्य ख़ुद जो नाम का अभ्यास करता है, वही उसकी असली पूँजी होती है; रूहानियत के बारे में उसके दूसरों को कुछ समझाने से उसे प्रभु की प्राप्ति नहीं हो जाती। इसलिए जल्दी से हाथ धो लो, पानी बहता जा रहा है यानी जल्दी से नाम भक्ति कर लो, तुम्हारा दुर्लभ मनुष्य जन्म बीतता जा रहा है।

* **मूसै**=चोरी कर रहा है † **सिताबी**=जल्दी से

ईई इसम करै कोई मरद और सब पेट जियावैं।*
मार गया कोई सिंह खान को गीदड़ धावैं॥
छत्र फिरै सिर ऊपर सोई बाच्छाह कहावै।
अरे हाँ पलटू सब नायक हो जायँ, तो बरधी कौन लदावै॥[31]

आप कहते हैं कि नाम की कमाई करके कोई बहादुर ही संत बनता है, उपदेशक तो उसकी वाणी की व्याख्या या पाठ करके अपना पेट पालते हैं। शेर तो शिकार को मारकर अपना पेट भरकर चला जाता है और कई गीदड़ शिकार का बचा हुआ मांस खाने के लिए दौड़े चले आते हैं। राजा वही होता है जिसके सिर पर छत्र सुशोभित हो, कोई और नहीं। इसी तरह संत वही होता है जिसने परमपद पा लिया हो, कोई और नहीं। पर अगर सब बड़े-बड़े काम करनेवाले बन जाएँ तो छोटे-छोटे काम कौन करेगा?

उऊ उमर गई सब बीति चलन को दिन है थोरा।
अहमक भजन बिचारु गोड़ धरि† करौं निहोरा॥
भूले कौल करार धनी घर कैसे जइहौ।
अरे हाँ पलटू सिर पर मारै धौल‡ काल, तब कहाँ लुकइहौ॥[32]

अज्ञान के अंधकार में भटक रहे मनुष्य को अहमक कहकर पलटू साहिब उसे चेतावनी देते हैं कि तुम्हारी आयु बीत गई है, इस संसार से तुम्हारे प्रस्थान करने में अब थोड़े ही दिन रह गए हैं। मैं तुमसे विनती करता हूँ कि अब तो कुछ सोचो, अब तो प्रभु की भक्ति में लगो। माता के गर्भ में तुमने प्रभु के साथ उसकी भक्ति करने की जो प्रतिज्ञा की थी, जो समझौता किया था, वह तुमने भुला दिया। अब तुम क्या मुँह लेकर प्रभु

* **इसम**=नाम † **गोड़ धरि**=पाँव पकड़कर ‡ **धौल**=हथेली की भारी चोट

के पास जाओगे? जब यमराज भारी-भरकम हाथ से तुम्हारे सिर पर वार करेगा, तब तुम कहाँ छिपोगे?

एऐ एक ओर पढ़ै कुरान बाँग धुनि लावै मुलना।
एक ओर बाजै संख बेद धुनि पंडित रटना॥
सोय रहे मैदान खाय बरु माँगि कै।
अरे हाँ पलटू दोउ घर लागी आग, बचा कोइ भागि कै॥[33]

पलटू साहिब कहते हैं कि एक तरफ़ मौलवी क़ुरान की आयतें पढ़ता है और मस्जिद में बाँग देता है। दूसरी तरफ़ पंडित ऊँचे स्वर में वेदमंत्रों का पाठ करता है तथा मंदिर में शंख बजाता है। दोनों चढ़ावे से अपना गुज़ारा करते हैं यानी दूसरों से माँगकर खाते हैं और मस्ती से सोते हैं। असल में देखा जाए तो दोनों की दशा अच्छी नहीं है, दोनों आशा-तृष्णा की आग में जल रहे हैं। उस आग से बचकर ही कोई अपना कल्याण कर सकता है।

ओऔ औरों बैर बिहाय प्रीति सज्जन से जोड़ी।
बड़े अनाड़ी लोग जोड़ि कै पाछे तोड़ी॥
मौत देहि भगवान सजन से ह्वै जु बिछोहा।
अरे हाँ पलटू हँसिहैं बैरी लोग, जीति जब पइहैं दोहा॥*[34]

पलटू साहिब कहते हैं कि मैं किसी दूसरी तरह की भक्ति में लगे लोगों के प्रति मन में वैर-भाव नहीं रखता, परंतु प्रेम का नाता मैंने संत-सतगुरु से जोड़ा है। जो पहले सतगुरु से प्रेम करते हैं और फिर उनसे विमुख हो

* **दोहा**=विरोधी

जाते हैं, वे बहुत मूर्ख होते हैं। प्यारे सतगुरु से बिछोड़े के बदले तो मैं चाहूँगा कि प्रभु मुझे मौत दे दे। सतगुरु और नाम भक्ति के विरोधी लोग सतगुरु से विमुख होनेवालों का मज़ाक उड़ाते हैं क्योंकि शिष्य के सतगुरु से विमुख हो जाने में उन्हें अपनी बहुत बड़ी जीत दिखाई देती है।

अंअः औङै ओअं एक और नहीं कोइ दूजा।
एक ब्रह्म संसार करौं मैं किसकी पूजा॥
समुझ पड़ा करतार करम को किया भगूरा।*
अरे हाँ पलटू दुरमति भागी दूरि, मिला जब सतगुरु पूरा॥[35]

पलटू साहिब कहते हैं कि जब मुझे सतगुरु मिल गए तो उनके उपदेश के अनुसार अंतर्मुखी भक्ति करने से मेरे सब भ्रम, सब संशय, सब दुविधाएँ दूर हो गईं; मेरे कर्मों का लेखा मिट गया और सिरजनहार का स्वरूप मेरी समझ में आ गया। मैंने जान लिया कि सब जगह केवल परमात्मा ही है और कोई नहीं है। एक परमात्मा ही सृष्टि में सब कुछ है, कुछ भी उससे भिन्न नहीं है, मैं भी तो उससे अभेद हूँ। फिर मैं अब किसकी भक्ति करूँ?

* **भगूरा**=भगोड़ा